गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा

आठवाँ अंक-2016

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान
करनाल-132001, हरियाणा

८८वां स्थापना दिवस,

अनुज कुमार, राजपाल मीना, चन्द्रनाथ मिश्र, विष्णु कुमार, जे के पाण्डेय, अनिता मीणा एवं राजेन्द्र कुमार (2016)
गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल – 132001, पृष्ठ सं.– 142

गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा

आठवाँ अंक

सम्पादक मंडल :
मुख्य सम्पादक : अनुज कुमार
सम्पादक : राजपाल मीना, चन्द्रनाथ मिश्र, विष्णु कुमार,
जे के पाण्डेय, अनिता मीणा एवं राजेन्द्र कुमार

संरक्षक एवं प्रकाशक : **ज्ञानेन्द्र प्रताप सिंह**
निदेशक
भा. कृ. अनु. प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान
करनाल – 132001, हरियाणा
दूरभाष : 0184–2267490 फैक्स : 0184–2267390
वेबसाइट : *www.dwr.in*

प्रतियाँ : 500

छायाचित्र : राजेन्द्र कुमार शर्मा

मुद्रण : **श्रीकोशी रैप्रोग्राफिक्स**
121, इंडस्ट्रियल एरिया, एच.एस.आई.आई.डी.सी.
सैक्टर – 3, करनाल – 132001
दूरभाष : 9812053552, 8607654545
ई–मेल : *shrikoshi@gmail.com*

प्राक्कथन

भारत में गेहूँ एवं जौ का उत्पादन लगभग 31 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्रफल में किया जाता है। सभी कृषकों एवं वैज्ञानिकों के सामूहिक प्रयास से भारत देश फसलों के उत्पादन में निरन्तर नए आयाम प्राप्त कर रहा है। भारत के बढ़ते उत्पादन एवं उत्पादकता में नवीन प्रजातियाँ एवं नई तकनीकों का महत्त्वपूर्ण योगदान है, जिसकी सराहना माननीय प्रधान मंत्री जी ने अपने स्वतंत्रा दिवस के अभिभाषण में भी की है।

"गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा" कृषि की नवीनतम तकनीकों को किसानों तक पहुँचाने का सशक्त माध्यम बना है। इसके माध्यम से हमारे कृषकों तक कृषि की विविध विधाओं से जुड़ी नवीन प्रौद्योगिकियों को पहुँचाया जाता है जिनको अंगीकृत कर किसान अधिक उत्पादन के साथ–साथ अधिक आमदनी भी प्राप्त करते हैं। प्रस्तुत अंक जौ **"हाईटेक एग्रीकल्चर"** पर आधारित है में भी विभिन्न तकनीकों से कृषकों की आय बढ़ाने हेतु लेख प्रस्तुत किए गए हैं। फसलों के अतिरिक्त पशु पालन, मधुमक्खी पालन, चारा उत्पादन, गृह वाटिका इत्यादि विषयों पर भी लेख पत्रिका में शामिल किए गए है जिससे हमारे किसान व अन्य, पाठक लाभान्वित होंगे।

विगत वर्ष गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा के सातवें अंक को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा **"गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका"** के तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस पत्रिका का संपदाक मण्डल इस सम्मान के लिए बधाई के पात्र हैं मैं आशा करता हूँ कि यह पत्रिका वैज्ञानिकों एवं किसानों के बीच एक मजबूत कड़ी बनी रहेगी तथा विभिन्न समसामयिक लेखों के माध्यम से कृषक समुदाय का मार्गदर्शन करती रहेगी। इस पत्रिका का आगामी अंक भी एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण व रोचक विषय "किसानों की आमदनी को दोगुनी करने की रणनीति" पर आधारित की गई है। मुझे उम्मीद है कि लेखक गण इस विषय की महत्ता को समझते हुए उत्कृष्ट लेख देंगे और पत्रिका को और ऊँचाई प्रदान करेंगे। मैं इस पत्रिका के अनवरत प्रकाशन की कामना करता हूँ।

ज्ञानेन्द्र प्रताप सिंह
निदेशक
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान

संपादकीय

आज मुझे इस बात की बेहद खुशी है कि **गेहूँ और जौ स्वर्णिमा** आठ वर्षों का सफर सफलतापूर्वक तय कर चुका है। इन आठ वर्षों में हमें आप सभी पाठकों का सराहनीय सहयोग मिला है। मैं सभी लेखकों का धन्यवादी हूँ कि उन्होंने अपने उत्कृष्ट लेखों के माध्यम से इस पत्रिका को नई ऊँचाई प्रदान की। इस पत्रिका के सातवें अंक को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद हिन्दी पत्रिकाओं के लिए के **"गणेश शंकर विद्यार्थी, तृतीय पुरस्कार"** से सम्मानित किया गया। इस सफलता के सफर के साक्षी हमारे किसान भाई भी हैं जिन्होंने अपनी रचनाएँ दी जिससे इस पत्रिका का स्तर लगातार ऊँचा उठता चला गया। आज हमारे समक्ष सबसे बड़ी चुनौती इस पत्रिका की उत्कृष्टता को बनाए रखना, पाठकों के लिए नूतन, समसामयिक एवं रोचक लेख प्रकाशित करना है।

मुझे आशा है कि **"हाइटेक एग्रीकल्चर"** पर आधारित गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा का आठवां अंक आप सभी की उम्मीदों पर खरा उतरेगा। मुझे विश्वास है कि भविष्य में भी आप सभी का इसी प्रकार सहयोग मिलता रहेगा। आगामी अंक का विषय वस्तु **"किसानों की आमदनी दोगुनी करने की रणनीति"** पर रखी गई है। आप अपने अविस्मरणीय आलेखों के माध्यम से इस अंक की परिकल्पना को मूर्तरूप देने में हमारा अवश्य सहयोग देंगे। इस के मैं पाठकों से भी निवेदन करता हूँ कि वे इस अंक को पढ़े, लाभान्वित हों तथा अपने सुझावों से हमें अवगत कराएं। अंक को चिरस्मरणीय बनाने लिए सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी सर्वोत्तम रचनाएं हमें दें।

मैं इस पत्रिका के संपादक मंडल का शुक्रगुजार हूँ जिनका रचनात्मक सहयोग सदैव मिलता रहता है। साथ ही मैं इस पत्रिका के समयबद्व व अनवरत प्रकाशन की कामना करता हूँ।

अनुज कुमार
मुख्य संपादक

विषय सूची

1. हाईटेक एग्रीकल्वर : एक विवेचना — 1
अनुज कुमार, राजपाल मीना, जे के पाण्डेय एवं अनिता मीणा

2. मोबाईल–एग्रीकल्वरः किसानों तक पहुँचने का सशक्त माध्यम — 6
अंकिता झा, अखून असरार बशीर, राज पाल मीना, वनिता पाण्डेय, प्रियंका चंद्रा, राजीव रंजन, कैलाश प्रजापत, आर.एस.छोकर एवं आर.के.शर्मा

3. निर्णय समर्थन प्रणाली द्वारा व्यवसायिक डेयरी फार्मिंग — 8
आरती, स्मिता सिरोही, चन्दन कुमार राय तथा सुनील कुमार

4. हाईड्रोपोनिक्स : संभावनाएँ — 9
वनिता पाण्डेय, स्नेह नारवाल, सेवा राम, रिंकी, अंकिता झा, सोनिया श्योरान एवं आर.के. गुप्ता

5. राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–नाम) व उसका महत्त्व — 11
सुनील कुमार, सेंदिल आर., अनुज कुमार व सत्यवीर सिंह

6. भारत में हाईटेक एग्रीकल्वर की संभावनाएं — 13
जे.के.पाण्डेय एवं अनुज कुमार

7. यथार्थपरक खेती : आज की आवश्यकता — 20
के. उपाध्याय, आर. आर. जाखड़, मालु राम यादव, हरदेव राम एवं राकेश कुमार

8. कृषि के विकास में आधुनिक प्रौद्योगिकी की महत्त्वपूर्ण भूमिका — 24
रिंकी, पंकज कुमार सिंह, नवीन एवं वनीता पाण्डेय

9. कृषि में नैनोटेक्नोलोजी की भूमिका : एक परिदृश्य — 27
प्रियंका चन्द्रा, पंकज कुमार सिंह एवं डी. पी. सिंह

10. प्लास्टिकल्वर का कृषि में महत्त्व — 29
दिनेश जिंगर, अनिल कुमार वर्मा, अमिता कुमावत एवं सरोज सेपट

11. कृषि ऐप एक संजीवनी — 31
मंगल सिंह चौहान, रजनी जैन एवं सोनिया चौहान

12. पॉलीहाउस तकनीक — 35
पंकज कुमार सिंह, अनुज कुमार, सोनिया श्योरान, गीता संधु एवं राजेन्द्र कुमार

13. डबल्ड हैप्लाइडी प्रजनन के माध्यम से गेहूँ सुधार — 39
मधु पटियाल एवं धर्मपाल

14. शटल ब्रीडिंगः एक प्रभावी तकनीकी — 41
देवमणि बिन्द, ऋषिपाल गंगवार, आरेश कुमार, सुरेश कुमार, रिंकी, लोकेन्द्र कुमार एवं संजय कुमार सिंह

15. सीधी–बिजाई धान में खरपतवार प्रबंधन — 45
अमिता कुमावत एवं सीमा सेपट

16. शाकनाशी मिश्रण का समन्वित एवं प्रभावी खरपतवार नियंत्रण हेतु उपयोग — 49
दिनेश जिंगर, सम्पत लाल मून्दड़ा, राजेश कुमार मीना, मालु राम यादव, विजेन्द्र कुमार मीना, उत्तम कुमार एवं रूपा राम जाखड़

17. छिलका रहित जौ एक महत्त्वपूर्ण खाद्यान्न — 53
जोगेंद्र सिंह, दिनेश कुमार, रेखा मलिक, अनिल खिप्पल, विचित्र कुमार आर्य, दीपक एवं अजित सिंह खरब

18. पर्ण धब्बा रोग की पहचान एवं रोकथाम — 55
साहिल परूथी, महेन्द्र कुमार आर्य, पंकज कुमार सिंह एवं डी.पी. सिंह

19. गेहूँ व जौ उच्च गुणवत्ता बीज उत्पादन तकनीक — 57
राजेश कुमार आर्य एवं एस के सेठी

20. कृषि में आधुनिक तकनीकी प्रयोग से कम लागत में अधिक आय — 63
सचिन कुमार, भूदेव सिंह त्यागी, ज्ञानेन्द्र सिंह, आशीष ओझा एवं मधु कुमारी

21. फसलोत्पादन में जैव उर्वरकों का महत्त्व — 67
नरेन्द्र सिंह

22. राजस्थान के लिए वरदान है जौ की खेती 70
प्रदीप सिंह शेखावत एवं हर्षराज कंवर

23. राजस्थान के पारम्परिक व्यंजन तथा उनमें कठिया गेहूँ का महत्त्व 76
लतिका व्यास

24. पशुधन संरक्षण : नई प्रौद्योगिकियाँ 79
हिमानी शर्मा, अविनाश सिंह, सोनिका अहलावत एवं रेखा शर्मा

25. मधुमक्खी पालन–लघु एवं सीमांत किसानों के रोजगार का साधन 85
अविनाश सिंह, मधु सूदन टांटिया, रेखा शर्मा एवं सोनिका अहलावत

26. विपरीत परिस्थितियों में भी हर्षाता किसान 89
संतराम यादव

27. महिला आधारीय कुटीर व्यवसाय के प्रकार, प्रबंधन एवं आर्थिक विश्लेषण 93
शकुन्तला गुप्ता

28. भारत की खाद्य सुरक्षा में गेहूँ की भूमिका अहम 96
प्रकाश चंद घासल, देवेन्द्र कुमार, देवाशीष दत्ता, ललित कृष्ण मीणा एवं अमृत लाल मीणा

29. स्वाद एवं मिठास से भरी लीची 99
विशाल नाथ, स्वपनिल पाण्डेय, अंकित कुमार पाण्डेय एवं गिरिजा शंकर तिवारी

30. कुपोषण दूर करने में गेहूँ की उपयोगिता 108
एल. आर. मीना एवं आजाद सिंह पंवार

31. सब्जियों के विभिन्न तत्व 110
आत्मानन्द त्रिपाठी एवं जे. के. पाण्डेय

32. मृदा स्वास्थ्य कार्ड – "किसानों के लिए बेहतर हथियार" 114
पंकज कुमार सिंह, प्रियंका चन्द्रा, राजेन्द्र कुमार, अनुज कुमार एवं सुभाष गिल

33. जई: उत्पादकता एवं उपयोगिता 116
मगन सिंह, वी.के. मीणा, राजेश कुमार मीणा, सूमी काला, राकेश कुमार एवं दीपा जोशी

34. पूर्व प्रजनन द्वारा गेहूँ में सुधार 118
आशीष ओझा, भुदेव सिंह त्यागी, ज्ञानेन्द्र सिंह, सचिन देशवाल एवं मधु कुमारी

36. किसानों के लिए मददगार ड्रोन तकनीक 121
अनिता मीणा, अजय वर्मा, सत्यवीर सिंह, सेंधिल आर एवं प्रियंका चन्द्रा

37. मत्स्य पालनः कृषि के संदर्भ में 124
चंदन कुमार, सुनीता मीणा, राज कुमार एवं अरविंद

राजभाषा खण्ड

38. हिन्दी कार्यक्रम पर रिपोर्ट 130

39. मेरे सपनों का भारत (उत्कृष्ट लेख पुरस्कार)
रविन्द्र कुमार 134
पूनम सलूजा 135
वाजिद अली 136

40. कविताएँ
जिसमें भाव न हो 137
वाजिद अली
दुनिया के तख्त ओ ताज से 138
वाजिद अली
गेहूँ रोटी नहीं औषधि भी 139
पंकज कुमार सिंह
जी चाहता है 140
रामप्रीत आनंद

हाईटेक एग्रीकल्चर : एक विवेचना

अनुज कुमार, राजपाल मीना, जे के पाण्डेय एवं अनिता मीणा

भा.कृ.अनु.प–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

कृषि भारतीय संस्कृति का हिस्सा रही है और आज भी अधिकांश लोग अपने जीवन यापन के लिए इस पर ही निर्भर है। तभी तो कहा गया है कि

अन्नं प्राणों बलं चान्नमन्नं सर्वार्थ साधकम्,
देवासुरं मनुष्या च सर्वे चान्नोपजीविनः।

अर्थात् अन्न की प्राण है, अन्न ही बल है और अन्न ही सभी कार्यों को सिद्ध करने वाला है। देवता, असुर और मनुष्य सभी अन्न से ही जीवन यापन करते हैं।

एक समय था जब कृषि को सर्वोत्तम व्यवसाय का दर्जा प्राप्त था पर कालांतर में यह व्यवसाय अपनी चमक खोता चला गया इसकी चमक धूमिल होती चली गई और यह तीसरे स्थान पर चला गया।
उत्तम खेती, मध्यम व्यापार, नीच चाकरी करे लाचार।
उत्तम नौकरी, मध्यम व्यापार, खेती कार्य करे लाचार।

हम इक्कीसवीं सदी में हैं और अब कृषि को धर्म, कर्म से न जोड़कर व्यवसाय बनाना आवश्यक है। क्योंकि नई तकनीकों के प्रादुर्भाव से उत्पादन लागत काफी बढ़ गया है। अब समय आ गयी है परंपरागत खेती से धीरे–धीरे हाईटेक खेती से की ओर अग्रसर होने का। आज यह साफ दिखाई देने लगा है कि अब खेती ज्ञान, कौशल व तकनीक पर आधारित होगी। उत्पादन बढ़ाना प्राथमिकता न होकर प्रति ईकाई लाभप्रदत्ता पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक हो गया है। एक किसान की जो परिकल्पना थी वह बदलती नजर आनी चाहिए। वह भी एक कुशल व्यवसायी के रूप में देखा जाना चाहिए।

कृषि के मुख्य रूप से छः आयाम हैः– मिट्टी, जल, मौसम, मशीन, किसान व बीज कृषि के छः आयाम हैं। अतः यह लाजिमी है कि इन सभी घटकों का समुचित ज्ञान तथा इनका उत्पादन पर पड़ने वाले प्रभाव से सभी किसान वाकिफ हैं परंतु इस सभी घटकों की जानकारी व प्रबंधन मात्र से ही कृषि कार्य को मुनाफे का सौदा आसानी से बनाया जा सकता है। कृषि को अगर बड़े परिपेक्ष्य में देखें तो इसकी मुख्य रूप से चार प्रणालियाँ है।

1 कृषि उत्पादन प्रबंधन प्रणाली
2 कृषि ज्ञान प्रबंधन प्रणाली
3 कृषि विस्तार प्रबंधन प्रणाली
4 कृषि विपणन प्रबंधन प्रणाली

1. कृषि उत्पादन प्रबंधन प्रणाली

अगर समग्र रूप से देखा जाय तो कृषि उत्पादन प्रणाली, फसल, फल, फूल, सब्जी, दूध, अंडा, मांस, ऊन, मछली, शहद, मशरूम, रेशम आदि उत्पादन करने की प्रणाली है। पारंपरिक रूप से इन सभी के उत्पादन की अनेकों तकनीकें प्रयोग में लाई जाती रही है। विश्व बाजार की प्रतिस्पर्धा एवं नए तकनीकों के विकास ने उत्पादन प्रणाली को काफी प्रभावित किया है। उत्पादन प्रणाली को प्रभावित करने वाली उच्च स्तर की तकनीकों में जैव प्रौद्योगिकी, नैनोटेक्नोलोजी, संरक्षित खेती, हाइड्रोपोनिक्स, एरोपोनिक्स, वर्टिकल फार्मिंग (लंबवत खेती) आदि का उल्लेख महत्त्वपूर्ण है। उत्पादन को बढ़ाने में प्रयुक्त विभिन्न तकनीकों की उपयोगिता संसाधनों के कम से कम उपयोग व संरक्षण से है। आज कम लागत, कम आदानों के उपयोग, कम जगह पर, कम समय में आदि की प्राथमिकता आधुनिक खेती के पर्याय बन चुके हैं। उत्पादन तकनीकों में फसल उत्पादन के लिए नवीनतम बीजाई तकनीकों का प्रयोग जैसे धान की बुआई के लिए डी एस आर मशीन, गेहूँ की बीजाई के लिए टर्बो हैप्पी सीडर का प्रयोग, मक्का के लिए बेड प्लांटिंग आदि। खेत की जुताई तकनीकों में जी पी एस ट्रैक्टर जो खेत में स्वयं को चलाते हुए खेत की

बहुत अच्छी तरीके से जुताई करते हैं। लेजर आधारित लेजर लैंड लेवलर द्वारा खेतों का समतलीकरण। इससे समय, ईंधन और संसाधनों की बचत की जा सकती है तथा मानवीय पहल से होने वाली त्रुटियों से भी मुक्ति मिल जाती है। यहाँ कुछ नई तकनीकों का उल्लेख किया जाना उचित एवं तर्कसंगत लगता है।

टेलिमेटिक्सः— टेलिमेटिक्स कृषि के क्षेत्र में आने वाला सबसे क्रांतिकारी तकनीक होगा। इस तकनीक द्वारा किसान उपकरण/मशीनरी डीलर अपने मशीनों/उपकरणों से बात कर सकेंगे। अचानक चलते हुए मशीन में कोई समस्या आ गई तो टेलिमेटिक्स के माध्यम से डीलर मशीन पर लगे डायग्नोस्टिक सिस्टम तक कहीं से भी पहुँच सकता है और मशीन की कमी अथवा खराबी को ठीक कर सकता है। किसान चलती हुई मशीनों में ईंधन की स्थिति, चलते हुए समय आदि की गणना आदि कमरे में बैठे ही कर सकता है। यहाँ तक की दो मशीनरी आपस में बात कर सकती है, तालमेल बैठा सकती है। जैसे कंबाईन एवं ग्रेन कार्ट में देखा जा सकता है कि कैसे ग्रेन कार्ट कंबाईन के साथ—साथ चलता है। ग्रेन कार्ट स्वयं कंबाईन के पास पहुँच जाता है। और उपयुक्त तब होता है जब एक ही ग्रेन कार्ट दो कंबाईन का पीछा करता है और एक ग्रेन कार्ट से ही दो कंबाईन का काम चल जाता है। इस प्रकार कम से कम मशीनों का अधिक से अधिक प्रयोग किया जा सकता है।

जी पी एस आधारित तकनीकें

जी पी एस पर आधारित स्वाथ कंट्रोल/कटाई क्षेत्र नियंत्रण और वैरियेबल रेट टेक्नोलोजी परिवर्तनीय दर तकनीक (वी आर टी) का जिक्र अति हाईटेक एग्रीकल्चर के संदर्भ में आवश्यक है। स्वाथ कंट्रोल द्वारा कृषि मशीनरी एक बार में कितना क्षेत्र कवर करेगी किसी भी कृषि कार्य के लिए जैसे बीज की बुआई, उर्वरक डालना या खरपतवारनाशी या अन्य कीटनाशकों का स्प्रे आदि। चूंकि खेत का आकार असमान होता है अतः मजदूर द्वारा स्प्रे करने पर एक ही लाईन में दोबारा स्प्रे या दोबारा खाद्य व बीज डल जाने की त्रुटि हो सकती है परंतु जी पी एस से इस प्रक्रिया को नियंत्रित कर मशीनों के उपयोग द्वारा संसाधनों का समुचित एवं प्रभावी इस्तेमाल किया जा सकता है। वी आर टी भी इसी प्रकार कार्य करता है। पिछली फसलों के उत्पादन के आंकड़ों को मिट्टी जाँच से जोड़कर किसान एक जी पी एस मैप (मानचित्र) अपने ही फार्म की सबसे अधिक उपजाऊ जमीन से लेकर कम उपजाऊ मजीन की जानकारी जुटा सकता है और उसी के अनुसार उर्वरकों के प्रयोग का कम या ज्यादा कर सकता है। साथ ही खेत के ऊँचे—नीचे क्षेत्रों का निरूपण कर सिंचाई में उपयोग की जाने वाली पानी की मात्रा को भी संचालित कर सकता है। किसी क्षेत्र में दोबारा स्प्रे, बीज डालना आदि को नियंत्रित कर संसाधनों की बचत की जा सकती है।

सिंचाई तकनीकेंः— सिंचाई के क्षेत्र में फव्वारा विधि, टपका विधि आदि तकनीकों से जल प्रबंधन प्रभावी ढंग से किया जा रहा है परंतु स्मार्ट फोन द्वारा सिंचाई एक हाइटेक तकनीक है जिसका प्रयोग हो रहा है। इस तकनीक द्वारा फसल सिंचाई प्रणाली का अवलोकन एवं नियंत्रण बहुत प्रभावी ढंग से किया जा रहा है। किसान अपने मोबाईल फोन द्वारा ही विभिन्न खेतों में दी जा रही सिंचाई का बिना खेत पर गए ही नियंत्रित कर सकता है। इसके लिए खेतों में स्थित नमी संवेदक (मॉयस्चर सेंसर) खेत के विभिन्न हिस्सों में उपलब्ध नमी की स्थिति की वास्तविक तस्वीर देते हैं जिससे सिंचाई जल व उर्वरक की मात्रा का निर्धारण खेत के विभिन्न हिस्सों के लिए किया जाता है। साथ ही खेत में लगे ट्यूबवेल को कहीं से भी अपने मोबाईल फोन द्वारा चला सकता है या बंद कर सकता है। कई बार यह देखने में आया है कि किसानों को रात में बिजली आने पर सिंचाई करनी पड़ती है। ऐसे में मोटर के साथ एक संयत्र लगाकर उसे मोबाईल से जोड़कर बिना खेत में गए मोटर को चलाया या बंद किया जा सकता है। कई किसान इस तकनीक से लाभ ले रहे हैं।

उर्वरक प्रबंधनः— फसलों में उर्वरक प्रबंधन के लिए एन डी वी आई सेंसर आधारित ग्रीन सीकर का प्रयोग किसानों के खेतों पर किए जाने की आवश्यकता है। ग्राम स्तर पर एक या दो मशीन द्वारा इस कार्य का संपादक पुरे गाँव के लिए किया जा सकता है जिससे काफी मात्रा में नत्रजन आधारित उर्वरक की बचत की जा सकती है तथा समुचित मात्रा में उर्वरक डाल कर उत्पादन लागत कम की जा सकती है। न्यूट्रीयेंट एक्सपर्ट एक कम्प्यूटर आधारित सॉफ्टवेयर है जिसके द्वारा किसानों के विभिन्न खेतों के लिए उर्वरक के मात्रा की गणना कर समुचित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग सुनिश्चित की जा रही है। दोनों ही तकनीकें किसानों के बीच लोकप्रिय हो रही हैं।

नैनोटेक्नोलोजीः— इस तकनीक का कृषि में कई तरीके से प्रयोग हो सकता है जैसे मिट्टी की उर्वरा शक्ति में सुधार, प्रभावी खरपतवार नियंत्रण, कार्बन नैनोट्यूब के प्रयोग से बीज अंकुरण को बढ़ाना, कृषि रसायन का प्रभावी इस्तेमाल, प्रक्षेत्र संवेदक प्रणाली द्वारा जलवायु कारकों (तनावों) का पौधों पर प्रभाव का अवलोकन व पौधों के गुणों में इन प्रतिरोधकों व बिमारियों के प्रति प्रतिरोधकता विकसित करना। पशुपालन में नैनोटेक्नोलोजी का प्रयोग खाद्य क्षमता एवं पोषण में सुधार, पशुपालन गौण उत्पादों को मूल्य सवंर्धित उत्पादों में परिवर्तन कराना आदि में किया जा रहा है। कुल मिलाकर नैनोटेक्नोलोजी द्वारा विकसित नए—नए उत्पादों का प्रयोग कृषि, जल सुधार, खाद्यान्न उत्पादन, प्रसंस्करण, संरक्षण, पैकेजिंग में बखूबी किया जा रहा है जिससे किसान, खाद्य उद्योग व उपभोक्ता लाभान्वित हो रहे हैं।

जैव प्रौद्योगिकीः— जैव प्रौद्योगिकी के प्रयोग से कृषि में फसलों की उपज बढ़ाई जा सकती है साथ ही जैविक व अजैविक तनावों का फसलों पर पड़ने वाले प्रभावों को भी कम या नगण्य किया जा सकता है। विश्व के कई देशों में जैवप्रौद्योगिकी से विकसित जी एम फसलों की खेती की जा रही है। जी एम फसलों में सोयाबीन मक्का, कपास और केनोला की खेती वृहत् पैमाने पर की जा रही हैं। भारत में बीटी कॉटन (कपास) की खेती की जा रही है जिससे कपास उत्पादक राज्यों में कीटनाशकों का प्रयोग काफी कम हुआ है तथा किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। भारत सरकार ने 17 जी एम फसलों के परीक्षण की इजाजत दी है जो आने वाले समय में इनकी खेती का द्वार भी खोलेगा। देश में विकसित गोल्डेन राईस एक क्रान्तिकारी कदम है जिसमें उपलब्ध बीटा कैराटीन अंधेपन की समस्या से निजात दिलाने का जरिया बनेगा। कृषि के क्षेत्र में गेहूँ की पी बी डब्ल्यू 723 किस्म का विकास भी इसी तकनीक की देन है। यह प्रजाति पी बी डब्ल्यू 343 में पीला रतुआ रोगरोधी जीन डालकर तैयार की गई है। चूँकि यह देश के प्रमुख गेहूँ उत्पादक राज्यों की एक अति लोकप्रिय किस्म थी अतः इसको पुनःस्थापित करने के लिए जैव प्रौद्योगिकी द्वारा पीला रतुआ रोधी बनाया गया है।

फसल कैसा महसूस कर रहा है की संवेदनशीलताः— परिवर्तनीय दर तकनीक (वैरियेबल रेट टेक्नोलोजी) को यह अगले स्तर तक लेकर जाता है। जिसमें खेतों के लिए उर्वरक अनुशंसा मानचित्र बनाने के बजाय फसल सेंसर उर्वरक उपकरण को ही सीधे यह बताता है कि कितना उर्वरक डालना है। यह सेंसर आधारित होता है जो पौधों पर पड़ने वाली सूर्य की किरणों के रिफ्लेक्शन परावर्तन को सेंस (महसूस) करके उर्वरक की मात्रा का निर्धारण करता है। क्रॉप सेंसर किसानों के लिए एक लाभकारी तकनीक साबित हो रही है जिसके माध्यम से उर्वरकों का प्रभावी उपयोग किया जा सकेगा जिससे पौधों द्वारा उर्वरकों की उपयोग क्षमता बढ़ेगी तथ लीचिंग एवं बहाव से होने वाले नुकसान को भी कम किया जा सकेगा।

फील्ड डाकुमेंटेशनः— जी पी एस आधारित तकनीकों की वजह से दिन ब दिन उत्पादकता, आदानों को डालने की दर अन्य सस्य क्रियाओं का प्रतिवर्ष निरूपण बहुत आसानी से और एक दम सटीक तरीके से किया जा रहा है। निश्चित तौर पर उपज के आँकड़े किसानों के लिए ज्यादा रोचक हैं जो पूरे वर्ष के दौरान उसकी योजना और कठिन परिश्रम का प्रतिबिम्ब है जो एक रंगीन कागज पर अंकित होकर उसके सक्षम रखा जाता है। जैसे ही कटाई का मशीन खेत के विभिन्न हिस्सों से होकर गुजरता है वह उपज और नमी के स्तर की गणना करता है और इन आंकड़ों को जी पी एस कोआर्डिनेट्स से जोड़ता है। पूरे खेत की कटाई के बाद एक मानचित्र प्रकाशित की जाती है जिसे हीटमैप भी कहते हैं। इस मानचित्र के विभिन्न रंग उपज के दायरों का निरूपण करते हैं, जिससे किसान को अपने खेत के सभी हिस्सों की वास्तविक स्थिति का पता चलता है और किसान इससे यह आंकलन कर सकता है कि बोई गई किस्मों कितने प्रभावी ढंग से उसके खेत पर प्रदर्शन किया।

2. कृषि ज्ञान प्रबंधन प्रणाली

आज की खेती ज्ञान और कौशल आधारित होती जा रही है। हाईटेक एग्रीकल्चर की परिकल्पना ज्ञान प्रबंधन के बिना नहीं की जा सकती। कृषि एवं इससे जुड़ी सभी विधाओं का समय पर ज्ञान तथा उसका सही समय पर अनुपालना ही एक किसान को नवोन्मेशी बनाता है तो दूसरे किसान को आम किसान। अतः हाईटेक एग्रीकल्चर में ज्ञान के सभी का सृजन कृषि से जुड़ी संस्थाओं, विश्व विद्याालयों निजी संस्थाओं में हो रहा है। आज का युग सूचना और संचार प्रौद्योगिकी है। ज्ञान का भंडार आज इंटरनेट पर उपलब्ध है। किसान अपने जरूरत के अनुरूप सूचनाओं को इंटरनेट से डाउनलोड कर उसको समझकर फिर कार्य कर सकता है। आज किसी कृषि अधिकारी की आवश्यकता नहीं है किसी बात का जानने के लिए बस आवश्यकता है इंटरनेट की किसी भी नई फसल की खेती से संबंधित सभी जानकारी किसान इंटरनेट के माध्यम से ले रहे हैं, फिर उसकी अनुपालना कर रहे है। किसी भी नई फसल की खेती शुरू करने के पहले किसानों को उसके विपणन की ही जानकारी आवश्यक है साथ ही भविष्य में उसकी मांग का भी आंकलन उतना ही आवश्यक है। अतः हाइटेक कृषि को अपनाने से पहले उससे संबंधित सभी सूचना व आंकड़े एकत्रित कर उसका विश्लेषण आवश्यक है फिर क्रियान्वयन करें।

जलवायु स्मार्ट कृषि भी हाइटेक एग्रीकल्चर का पर्याय बन चुकी है अतः इसकी परिकल्पनाओं को मूर्त रूप देना बदलते जलवायु परिवेश में खेती के लिए आवश्यक है। इसके सभी छः अवयवों का ज्ञान किसानों को होना आवश्यक है।

1 **जल स्मार्ट तकनीकियांः**– धान की सीधी बिजाई, फसल विविधीकरण कर मक्का की खेती, बेड प्लांटिंग, भूमि का समतलीकरण, धान में वैकल्पिक जल प्रबंधन, जीरो टिलेज तकनीक।

2 **पोषक स्मार्ट तकनीकियांः**– प्रक्षेत्र विशेष पोषण प्रबंधन (एसएसएनएम), मक्का और गेहूँ में न्यूट्रीएंट एक्सपर्ट सॉफ्टवेयर के माध्यम से उर्वरक की मात्रा का निर्धारण, ग्रीन सीकर से यूरिया की गणना कर इस्तेमाल, दलहनों का दो धान्य फसलों के बीच समावेश।

3 **कार्बन स्मार्ट तकनीकियांः**– जीरो टिलेज से खेती व फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन की तकनीकों का प्रयोग।

4 **ऊर्जा स्मार्ट तकनीकियांः**–कम ईंधन की खपत से ज्यादा खेत की बिजाई करना। जैसे जीरो टिलेज रोटरी डिस्क ड्रिल से बुआई। टर्बो हैप्पी सीडर से अधिक फसल अवशेषों में बीजाई। फसल अवशेष का प्रबंधन, धान की सीधी बीजाई।

5 **मौसम स्मार्ट तकनीकियांः**– मौसम के पूर्वानुमान की जानकारी किसानों को मोबाईल फोन पर संदेश द्वारा दिया जाता है। किसानों को फसल की कीटों से सुरक्षा, बीमारी, सिंचाई इत्यादि की जानकारी देना। इस तरह की एस एम एस की सेवाएँ कृषि विश्व विद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, कृषि एवं किसान मंत्रालय के एम किसान पोर्टल से दिए जा रहे हैं जिससे तात्कलिक फसल संबंधी विभिन्न पहलुओं पर निर्णय लेने में मदद मिलती है। मौसम स्मार्ट तकनीक में मौसम का पूर्वानुमान, सूचकांक आधारित बीमा, जरूरतों के अनुसार बीज, फसल विविधीकरण व कृषि वानिकी को लागू करने पर बल दिया जा रहा है।

6 **ज्ञान स्मार्ट तकनीकियांः**–इस में कोई दो राय नहीं है कि अब खेती ज्ञान आधारित होती जा रही है। अतः क्षमता विकास के द्वारा किसानों और उनके साथ काम करने वाली संस्थाओं के सदस्यों को समय–समय पर विभिन्न प्रशिक्षण के माध्यम से कुशल बनाने का प्रयास किया जाता है। ज्ञान स्मार्ट में सूचना एवं प्रसारण तकनीकियां, महिला सशक्तिकरण व क्षमता विकास मुख्य तकनीकियों को शामिल कर ज्ञान का शीघ्र संचार आवश्यक है। इसमें इंटरनेट आधारित विभिन्न ऐप का प्रयोग आवश्यक है।

3. कृषि विस्तार प्रबंधन प्रणाली

कृषि में विस्तार सेवाओं को योगदान सदा ही रहा है। पंरतु

अगर आज के परिवेश में देखे तो सरकारी क्षेत्र में पूरे देश में महज एक लाख के करीब प्रसार कार्यकर्ता है जबकि 20 करोड़ किसान हैं। ऐसे में सभी किसानों परिवारों तक व्यक्तिगत रूप से पहुँच बनाना लगभग असंभव है। ऐसे में सूचना प्रौद्योगिकी व संचार प्रौद्योगिकी का विस्तार सेवाओं में अधिकतर इस्तेमाल ही एकमात्र समाधान व जरिया नजर आता है जिसके माध्यम से अधिकतर किसानों तक प्रभावी ढंग से तकनीकों की जानकारी व अन्य सूचनाएँ बहुत कम समय व कम खर्च में दी जा सकती हैं। इस दिशा में विभिन्न राज्यों में अलग–अलग संस्थाओं द्वारा कुछ सफल प्रयोग हुए है आवश्यकता है ऐसे प्रयासों को सभी राज्यों में लागू करने की। कुछ आई सी टी के सफल प्रयोगों का उल्लेख आवश्यक है जैसेः–ई–चौपाल, ईफको एग्री–पोर्टल, एग्रोवाच, आई किसान, विलेज नॉलेज सेंटर–एम एस स्वामीनाथन रीसर्ज फाउंडेशन, विलेज रिसोर्स सेंटर–ईसरो, किसान कॉल सेंटर, इफको किसान संचार लिमिटेड, फीशर फ्रेंड, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा मोबाईल परामर्श सेवा, ई एग्रीक, ई सागु, डिजिटल ग्रीन, नॉलेज शेयर सेंटर, किसान केरला, ए एक्वा, टी.एन.ए.यू., एग्रीटेक पोर्टल, एग्रीसनेट, डैकनेट, ई–कृषि, आशा, राईस नॉलेज मैनेजमेंट पोर्टल, एगमार्कनेट, महिन्द्रा किसान मित्र आदि। कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने वर्ष 2013 में इस दिशा में एक बड़ी पहल की और एम किसान पोर्टल बनाया जिस पर पंजीकरण करके किसान एस एम एस द्वारा सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है। आज लगभग एक करोड़ किसान इससे जुड़ चुके हैं।

4. कृषि विपणन प्रबंधन प्रणाली

कृषि उत्पादों के लिए उपयुक्त बाजार उपलब्ध कराना आज की कृषि के लिए अति आवश्यक है। कई शोधार्थियों द्वारा किए गए सर्वेक्षणों से पता चला है कि उपभोक्ता के एक रूपये का महज 17–20 पैसा ही किसानों को मिल पाता है और शेष 80–83 पैसा बीच की कड़ी ले जाती है। अतः सुदृढ़ विपणन की व्यवस्था द्वारा किसानों को सीधे बाजार की सुविधा मुहैया करवाकर उनकी हिस्सेदारी को बढ़ाया जा सकता है और खेती को मुनाफे का सौदा बनाया जा सकता है। किसानों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए यह कदम उठाना अति आवश्यक है। आज पूरे देश में मॉल की संस्कृति बड़ी तेजी से बढ़ी है और ऐसी जगहों पर उच्च कोटि व गुणवत्ता की सब्जी व फलों की बिक्री की जा रही हैं। यहाँ तक की सामान्य उत्पाद, बीटी उत्पाद, आर्गेनिक उत्पादों को अलग–अलग शेल्फ में रखकर बिक्री की जाती है। अतः ये सभी कृषि उत्पादों की बिक्री के लिए नये विकल्प हैं। ई–मंडी योजना राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–नैम): कृषि उत्पादों की बिक्री के लिए एकल खिड़की व्यवस्था है। जिसके तहत देश में 585 मंडियों की व्यवस्था की जाएगी जहाँ पर किसान अपने कृषि उत्पादों का बिक्री के समय बाजार भाव जानकर विक्रय कर सकेगा। यह भारत के माननीय प्रधानमंत्री की सबसे महत्त्वाकांक्षी योजना है। एक तरफ यह व्यवस्था किसानों को कृषि उत्पादों का समुचित मूल्य पर बेचने के लिए ऑनलाईन बाजार मुहैया कराएगी वही बिचौलियों की दखलअंदाजी भी कम करेगी। किसान ऑन लाइन ट्रेडिंग के जरिए अपने उत्पादों को बेचकर, मोल भाव कर अधिक मुनाफा कमा सकता है। इलेक्ट्रानिक नेशनल एग्रीकल्चर मार्केट (ई–नैम) एक ऑनलाईन पोर्टल है जिसके जरिए देश की कृषि उत्पाद मंडियों को इंटरनेट से जोड़ा जा रहा है। ई–नैम योजना की शुरूआत 14 अप्रैल, 2016 को माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा की गई। प्रारम्भ में यह योजना हरियाणा मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक और हिमाचल प्रदेश की 20 मंडियों को जोड़कर की गई। इसके लिए प्रत्येक मंडी को 30 लाख रूपये का अनुदान दिया जा रहा है तथा इस योजना का कुल बजट 200 करोड़ रूपये हैं। सरकार का लक्ष्य 2018 तक देश में 585 मंडियों को इस पोर्टल से जोड़ने का है।

इन मंडियों में बेची गई उत्पादों फसलों की राशि उनके खाते में ऑनलाईन ही जमा करवाई जाएगी। इस योजना को लागू करने में सबसे अहम भूमिका राज्यों की है। इसके लिए जहाँ एक तरफ एग्रीकल्चर मार्केट प्रोड्यूस कमेटी (ए पी एम सी) एक्ट में बदलाव लाना है वहीं दूसरी तरफ केन्द्र सरकार की मदद से इलेक्ट्रानिक व भंडारण के लिए आवश्यक ढांचागत सुविधाएँ विकसित करनी है। आज किसान उत्पादक समूहों का गठन पूरे देश में किया जा रहा है, विभिन्न कृषि उत्पादों की कृषि उत्पादन प्रणाली विकसित की जा रही है जिसके माध्यमों से उत्पाद विशेष के लिए कृषि क्षेत्र निर्धारित कर उनका हब बनाकर विभिन्न ईकाईयों जैसे ग्रेडिंग, पैकिंग, परिस्करण, प्रसंस्करण आदि की व्यवस्था की जाएगी। साथ ही एक्पोर्ट जोन बनाकर विश्व बाजार में इनका विक्रय कर किसानों के अधिकतम लाभ दिलाने में सहयोग किया जाएगा।

मोबाईल–एग्रीकल्चरः किसानों तक पहुँचने का सशक्त माध्यम

अंकिता झा, अख्तून असरार बशीर[1], राज पाल मीना, वनिता पाण्डेय, प्रियंका चंद्रा, राजीव रंजन[2], कैलाश प्रजापत, आर.एस.छोकर एवं आर.के.शर्मा
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल
[1]भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कटाई उपरांत अभियांत्रिका और प्रौद्योगिकी संस्थान, लुधियाना
[2]गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर

भारत की 70 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण परिवेश में निवास करती है तथा कुल ग्रामीण जनसंख्या की लगभग आधी आबादी कृषि कार्यों से आजीविका अर्जित करती है। इनमें से लगभग आधे कृषक पहले से ही मोबाईल फोन का उपयोग संचार सेवाओं के लिए कर रहे हैं। भारतीय कृषि बाजार को प्रतिस्पर्धात्मक बनाने में मोबाईल फोन रूपी ये आधुनिक तकनीक पूर्ण सामर्थ्य रखती है। ग्रामीण मानयोजित सेवाएँ (रूरल वैल्यू एडेड सर्विसेज) जितनी अधिक प्रतिस्पर्धात्मक होगी कृषि उतनी ही अधिक लाभदायक सिद्ध होगी। इसके लिए मोबाईल फोन का अधिकाधिक उपयोग करके दूर–दराज के गाँवों तक ज्ञान–विज्ञान, महत्त्वपूर्ण सरकारी निर्णय, आगत मूल्य, बाजार भाव, मौसम की जानकारी इत्यादि सूचनाएँ बिना विलम्ब के मोबाईल के माध्यम से उपलब्ध कराई जा सकती हैं।

यह समय की मांग है कि कैसे किसानों की अनिवार्य जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषि विज्ञान का प्रचार–प्रसार आधुनिक संसाधनों की सहायता से समयानुसार किया जाए। हम सब जानते हैं कि एक मोबाईल या स्मार्ट फोन खास आयु वर्ग के उपयोगकर्ताओं की सभी प्रकार की जरूरतों के लिए एक आवश्यक यंत्र है एवं भारत में मोबाईल प्रौद्योगिकी आम जनता के लिए बाहर तक पहुँचने का एक आधुनिक संचार बनता जा रहा है। इसलिए कृषक समुदाय के लिए एसएमएस, श्रव्य–दृश्य एवं वीडियो आधारित सेवाओं के माध्यम से मोबाईल आधारित सेवाओं को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।

मोबाईल प्रौद्योगिकी कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए और देश की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न आयामों में इस्तेमाल की जा सकती है। निर्णय लेने, कृषि प्रबंधन, कृषि उत्पादन, भू–स्थानिक अनुप्रयोगों, मौसम पूर्वानुमान, विस्तार सेवाओं, वित्तिय सेवाओं और सलाहकार सेवाओं के विपणन करने में यह तकनीक सिद्ध हो सकती है।

कृषि काफी हद तक मौसम से प्रभावित होती है एवं कृषि पूर्णरूप से मौसम प्रतिरोधी नहीं हो सकती। लेकिन निश्चित रूप से वेब आधारित सूचना या एसएमएस के माध्यम से मौसम की भविष्यवाणी कृषकों को उनके मोबाईल फोन पर उपलब्ध करवा कर एहतियाती उपाय अपनाने से प्रतिकूल मौसम का प्रभाव कम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कृषकों के हित में लिए गए महत्त्वपूर्ण निर्णय, आगतों की उपलब्धता, उनका मूल्य इत्यादि से भी किसानों को अवगत कराया जा सकता है। क्षेत्र विशेष के लिए अनुमोदित फसल, उनकी उन्नत प्रजातियाँ, बीज की उपलबधता, बुआई का समय, खाद एवं उर्वरक की मात्रा, फसल सुरक्षा के उपाय तथा उनके विपणन की सुविधा के विषय में समय समय पर मोबाईल फोन (एसएमएस एवं सीधे फोन संवाद) से किसानों को पूर्ण जानकारी मुहैया करवाई जा सकती है।

कृषक, सूचनाओं का उपयोग कर बिचोलियों से मोल–भाव अधिक प्रभावी ढंग से करेगा तथा उत्पाद का उचित मूल्य वसूलेगा

बाजार की स्थिति का ज्ञान नहीं होने की दशा में किसान अपने उत्पादों को कम दाम पर बेचने के लिए बाध्य हो जाते हैं। मोबाईल प्रौद्योगिकी का उच्च मांग और इस तरह के उच्च मूल्यों के बारे में बाजार की जानकारी उपलब्ध करने

के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। मोबाईल बिचौलियों द्वारा शोषण और धोखाधड़ी की संभावना कम करके किसान, प्रदायक और खरीददार के बीच एक सीधा संवाद स्थापित करने का कार्य भी करता है। किसान भी मोबाईल आधारित सेवाओं को ऋण, सरकारी योजनाओं, फसल बीमा पॉलिसियों की जानकारी हासिल करने के लिए उपयोग कर सकते हैं।

नयी तकनीक का उपयोग करके विभिन्न आगतों की उपयोग दक्षता बढ़ेगी

मोबाईल फोन को खेत मशीनीकरण सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। जैसे कि पानी के पंप और डीजल इंजनों को मोबाईल आधारित रिमोट कंट्रोल सिस्टम से नियंत्रित करके पानी की उपयोग दक्षता में सुधार लाया जा सकता है। साथ ही साथ यह तकनीक बेहतर सिंचाई का समय निर्धारण और समय की बचत करने में भी मदद करेगा। नैनो–गणेश तकनीकी ऐसी प्रणाली का एक उदाहरण है। बिजली की उपलब्धता अनुपलब्धता के स्थिति में नैनो–गणेश के माध्यम से किसान दूर–दराज रहकर भी सिंचाई का नियंत्रण कर सकते हैं।

विस्तार सेवाओं को अपने मोबाइल फोन पर स्थानीय भाषा में किसानों को दिया जा सकता है। किसान किसी भी समय और संसाधनों को बर्बाद किये बगैर किसी भी जरूरत के लिए कॉल कर सकते हैं।

सूचनाओं का उपयोग कर कृषक लाभकारी फसलों का चुनाव करेगा तथा अधिक मुनाफा कमायेगा

यह सर्वविदित है कि मोबाईल फोन लगातार ग्रामीण जनता के बीच अधिक से अधिक पहुँच बना रहा है साथ ही साथ सूचनाएं पहुँचाने में एवं कृषकों द्वारा उनका उपयोग भी समय के साथ बढ़ रहा है। इसलिए भविष्य में मोबाईल फोन एवं संबंधित तकनीक का प्रयोग और अधिक प्रभावी हो जायेगा एवं छोटे किसान भी इसका फायदा उठा पाएंगें, जिससे कृषि को और अधिक फायदेमंद बनाने के अवसर प्रदान होंगे।

सूचना एवं प्रसारण तकनीक के उदहारण

दूरभाष केंद्र आधारित	इन्टरनेट आधारित	विडियो आधारित
किसान कॉल सेंटर्स, भारत सरकार, 2004 टोल फ्री सुविधा– **1800–180–1891** (भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल)	विलेज नॉलेज सेंटर्स, 1998 इ– चौपाल, 1999 इ–सागु, 2004	डिजिटल ग्रीन, 2009
मोबाईल–सन्देश	**मोबाइल आधारित सेवाएँ**	**मोबाइल वाणी संदेश**
कृषि विज्ञान केंद्र, 2009	फिशर–फ्रेंड–एमएसएसआरएफ, 2008 नोकिया लाइफ टूल्स, 2009 टाटा–एम कृषि, 2009	इफको किसान संचार लिमिटेड (आईकेएसएल), 2007

निर्णय समर्थन प्रणाली द्वारा व्यवसायिक डेयरी फार्मिंग

आरती, स्मिता सिरोही, चन्दन कुमार राय तथा सुनील कुमार

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

डेयरी, पांरपरिक रूप से लघु वर्गीय उद्योग है और यह परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। भारत में डेयरी उद्योग गांधीवादी विचारों पर आधारित है। परंतु अब पारंपरिक दुग्ध उत्पादन से वैज्ञानिक रूप से दुग्ध उत्पादन की ओर बदल रहा है। दुग्ध की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए डेयरी फार्मिंग अब व्यवसायिक रूप से किया जा रहा है। डेयरी फार्म स्थापित करने के लिए भारी पूँजी निवेश की आवश्यकता पड़ती है। बैंक से ऋण लेने के लिए तकनीकी–आर्थिक व्यवहार्य रिपोर्ट बनाना आवश्यक है। बैंक अधिकारी तकनीकी– आर्थिक व्यवहार्य रिपोर्ट की जाँच करके ही ऋण देते हैं। तकनीकी–आर्थिक व्यवहार्यता के आंकलन के लिए भावी उद्यमियों के पास मूल्य रहित सूचना तथा संचार के साधन की कमी है। इसलिए निर्णय समर्थन प्रणाली (डिसिजन स्पोर्ट सिस्टम) आवश्यक है। यह हमारे किसानों को निर्णय लेने में सहायक करता है। निर्णय समर्थन प्रणाली एक वेब आधारित ऐप है इसका नाम (टीम–सीडी) है। टेक्नोइकोनोमिक असेसमेंट फौर कॉमर्शियल डेयरी फार्म का पूर्ण रूप टेक्नो–आर्थिक आंकलन व्यावसायिक डेयरी फार्म है। यह ऐप एक उपयोगकर्ता अनुकूल ऐप है जिसमें उपयोगकर्ता अपने अनुसार मापदंडों को बदल सकता है। यह निर्णय समर्थन प्रणाली वैज्ञानिक सिंद्धातों पर आधारित है।

निर्णय समर्थन प्रणाली एक कम्प्यूटर आधारित प्रोग्राम है जो कि आवेदन के डेटा का विश्लेषण करती है और उसे इस तरह प्रस्तुत करता हैं ताकि उपयोगकर्ता व्यवसाय के फैसलों को आसानी से ले सके। TEAM-CD में अठारह मॉड्यूल हैं जिसमें नौ (आवक) मॉड्यूल हैं और नौ उत्पादन मॉड्यूल हैं।

- पहला मॉड्यूल उद्यमी के आम सूचना के बारे में हैं जिसमें उद्यमी का नाम, शैक्षणिक योग्यता तथा डेयरी फार्म में अनुभव आदि है।
- दूसरा मॉड्यूल (लॉग इन स्क्रीन) है जिसमें किसान प्रणाली में प्रवेश करता है।
- तीसरा मॉड्यूल में परियोजना के संबंध में मूल जानकारी जैसे पशुओं की खरीद मूल्य, दूध विक्रय मूल्य आदि हैं।
- चौथा मॉड्यूल गोशाला आयाम है जिसमें दो डिफॉल्ट विकल्प हैं। पहला विकल्प BIS (Bureau of Indian standard) और दूसरा प्रचलित व्यवहार है। किसान अपने सुविधा के अनुसार दोनों विकल्पों में से किसी एक विकल्प को चुन सकता है।
- पाँचवा मॉड्यूल मशीनरी तथा उपकरण है। मशीनरी और उपकरण स्वाचलन के स्तर पर आधारित है। इसमें तीन विकल्प है जैसे कि पूर्ण रूपेण स्वचालित और स्वचालित किसान अपने अनुसार उपकरण चुन सकता है।
- छठा मॉड्यूल चारा की आव यकता है, चारे की आवश्यकता मौसम के अनुसार बदलता रहता है। भिन्न–भिन्न मौसमों में अलग–अलग चारे की आवश्यकता है।
- सातवां मॉड्यूल श्रमिक आवश्यकता और लागत है, श्रमिकों की संख्या पशुओं की संख्या पर आधारित है।
- आठवां मॉड्यूल अन्य खर्च है जिसमें भूमि का किराया, पशुओं का खरीदने का मूल्य, गोबर का बेचने का मूल्य आदि आते हैं।
- नौवां मॉड्यूल झुंड प्रक्षेपण है इसमें पांच साल तक के पशुओं की संख्या, पशुओं के बच्चों की संख्या, बछड़ियों की संख्या आदि है।

इसमें नौ उत्पादन मॉड्यूल हैं जिसमें फीड और चारा लागत प्रक्षेपण, मजदूरी पर खर्च अन्य प्रक्षेपण, लागत परिचालन लागत, कुल परियोजना लागत, दुग्ध उत्पादन अनुमान दिया गया है। ऋण अनुसूची अनुमान हमारी कुल ऋण पर आधारित है। निर्णय समर्थन प्रणाली से किसानों को विनियोजनीय परियोजना रिपोर्ट प्रदान करता है जो कि किसान को उनके परियोजना में निर्णय लेने में सहायता करते हैं।

निर्णय समर्थन प्रणाली के लाभ

1. यह एक उपयोगकर्ता हितैषी वेब ऐप है जो उद्यमियों को निर्णय लेने में सहायता करता है।
2. उद्यमी कुछ ही क्लिक से साथ विनियोजनीय परियोजना रिपोर्ट प्राप्त कर लेते हैं।
3. यह पशुपालन तथा अर्थशास्त्र के वैज्ञानिक सिंद्धातों पर आधारित रूप से है।
4. निर्णय समर्थन प्रणाली में संवेदनशीलता विश्लेषण की जाँच भी कर सकते हैं।
5. यह एक मुफ्त साधन है, अन्यथा सलाहकार रिपोर्ट बनाने के लिए बहुत फीस माँगते हैं। किसान उनकी महंगी फीस पूरा नहीं कर पाते हैं, इसलिए निर्णय समर्थन प्रणाली किसानों के लिए अत्यंत लाभदायक है।

हाईड्रोपोनिक्स : संभावनाएँ

वनिता पाण्डेय, स्नेह नारवाल, सेवा राम, रिंकी, अंकिता झा, सोनिया श्योरान एवं आर.के. गुप्ता
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा कृषि और कृषि से संबधित क्षेत्र रोजगार के प्रमुख प्रदाता हैं। अधिकांश उद्योग भी कच्चे माल के लिए कृषि पर ही निर्भर है। भारत की आबादी में निरंतर वृद्धि हो रही है जिस कारण कृषि के लिए उपयुक्त भूमि भी धीरे–धीरे कम हो रही है। ऐसे समय में सीमित भूमि में अधिक उपज प्राप्त करना अति आवश्यक हो चुका है ताकि बढ़ती हुई जनसंख्या को खाद्य आपूर्ति की जा सके। उच्च नवीन तकनीक जैसे रोबोट्स, कम्प्यूटर तथा कीटनाशक, उर्वरक व जल के अनुप्रयोगों में नवीनता और ग्रीनहाउस व जलकृषि का उपयोग करके सीमित भूमि में उच्च गुणवत्ता व अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

जलकृषि (हाईड्रोपोनिक्स)

जलकृषि एक ऐसी वैज्ञानिक तकनीक है जिसमें पेड़–पौधों को मिट्टी के बगैर उगाया जाता है। जलकृषि में सभी आवश्यक तत्त्व रसायनिक घोल के स्वरूप में पौधों को प्रदान किए जाते हैं ताकि उनकी सामान्य रूप से वृद्धि और विकास हो सके। अधिकांश पौधों में सम्पूर्ण बायोमास का 20–50 प्रतिशत तक वनज जड़ों से होता है तथा जब पौधों को पर्याप्त मात्रा में जल और नाईट्रोजल खनिज नहीं मिलता है तब पौधों का 90 प्रतिशत तक बायोमास जड़ों में समाहित हो जाता है जिस कारण उपज प्रभावित होती है। जबकि पौधों को अगर पर्याप्त मात्रा में जल नाईट्रोजन के साथ, जल कृषि विधि से उगाया जाये तो केवल 3–5 प्रतिशत बायोमास ही जड़ों में पाया जाता है। अतः अगर इस विधि से फसलों को उगाया जाए तो मृदा में उगाने के मुकाबले अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है। भारत में जल कृषि एक उभरती हुई नवीन तकनीक है जिसका उपयोग करके सब्जियाँ जैसे टमाटर व बैंगन, फल जैसे स्ट्राबेरी तथा पशुओं का चारा आदि की सफलतापूर्वक खेती की जा रही है। अनाज जैसे गेहूँ, चावल आदि की भी इस विधि से खेती की जा सकती है जिसमें पौधों की प्रारंभिक अवस्था में जलकृषि से उगाकर फिर मृदा में प्रत्यारोपित किया जा सकता है।

प्रायोगिक प्रकिया

इस प्रक्रिया में एक फ्रेम, ग्रोथ ट्रे, वातन, प्रकाश व्यवस्था, ठंडाई, सिंचाई व्यवस्था, सुपरनेटन्ट सग्रंह तथा नियंत्रण इकाई होती है और पूरा फ्रेम एंगल लोहे से निर्मित होता है। सभी फ्रेमों को स्वतंत्र रीसर्कुलेटिंक न्यूट्रियन्ट फिल्म तकनीक से जोड़ा जाता है और इस पूरे सिस्टम को गेहूँ के अनुकूल विकास स्थिति वाले वातानुकूलित ग्रीन हाउस में स्थापित किया जाता है। हाई प्रेशर सोडियम लैंप फोटोसिन्थेअिकली सक्रिय विकिरण (पी.ए.आर.) का 80 प्रतिशत तथा बाकि 20 प्रतिशत सूरज को रोशनी के द्वारा प्रदान किया जाता है जो पौधों का 16 घंटे प्रतिदिन चाहिए होता है। तापमान और सापेक्ष आर्द्रता क्रमशः 23 से 28°C और 60 से 70 प्रतिशत दिन तथा रात की अवधि के लिए निर्धारित की जाती है। एक वर्टिकल युनिट में कई ट्रे रखी जाती है तथा 1 एन.एफ.टी. युनिट से 2 ट्रे जोड़ी जाती है।

जलकृषि के रसायनिक घोल में निम्नलिखित अकॉर्बनिक लवण पाये जाते है– केल्शियम, पोटाशियम, फास्फोरस, मैंग्नीजियम, बोरोन, मैंग्नीज, जिंक, एमोनियम सॉल्ट, मोलीबढेनम तथा आयरन। प्रत्येक एन.एफ.टी. सिस्टम में पोषक तत्वों के घोलों का स्वतंत्र रूप से पीएच 6 नियंत्रित किया जाता है। पोषक तत्त्व के घोलों की प्रांरभिक चालकता 1500 से 1700 के बीच रखी जाती है। वाश्प उत्सर्जन के कारण एन.एफ.टी. ट्रे में पोषक तत्वों के घोलों की मात्रा में कम हो सकती है इसलिए हर सप्ताह फ्रेश पोषक तत्वों का घोल एन.एफ.टी. ट्रे में डाला जाता है ताकि सभी में एक समान मात्रा रखी जा सके। शीतलन इकाई को भी साथ में जोड़ा जाता है ताकि सोडियम लैम्प के द्वारा उत्पादित गर्मी को कम किया जा सके तथा अधिक तापमान से खराब होने वाले पोषक तत्वों को बचाया जा सके। गेहूँ के बीजों को 2.5 प्रतिशत सोडियम हाईपोक्लोराइड (वी/वी) और 0.01 प्रतिशत ट्वीन 20 (वी/वी) के घोल में 15 मिनट भिगोकर तीन बार जीवाणुरहित आसुत जल के द्वारा सरफेस स्टेरिलाइज किया जाता है। फिर बीजों को 12.5 से.मी. की दूरी पर 2 बीज प्रति घन की मात्रा में एन.एफ.टी. सिस्टम में रोपित किया जाता है। गेहूँ के पौधों को 10 दिनों के बाद एन.एफ.टी. ट्रे में प्रतिरोपित करते हैं तथा

प्रत्येक ट्रे में 2–5 से.मी. पोषक तत्वों के घोल को डाला जाता है तथा पांच दिन बाद पोषक तत्वों के घोल को रिसरकुलेट किया जाता है ताकि पौधों का सही विकास हो सके।

जल कृषि के लाभ

जल संवर्धन की विधि कई कारणों से मिट्टी में पारंपरिक तरीके से उगाने से बेहतर है। मुख्यतः इस विधि में फसल की उपज अधिक होती है जिस कारण यह विधि काफी प्रसिद्व है। इस विधि में मिट्टी की जरूरत नहीं होती तथा संयंत्र आबादी की एक बड़ी संख्या को एक छोटे संक्षेत्र में उगाया जा सकता है। दूसरा, पोषक तत्वों के ईष्टतम अनुपात में अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जाता है। इसके अलावा, क्योंकि पौधों को कृत्रिम वातावरण में ग्रीन हाउस के प्रतिकूल वातावरण में उगाते हैं जिस कारण पोषण तत्वों की कमी वाली खराब मिट्टी उपज को प्रभावित नहीं करती है। जल संवर्धन कार्यक्रम में जल को पुनरावृत किया जाता है तथा कुशल आयोजित कार्यक्रम में जल का उपयोग एक सामान्य खेत में उपयोग किए जाने वाले जल का केवल 10 प्रतिशत ही होता है। क्योंकि यह एक अवरूद्ध व्यवस्था है। इसमें पोषक तत्वों का मिट्टी में रिसाव के द्वारा नुकसान नहीं होता है इसलिए इसमें सामान्य खेत के मुकाबले केवल 25 प्रति ात ही उर्वरक का उपयोग होता है। इस विधि में यूट्रोफिकेशन की समस्या भी नहीं होती है। ग्रीन हाउस में उगाये जाने के कारण न तो इसमें कीट लगते हैं तथा प्राकृतिक परभक्षियों का उपयोग करके कीटों को नियंत्रित कर सकते है इसलिए कीटनाशकों का प्रयोग नहीं होता है। अकुंर उद्भव प्रतिशत भी कृषि वैज्ञानिकों के लिए एक महत्त्वपूर्ण कारक है। क्योंकि सीमित स्थान और समय के कारण प्रजनन कार्यक्रम में अनावश्यक देरी हो सकती है तथा निश्चित क्रॉसेस बनाने का अवसर भी निकल जाता हैं जो जलकृषि में संभव है। जलकृषि विधि से गेहूँ में प्रजनन करने से पौधों की उद्भव, उपज तथा बीज की गुणवत्ता पारंपरिक तरीकों की तुलना में अधिक होती है। विनियमित विकास के स्तर को मिट्टी में दोहराना संभवतः मुश्किल है।

निष्कर्ष

जलकृषि एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पौधों को मृदा के बैगर उगाकर अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है। इस प्रक्रिया को मुख्यतः सब्जी तथा फल की खेती के लिए उपयुक्त माना जाता है परंतु अब फसलों को भी इस विधि से उगाकर किसान लाभान्वित हो सकते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा पौधों को बेहतर उद्भव वातावरण मिलता है जिस कारण उच्च गुणवत्ता प्राप्त होती है। इससे यह सुझाव मिलता है इष्टतम उत्पाद के लिए उत्तम वातावरण देना अनिवार्य है। जलकृषि विधि में आरंभिक लागात मृदा की खुती से अधिक होती है, परंतु शुरूआती निवेश के बाद लम्बी अवधि तक लाभ उठाया जा सकता है। जलकृषि कृषि की एक नवीन तथा प्रभावशाली तकनीक है।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–नाम) व उसका महत्त्व

सुनील कुमार, सेंदिल आर., अनुज कुमार व सत्यवीर सिंह

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

वर्तमान सरकार की मुख्य धारणा विभिन्न क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी तथा पारदर्शिता को बढ़ावा देना है। वर्तमान में कृषि क्षेत्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। भारत सरकार ने 2022 तक किसानों की आय को दोगुणा करने का लक्ष्य रखा तथा इसे प्राप्त करने के लिए परम्परागत तरीकों से हटकर "आऊट–ऑफ–बॉक्स" पहल की गई है। इन्हीं परियोजनाओं में राष्ट्रीय कृषि बाजार (नैम) एक महत्त्वपूर्ण योजना है और यह किसानों के लिए बाजार उपलब्ध कराने की दिशा में एक क्रान्तिकारी पहल है।

ई–नाम एक अनूठा प्रयास है जिसमें अलग–अलग राज्यों की मंडियों को एक पोर्टल के माध्यम से जोड़ा गया है। इसमें किसान पोर्टल से जुड़ी हुई किसी भी मंडी में अपना उत्पाद अच्छी कीमत पर बेच सकते हैं।

इस योजना की शुरूआत डा. भीमराव अम्बेडकर की 125वीं जंयती के अवसर पर की गई। इसके तहत ई–नाम में "एक राष्ट्र एक व्यापार" तथा किसानों के लिए समृद्धि के लक्ष्य को साकार करने पर पूरा जोर दिया गया था। अब यह 10 राज्यों में (आन्ध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, तेलंगाना, उत्तर प्रदेश, झारखंड व हरियाणा) की 250 मंडियों को इस पोर्टल से जोड़ा गया़ हैं।

ई–नाम तथा स्कीम की व्यापक सुविधा :– ई–नाम एक अखिल भारतीय इलेक्ट्रोनिक ट्रेडिंग पोर्टल है जिसे दूर दराज के बाजारों को आपस में ऑनलाईन माध्यम से जोड़कर एक एकीकृत राष्ट्रीय बाजार बनाने के लिए विकसित किया गया है इलेक्ट्रोनिक राष्ट्रीय कृषि बाजार एक अखिल भारतीय इलेक्ट्रोनिक ट्रेडिंग पोर्टल है जो सभी कृषि वस्तुओं के ए पी एम सी के लिए एक एकल खिड़की सेवा प्रदान करता है। इसमें मौजूदा ए पी एम सी मंडियों की जानकारी और सेवाओं से सम्बन्धित जानकारियाँ अपने हितधारकों जैसे किसानों, व्यापारियों, खरीदारों और निर्यातकों को एकल खिड़की के माध्यम से उपलब्ध करवाता है। इसका लक्ष्य मार्च 2018 तक देश की 585 मंडियों को एक एकीकृत राष्ट्रीय बाजार के रूप में जोड़ना है। इसकी स्थापना नागार्जुन फर्टिलाइजर व केमिकल लिमिटेड की मदद से एस एफ ए सी टैम्नो–ब्रेन ग्बोल एफ जेड ई के साथ एक साझेदारी से ई–आधारित प्रक्रिया के रूप में क्रियान्वित किया गया है।

सुविधा

1. कृषि, सहकारिता एवं किसान कन्याण मंत्रालय (डी ए सी तथा एफ डब्ल्यू) इस सॉफ्टवेयर को मंडी/राज्य को मुफ्त में प्रदान करेंगें तथा इस सॉफ्टवेयर को स्थापित करने के लिए उपकरण तथा अन्य सामग्री के लिए 30 लाख तक का बजट भी उपलब्ध करवाएंगें।
2. रणनीति साझेदार को एक वर्ष तक निःशुल्क में प्रशिक्षण तथा इसे संचालित करने में सहायता करेगी तथा अगले 5 वर्ष तक इसे नवीनीकरण भी उपलब्ध करवाएगी।
3. एक्स आई ए एम उसी राज्य में लागू किया जाऐगा जो इसमें कृषि उपज विपणन समिति अधिनियम (ए पी एम सी एक्ट) की शर्तों को पूरा करता है जो निम्न है:–

1. पूरे राज्य में एक एकल लाईन विपणन प्रक्रिया मान्य हो।
2. पूरे राज्य में एक जैसी विपणन कर हो।
3. मुफ्त कीमत खोज एक विधि के रूप में इलेक्ट्रोनिक नीलामी के लिए प्रावधान।

राष्ट्रीय कृषि बाजार के उद्देश्य

1. एक ऑनलाईन राष्ट्रीय कृषि बाजार उत्पन्न करना।
2. सभी राज्यों की मंडियों/बाजारों को ए पी एम सी बाजार नियम अनुसार एकीकृत करना तथा समान नियम लागू करना।
3. सभी राज्यों के विक्रेताओं व खरीदारों को सभी राज्यों की विपणन प्रक्रिया में भागीदारी के लिए सक्रिय करना।
4. यह गुणवत्ता प्रबंधन की प्रक्रिया को स्थापित करता है जो उत्पाद की ग्रेडिंग व गुणवत्ता को समान रूप से पूरे देश में बनाये रखेगी।

5. सभी विक्रेताओं और खरीदारों के लिए अंतिम समाधान उपलब्ध करवाता है। जैसे समान रूप से ग्रेडिंग, क्रीम खोज और अनुमान, भुगतान व वितरण आदि।
6. यह स्थानांतारण की कीमत को कम करता है, किसानों को अधिक मूल्य दिलवाना तथा उपभोक्ता को उत्तम गुणवत्ता के उत्पाद उपलब्ध करना इसमें लक्ष्य है।

राष्ट्रीय कृषि बाजार के लाभ

1. पूरे देश के लिए एक समान कृषि बाजार स्थापना जिसमें किसान अपने उत्पादों को अपनी नजदीक की मंडियों में सूचीबद्ध करवाकर सर्वाधिक मूल्य पर बेच सके।
2. इससे बाजार प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी तथा किसानों को उत्पाद की बेहतर कीमत मिलेगी।
3. टॉल फ्री नम्बर 1800–2700–224 पर हेल्पलाईन डेस्क स्थापित व चालू किया गया है, जो किसानों को विपणन से सम्बधित समस्याओं का समाधान करेगा।
4. बाजार में पारदर्शिता बढ़ेगी और किसानों को बाजार में होने वाला नुकसान कम होगा।
5. बेहतर निरीक्षण व नियंत्रण।
6. कीमत तथा उत्पाद सम्बंधी डाटा का पूर्ण प्रबंधन बाजार सूचना प्रणाली में सुधार (समय पर कीमत आदि की सूचना एक समान रूप से उपलब्ध होगी)।
7. एक समान उत्पाद की कीमत प्रणाली होने से किसानों को तथा बैंकों को ऋण प्रदान करने में आसानी।

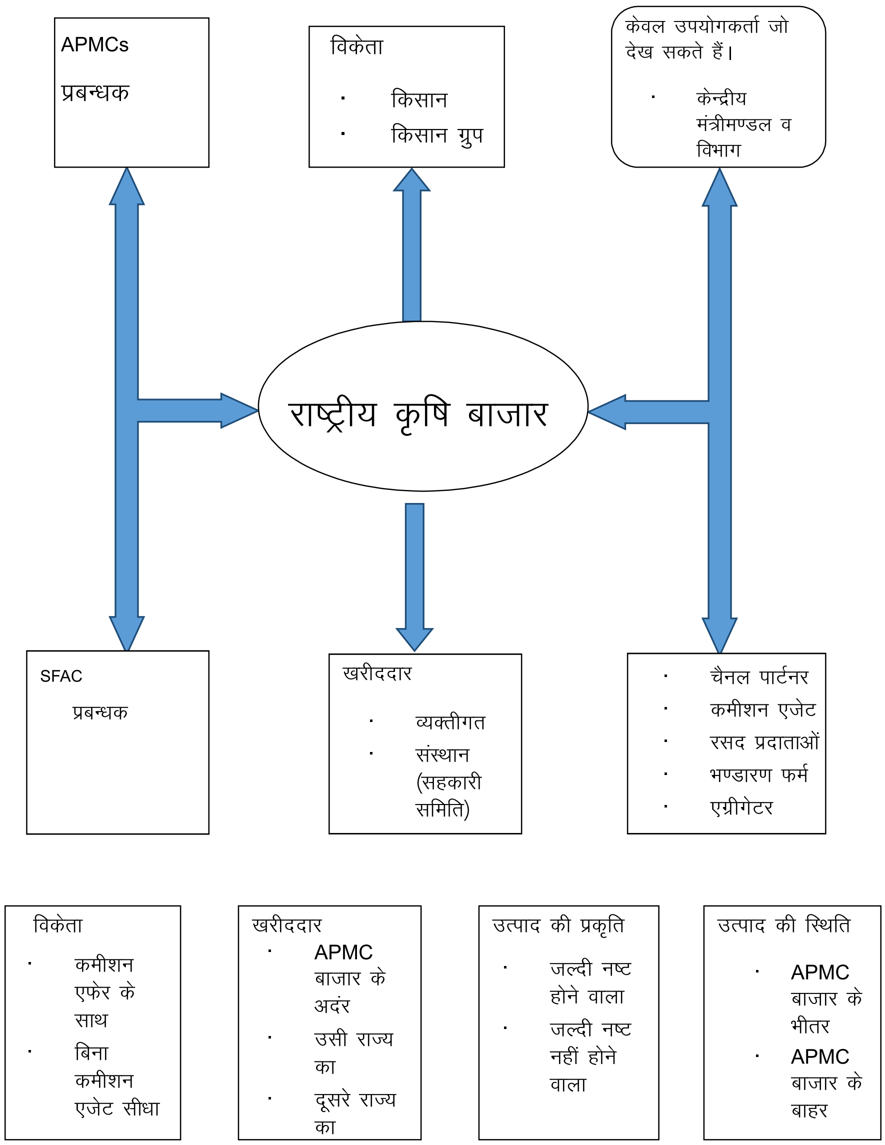

भारत में हाईटेक एग्रीकल्चर की संभावनाएं

जे.के.पाण्डेय एवं अनुज कुमार

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत को आजाद हुए लगभग 70 वर्ष हो गये और आज भी देश की लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या गाँव–देहात व दूर–दराज के इलाके में रहती है। इन ग्रामीण इलाकों में ज्यादातर की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। बिजली, पानी, रोजगार के अवसरों की कमी, ईंधन के लिए गैस की कमी; यातायात की सुविधा व सड़कों का अभाव विद्युतीकरण एवं बिजली का आपूर्ति, कृषि के लिए सिंचाई के साधनों की कमी, स्वस्थ्य सुविधाओं की कमी तथा शिक्षा के लिए आधारभूत सुविधाओं का अभाव आदि ग्रामीण परिवेश में जीवन यापन के पर्याय बन गए हैं और इन समस्याओं के स्थायी समाधान के बगैर समग्र विकास व रामराज्य की परिकल्पना असंभव है।

भारत के कृषि को नया आयाम देने, किसान परिवारों का आर्थिक विकास, ऊर्जा की उपलब्धता व जीवन स्तर में सुधार के लिए हाईटेक कृषि आज के समय की आवश्यकता बन गई है। यहाँ इस बात को समझना आवश्यक है कि लगभग 65 प्रतिशत आबादी जो गाँवों में रहती है विकास की मुख्य धारा से जोड़े बगैर आर्थिक विकास एवं जीवन स्तर में सुधार द्वारा राष्ट्र के समग्र विकास की कल्पना करना बेमानी होगा। अतः हमें ग्रामीण इलाकों के समग्र विकास की नीति बनाने तथा उनका कार्यन्वयन आज की प्राथमिकता होनी चाहिए। कृषि क्षेत्र में त्वरित व टिकाऊ विकास जो समयानुरूप हो, कृषि के उत्पादों को समूचित मूल्य मुहैया करवाने के लिए बाजारों की व्यवस्था व अन्य सुविधाओं को जोड़कर कृषि को हाईटेक बनाया जाना चाहिए। ताकि देश के नौ करोड़ किसान परिवारों को आर्थिक सशक्तिकरण प्रदान किया जा सके।

हाईटेक कृषि क्या है?

हाईटेक कृषि का अर्थ कृषि कार्यों में अत्याधुनिक तकनीकों के उपयोग से है जो वातावरण के अनुकूल हो, प्रति बूंद अधिक से अधिक उपज हों, कम जगह में अत्यधिक उत्पादन जैविक व अजैविक कारकों से कम प्रभावित हो, मृदा स्वस्थ्य को प्रभावित न करें तथा अधिक उत्पादन के साथ–साथ उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद पैदा करने में सक्षम हो जिससे किसानों के लिए अधिक आय का सृजन किया जा सके।

हाईटेक कृषि मुख्यतः नवीनतम तकनीकों का एक जटिल सम्मिश्रण समूह है जिसका उपयोग कृषि में किया जाता है, यह एक ज्ञान आधारित तकनीक है जिसमें नवीनतम कृषि यंत्रों का जिसका कंप्यूटरीकृत उपयोग होता है और इसके लिए तकनीकी दक्षता की आवश्यकता होती है तथा जिसमें उच्च गुणवत्ता वाले कृषि उत्पाद प्राप्त होते हैं।

हाईटेक तकनीकें

हाईटेक कृषि के अंतर्गत, बिना मृदा की खेती, पोली हाऊस में खेती, प्रेसीजन खेती, वर्टिकल फार्मिंग या लम्बवत खेती, पिंक खेती या लाईट फार्मिंग, ड्रोन तकनीक, ट्रेंच खेती एवं डिजिटल तकनीक आधारित खेती।

बिना मृदा के खेती

यह एक ऐसी हाईटेक तकनीक है जिसमें कृषि मृदा के बिना ही की जाती है। यह मृख्यतः दो प्रकार का होता है– 1. हाइड्रोपोनिक्स 2. एरोपोनिक्स

1. हाईड्रोपोनिक्स– पौधों को जीवित रहने तथा फलने–फुलने के लिए सिर्फ मिट्टी ही नहीं पोषक तत्वों व खनिज पदार्थों की आवश्यकता होती है और उनके टिके रहने के लिए कोई भी माध्यम हो सकता हैं यहाँ तक कि हवा में भी लटकते रह सकता है।

माध्यम के लिए पानी, बजरी/कंकड़, चावल की भूसी, पाइन का छाल/देवदार का छाल या अन्य माध्यम हो सकता। पौधा स्टायरोफोम से टिका रहता है। सबसे

अनिवार्य वस्तु ऑक्सीजन युक्त खनिज पोषक तत्वों का घोल है जो पौधे के जड़ से होकर प्रवाहित किया जाता है। कम्प्यूटरीकृत एवं स्वचालित उपकरणों द्वारा तापमान, आर्द्रता आदि को नियंत्रित किया जाता है। जिससे पौधे का बढ़वार बेहतर तरीक से होता हैं। पोषक तत्वों तथा जल का प्रवाह भी कम्प्यूटरीकृत होता है। अतः जड़ रसायनिक घोल में डूबा रहता है।

लाभ

- जमीन का कम उपयोग होता है जिससे कि देश एवं समाज के अन्य आवश्यकताओं के लिए जमीन उपलब्ध होता है।
- स्वास्थ्यकारी एवं उच्च गुणवत्ता वाले कृषि उत्पादों का अधिक मात्रा में उत्पादन।
- इस तकनीक से भी अधिक आमदनी प्राप्त होती है तथा कम मजदूरों की आवश्यकता होती है। एक वर्ष में कई फसलें ली जा सकती है।
- परंपरागत खेती में दवा एवं खाद का कुछ अंश जमीन के नीचे चला जाता है जिससे भूजल प्रदूषित होता है जबकि इस विधि में दवाओं, खरपतवारनाशी एवं कीटनाशी का प्रयोग नहीं होता है जिसके कारण स्वस्थ्य पर इसका हानिकारक नहीं पड़ता है। साथ ही यह पर्यावरण हितैशी भी है।
- इसमें पानी का बहुत कम मात्रा उपयोग किया जाता है। अतः इससे जल संरक्षण में मदद मिलती है।

चुनौतियाँ / बाधाएँ

- उच्च पूंजी निवेश
- अच्छी तरह प्रशिक्षित मजदूरों / कार्मिकों की आवश्यकता
- बाजार की प्रतिस्पर्धा

चुनौतियों को कम करने के उपाए

- प्रशिक्षण की व्यवस्था एवं किसानों का ज्ञान बढ़ाने के उपाय
- पूंजी के लिए बैंकों से सस्ता कर्ज
- नितिगत व्यवस्था में सुधार

2. **ऐरोपोनिक्स–** यह मृदा रहित कृषि की ऐसी विद्या है जिसमें पौधों के जड़ हवा में लटकती रहती है तथा पौधे के जड़ पर पोषक तत्वों के घोल का उपयोग मिष्ट या ऐरोजोल के रूप में किया जाता है। पौधा ग्रोथ चैम्बर में हवा में लटकते रहता है इसमें समय–समय पर घोल का उपयोग इसके जड़ पर किया जाता है।

यह तकनीक व्यापारिक स्तर पर बीज अंकुरण, पौधे के बढ़वार, टमाटर उत्पादन, पत्तियों वाले सब्जी, साग एवं अन्य कई फसलों के लिए बहुत ही उपयुक्त और उपयोगी है।

ऐरोपोनिक्स मृदा रहित खेती में हाईड्रोपोनिक्स के तुलना में कई फायदे हैं। जैसे के अनेकों प्रकार के फसलों / पौधों की खेती की जा सकती है क्योंकि ऐरोपोनिक्स में वातावरण को पूर्ण रूप से नियंत्रित किया जाता है जबकि हाईड्रोपोनिक्स में कुछ ही फसल के पौधे ज्यादा समय तक पानी में रह सकते हैं।

दूसरा अंतर यह है कि ऐरोपानिक्स में पौधे के जड़ को 100 प्रतिशत ऑक्सीजन एवं तना तथा पत्तों को 100 प्रतिशत कार्बनडाईआक्साईड मिलती है जिससे बायोमास का वृद्धि तेजी से होता और रूटींग समय भी कम हो जाता है। जबकि हाईड्रोपोनिक्स में ऑक्सीजन बहुत कम मात्रा में मिलता है। अमेरिका, नासा, के अनुसंधान से पता चला है कि ऐरोपोनिक विधि से उगाया गये पौधे में आवश्यक खनिज लवण की मात्रा हाईड्रोपोनिक्स की तुलना में ज्यादा होता है तथा 65 प्रतिशत कम पानी की खपत होती है। ऐरोपोनिक्स में हाईड्रोपोनिक्स के तुलना में पोषक तत्व एक चौथाई लगता है।

वर्टिकल फार्मिंग या लम्बवत खेती– यह एक खेती की ऐसी विद्या है जिसमें कृषि उत्पादन के लिए वर्टिकल तरीके से गगनचुम्बी ईमारत की तरह एक दूसरे के ऊपर तह / लेयर बनाते हैं, यह तह या लेयर माल–गोदाम, शिपिंग कंटेनर, बड़ी ईमारत के ऊपर या इसी कार्य के लिए विशेषकर ईमारतों की तरह सीधा खड़ा बनाते हैं जिसमें वर्टिकल तरीके से एक दूसरे के उपर तल होता है, बहु मंजिला ईमारत की तरह यह वस्तुतः इनडोर / बंद जगहों पर की जाने वाली खेती है जिसमें पूर्ण रूप से नियंत्रित वातावरण में खेती होती है और आवश्यकतानुसार प्रकाश, आर्द्रता, तापमान व गैस, फर्टिगेशन तथा अन्य आवश्यक कारकों को कृत्रिम तरीके से नियंत्रित कर पौधे के लिए / खेती के लिए समुचित उपयोग किया जाता है। इसमें भी प्राकृतिक रोशनी / प्रकाश को कृत्रिम प्रकाश एवं मेटल रिफ्लेक्टर से संवर्धित किया जाता है।

वर्टिकल फार्मिंग शब्द को सर्वप्रथम गिलवर्ट इलीस बेली ने गढ़ा एवं 1915 में अपने पुस्तक वर्टिकल फार्मिंग में उपयोग किया। कोलंबिया विश्वविद्यालय के पर्यावरण वैज्ञानिक डिक्सन डिसपोमियर (1999) का कथन है कि वर्टिकल फार्मिंग कृषि में भूमि के उपयोग के तरीके को बदल देगा जिससे बहुत कम भूमि में बहुत ज्यादा खाद्य पदार्थों का उत्पादन कर विश्व में भुखमरी को समाप्त किया जा सकता है तथा बढ़ती जनसंख्या एवं घटती जमीन के संकट से उबरा जा सकता है। गगनचुम्बी वर्टिकल फार्मिंग में कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है, इस खेती से प्रदूषण भी बहुत कम होता है। अतः यह तकनीक पर्यावरण हितैषी हैं। परंपरागत खेती में भूजल एवं वायु का प्रदूषण होता है जब कि वर्टिकल खेती से बहुत कम और इसमें भूमिका बहुत कम आवश्यकता होती है। वर्टिकल खेती में बाहर के वातावरण से कुछ लेना–देना नहीं होता है, अतः इस संदर्भ में बगैर इसे सोचे–समझे कहीं भी खड़ा किया जा सकता है।

इस खेती के लाभ

- वर्ष भर खेती की जा सकती है।
- पर्यावरण हितैषी।
- रोग एवं कीट रहित उत्पादन।
- मौसम (तापमान, आर्द्रता, ओला, तुफान, सुखा एवं बाढ़ आदि) के प्रभाव से सुरक्षित।
- बहुत कम भूमि की आवश्यकता होती है।
- मानवीय कारणों से जैविक विविधता के नुकसान में कमी।
- स्वास्थ्यप्रद उत्पाद।

चुनौतियाँ / बाधाएँ

- अत्यधिक पूंजी निवेश
- अनेक तकनीकों का समायोजन
- व्यापक अनुसंधान की आवश्यकता
- आम लोगों / किसानों में जागरूकता पैदा करना व प्रशिक्षण की व्यवस्था

पिंक खेती (गुलाबी खेती) / लाईट फार्मिंग

यह वर्टिकल खेती का ही थोड़ा अलग रूप है जिसे कई बार वर्टिकल पिंक खेती भी कहते हैं, इसमें लाल एवं नीला रंग के एल.ई.डी. बल्ब / लैम्प के प्रकाश का उपयोग किया जाता है। जिससे पौधे में प्रकाश संश्लेषन होता है। परंपरागत खेती में कृषि उत्पादन के लिए पौधों को पूर्ण रूप से प्राकृतिक प्रकाश जो सूर्य से प्राप्त होता है– लाल, नारंगी, हरा, नीला, सफेद व बैंगनी होता है परंतु अनुसंधान से पता चला है कि पौधे के विकास या प्रकाश संश्लेषन के लिए केवल लाल एवं नीला रंग की ही आवश्यकता होती है और जब लाल एवं नीला रंग को मिलाते है तो गुलाबी हो जाता है। अतः इस विधि जिसमें एक के उपर एक तल होता है, लाल एवं नीला रोशनी वाले एल.ई.डी लैम्प / बल्ब से प्रकाश की व्यवस्था की जाती है। इस विधि से खेती करने वाले छोटे दायरा / जगह में वर्ष भर खेती करके उच्च गुणवता वाले ज्यादा उत्पाद को बेहद कम पानी में बगैर मौसम का चिंता किये, उत्पादन लेते हैं। एल.ई.डी. की एक विशेषता यह भी है कि और तरह के लैम्प के तुलना में ठंडा रहता है, अतः पौधे के नजदीक उपयोग करने से पौधों के बढ़वार को और भी त्वरित किया जा सकता है। इस खेती के उदाहरण के लिए जापान को ले सकते हैं, वहाँ का सबसे बड़ा वर्टिकल पिंक फार्मिंग प्रति वर्ग फीट स्थान से 10,000 लेट्यूस का पौधा निकलता है जो कि परंपरागत खेती से 100 गुणा से भी ज्यादा है। विश्व में अनेक देश है जैसे कि रूस, चीन, हांग–कांग, अमेरिका आदि देशों में यह खेती सफलतापूर्वक हो रही है।

विशेषता

इस खेती में एक अनुमान के अनुसार लगभग 98–99 प्रतिशत कम पानी लगता है, 40–50 प्रतिशत कम ऊर्जा का उपयोग होता है, कम भूमि की आवश्यकता होती है जबकि परंपरागत खेती की तुलना में प्रति वर्ग फीट भूमि से उत्पादन कई गुणा ज्यादा होता है। एक अनुमान के अनुसार 2050 तक विश्व में 9.6 अरब की आबादी होगी तथा लगभग 80 प्रतिशत लोग शहरों में होगें। अतः बढ़ती आबादी एवं नागरिक सुविधाओं के लिए ज्यादा भूमि की आवश्यकता होगी, उस समय परंपरागत खेती के लिए खेती योग्य जमीन कम होगी, ऐसे समय में जब जमीन का उपयोग मानवीय सुविधाओं के लिए हो रहा होगा, वर्टिकल खेती एक बेहतर विकल्प होगा जो कई समस्याओं से हमें निजात दिलयेंगीं। कुल मिलाकर वर्टिकल खेती एक सफल तकनीक साबित होगी क्योंकि समय बीतने के साथ प्रत्येक वर्ष में इसकी लागत खर्च में लगातार कमी होती जाती है और इस विधि का उपयोग व्यक्तिगत अथवा सामुदायिक दोनों ही स्तर पर किया जा सकता है। कोई भी शहर में रहने वाला व्यक्ति अपने घर में ही यह व्यवस्था कर सकता है जिससे ताजी सब्जी / सलाद बड़े आसानी से वर्ष भर उपलब्ध होती

रहेगी। अतः इस खेती की सभी बातों पर ध्यान देने पर यह दावे से कहा जा सकता है कि यह भविष्य की खेती है और इस प्रकार की खेती का चलन अवश्य बढ़ेगा।

ड्रोन तकनीक

इसको पहले मानव रहित यान बोला जाता था। ड्रोन शब्द का उपयोग सबसे पहले सेना ने किया। शुरूआत में इस तकनीक का उपयोग ज्यादातर सेना/सुरक्षा बल में होता था। अतः इसे सैन्य तकनीक समझा जाता था। कालान्तर में जैसे–जैसे तकनीकी विकास हुआ, अन्य क्षेत्रों में इसका उपयोग होने लगा। उपयोग के आधार पर इसमें अलग–अलग प्रकार के उपकरण एवं तकनीकों का समावेश किया जाने लगा। उसके बाद उपयोग आधारित ड्रोन का निर्माण होने लगा और आज के समय में यह एक बड़ा व्यापार हो गया है और दिनों–दिन इसमें और भी तकनीकी सुधार हो रहा है।

अंतर्राष्ट्रीय नागरिक विमानन संगठन (आई.सी.ए.ओ.) एवं यूरोपियन आयोग ने अपने दस्तावेज में "मानव रहित वायुयान" या "मानव रहित वायुयान प्रणाली" आदि नामों से नियमों और विनियमों या नियमावली बनाया है और आज के समय में ड्रोन के नाम से ज्यादा जाना जाता है।

कृषि में ड्रोन तकनीक का उपयोग

कृषि क्षेत्र में ड्रोन का विश्व में बहुत उपयोग हो रहा है, आने वाले समय में कृषि क्षेत्र में इसके बहुत सारे प्रकार के उपयोग होने की अनंत संभावनाएँ हैं। कृषक के लिए बुनियादी स्तर पर ड्रोन से फसल/खेत का बड़ा दृश्यावलोकन किया जा सकता है जिससे फसल में हो रहे

सूक्ष्म से सूक्ष्म बदलाव का पता किसान को चल जाता है। ड्रोन में विशेष सेंसर लगा होता है, जिससे मल्टीस्पेक्ट्रल न्यूट्रल डेनसिटी वेजीटेसन इंडेक्स (एन.डी.वी.आई) एवं इन्फ्रारेड (आई.आर) ईमेज से किसान को पूरे फसल में बदलाव बहुत साफ–साफ एवं आसानी से देखने को मिलता है जबकि खुले आँखों से इतना स्पष्ट पता नहीं चलता व समय भी लगता है। ड्रोन से लिए गए डाटा से फसल, पेड़–पौधों की सूची बनाने में समय और श्रम दोनों ही बहुत कम लगता है। जैसे पान, नारियल के पौधे की गिनती उनका अवलोकन तथा गेहूँ या अन्य फसलों में पानी की कमी, बदलाव, जल तनाव या रोग–व्याधि को आसानी से पहचाना जा सकता है। इसमें तकनीकी स्तर पर ड्रोन को और समुन्नत बनाकर काफी कार्य किया जा सकता है। फसल बीमा कपंनी एवं किसान दोनों को इस ड्रोन तकनीक से बहुत लाभ हो सकता है। ड्रोन तकनीक से फसल बीमा देने वाली कंपनी कम समय व कम खर्च में आसानी से प्राकृतिक कारणों से हुए हानि का आंकलन सटीक ढंग से कर सकती है और किसान को मुआवजे का भुगतान कर सकती है। अभी तक भारत में किसानों का भुगतान बहुत देर से होता रहा है, अतः इस तकनीक का तत्काल लाभ लिया जा सकता है। साथ कंपनी को भी लाभ है क्योंकि कोई भी किसान एक ही खेत का दोबारा क्लेम नहीं ले सकता।

ड्रोन तकनीक से कृषि को सामग्र विकास

यह बहुत स्पष्ट है कि कृषि में ड्रोन तकनीक का बहुत उपयोग है। इससे देश के कृषि नीति नियंताओं एवं योजनाकारों को नीति/योजना बनाने में आसानी होगी, कम समय एवं कम खर्च में सटीक कार्य करने में ड्रोन महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। वैज्ञानिकों को भी इससे लाभ मिलेगा। इस तकनीक से सिंचाई की व्यवस्था, सिंचाई चैनेलों का प्रारूप, भूमि का स्वामित्व, भूमि सुधार, भूमि उपयोग प्रणाली, दुर्गम क्षेत्र का अवलोकन व सुधार, मृदा उपजाऊपन की नक्शा जैसे अन्य अनेकों कार्य है जिसमें इसका उपयोग कर भारी सफलता की ओर अग्रसर हुआ जा सकता है। कई देशों में इसका उपयोग हो भी रहा है।

भारतीय संदर्भ में स्थिति

यह तकनीक भारत में भी उपयोग हो रहा है परंतु राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय, सामाजिक एवं व्यक्तिगत सुरक्षा, आम जनता की निजता, डाटा की सुरक्षा, उत्तरदायित्व, बीमा आदि अन्य

अनेक मुद्दों को ध्यान में रखते हुए ड्रोन तकनीक के नागरिक उपयोग का अक्तूबर, 2014 से भारत में तब तक के लिए प्रतिबंधित किया गया, जब तक की पहले उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए भारत के महानिदेशक, नागरिक उड्डयन (डीजीसीए) इस संबंध में एक विस्तृत नियमावली न बना लें। इस दिशा में कार्य तेजी से प्रगति पर है और कई सरकारी संस्थान/विभाग खासकर भारत के कृषि, सहकारिता एवं किसान कन्याण मंत्रालय ने भी इसे बड़े पैमाने पर उपयोग करने की घोषणा कर चुका है।

प्रेसिजन फार्मिंग

यह एक सूचना एवं तकनीक आधारित फार्म प्रबंधन प्रणाली है जिसे स्थान विशिष्ट फसल प्रबंधन भी कहते हैं, जिसमें सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए फसलों, मिट्टी एवं अन्य पहलुओं में अंतर/समस्या की पहचान करके, उसकी गणना और प्रबंधन करते हुए मृदा व अन्य संसाधन की सुरक्षा भी होती है तथा टिकाऊपन के साथ–साथ पर्यावरण की भी सुरक्षा होती है। इस खेती को कई बार आवश्यकतानुरूप खेती या सैटेलाईट खेती भी कहते हैं।

प्रेसिजन खेती विश्व में लगभग 30–35 वर्ष पहले से हो रहा है और भारत सहित अनेकों देशों में इस पद्धति से खेती हो रही है। यह पद्धति भी समय के साथ जैसे–जैसे तकनीकी विकास हो रहा है वैसे–वैसे इसमें नवीन तकनीक इसमें शामिल होकर यह विकसित एवं आधुनिक हो रही है।

कम्प्यूटरीकृत अत्याधुनिक उपकरणों, मशीनरी, सेंसर व कम्प्यूटरीकृत मशीन द्वारा डाटा एकत्रित करने उससे गणना करने व फसल का अवलोकन और सभी नवीन तकनीकों के उपयोग से मिट्टी, फसल, मौसम की सटीक

जानकारी से प्रेसिजन खेती और भी उन्नत हो गयी है। स्मार्ट फोन, ड्रोन, सैटेलाइट व अन्य कम्प्यूटर आधारित उपकरणों/तकनीकों से खेती की यह पद्धति और भी हाईटेक एवं सुविधाजनक हो गयी है।

कृषि अवशेष का हाईटेक तकनीकों द्वारा प्रबंधन

भारत में प्रति वर्ष लगभग 700–800 मि.टन कृषि अवशेष उत्पन्न होता है। इसमें अधिकतर कृषि अवशेष जला दिया जाता है या ऐसे ही नष्ट हो जाता है जिससे बड़ी मात्रा में वायु–प्रदूषण होता है जिससे स्वास्थ्य से सबंधित व अन्य कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार से ऊर्जा के इस महत्त्वपूर्ण स्रोत को जला दिया जाता है। इस संबंध में एक बात उल्लेखनीय है कि खेती के उत्पाद का लगभग 25–40 प्रतिशत का ही हम उपयोग करते हैं और लगभग 60–75 प्रतिशत अवशेष के रूप में होता है जिसे व्यर्थ छोड़ दिया जाता है या जला दिया जाता है।

धान–गेहूँ फसल चक्र में कंबाईन से कटाई के बाद पुआल को न जलाकर रीपर से इकट्ठा करके यूरिया से उपचारित करके पशुओं के चारा के लिए उपयोग किया जा सकता।

हैप्पी–टार्बो सीडर से शून्य जुताई तकनीक द्वारा गेहूँ की बुवाई की की जा सकती है। इसके अलावा नई फसल अवशेष प्रबंधन की एक लाभकारी व पर्यावरण हितैषी तकनीक है जिसका बड़े पैमाने पर अंगीकरण आवश्यक है। अगर कृषि अवशेषों को सही उपयोग किया जाए तो एक अनुमान के अनुसार अपने देश के 50 प्रतिशत ऊर्जा की मांग या 80,000 मेगावाट बिजली का उत्पादन किया जा सकता है। हालांकि बायोमास से बिजली के उत्पादन का अच्छा व विकसित तकनीक भारत के पास है और इससे देश में इसका लगभग 91 प्लांट्स हैं जिससे 500 मेगावाट (लगभग) बिजली का उत्पादन हो रहा है।

अगर देश के सारे बायोमास से ऊर्जा का उत्पादन किया जाए तो ऊर्जा की समस्या के साथ–साथ ग्रामीणों के लिए भारी मात्रा में रोजगार का सृजन हो सकता है। हमें इस संबंध में और भी बहुत विस्तृत अनुसंधान व विकास का कार्य करने की आवश्यकता है। कृषि अवशेष के अन्य वैकल्पिक उपयोग व अन्य उत्पाद बनाने के लिए अनुसंधान, विकास व प्रशिक्षण तथा क्रियान्वयन के लिए नीतिगत निर्णय की आवश्यकता है।

ट्रेंच खेती या गड्ढा खोदकर खेती

ट्रेंच या खाई/गड्ढा खोदकर खेती करने की विधि कई ईलाकों में चल रही है। गन्ना की खेती व अन्य कई फसलों के लिए इसका उपयोग हो रहा है।

अपने देश की रक्षा विभाग की संस्था डी.आर.डी.ओ. रक्षा से संबधित कार्य के अलावा कृषि पर भी विशेष परिस्थिति के लिए कार्य करती है। इसी क्रम में सियाचिन, लेह–लद्दाख जैसे दुर्गम एवं उच्च ऊँचाई वाले जगहों पर सीमा पर तैनात हमारे सिपाही के लिए खाद्य पदार्थ विशेषकर हरी साग सब्जी पहुँचाना बहुत दुष्कर तथा खर्चिला कार्य है क्योंकि ये सारे समान मैदानी क्षेत्रों से जाता है। अतः डी.आर.डी.ओ. ने इसके लिए कई वर्ष अनुसंधान किये और आज लेह एवं लद्दाख जैसे पहाड़ी पर ट्रेंच विधि से फसलों को उगाई जा रही हैं, जहाँ कि फसल की समयावधि बहुत कम है, लम्बी अवधि तक जमा देने वाली ठंड पड़ती है, ठंड के महीने में –25°C से –30°C तक तापमान नीचे चला जाता है। इन परिस्थितियों के लिए डी.आर.डी.ओ. की शाखा अधिक ऊँचाई के लिए रक्षा अनुसंधान संस्थान ने ट्रेंच/ट्रेंच ग्रीन हाउस जैसे हाईटेक कृषि तकनीक का विकास किया जिससे सब्जियाँ, फल जैसे आवश्यक खाद्य पदार्थों का इस दुर्गम क्षेत्र में उत्पादन किया जा सके एवं जिससे स्थानीय लोगों को खाद्य पदार्थ उपलब्ध हो सके और उन्हें आर्थिक लाभ मिले।

इस तकनीक को रक्षा अनुसंधान एवं विकास संस्था के स्थानीय संस्था के साथ स्थानीय कृषि विज्ञान केन्द्र ने भी स्थानीय किसानों को प्रशिक्षित किया, उनके ज्ञान को बढ़ाया और फलस्वरूप आज इस कृषि तकनीक से किसानों को लाभ पहुँचा एवं हमारे सैन्य बलों को ताजा खाद्य पदार्थ समय पर उपलब्ध हो रहा है।

यह तकनीक क्या है तथा कैसे कार्य करता है?

ट्रेंच खेती तकनीक में 15 फीट × 5 फीट × 3 फीट के आकार या 10–12 फीट × 6 फीट × 1½ फीट यानि कि ट्रेंच या खाई कि लम्बाई 10–12 फीट, चौड़ाई 6 फीट एवं गहराई 1½ फीट रखते हैं अपनी सुविधानुसार थोड़ा–बहुत आगे पीछे कोई भी आकार या माप का खाई/ट्रेंच खोद लेते है और यह एक ब्लॉक के रूप में खाई बनाते हैं। एक ब्लॉक में दो ट्रेंच/खाई के बीच 2½ फीट का फासला रखना उचित है जिससे अन्तः शस्य क्रियाएँ जैसे निड़ा–गुड़ाई या अन्य कृषि कार्यों के लिए सुविधाजनक रहे। ट्रेंच की खुदाई करते समय एक बात अवश्य ध्यान में रखना है कि जमीन के सतह का उपरी 6 ईंच का मिट्टी उठा कर अलग रख लें और बाद में उस उपर वाले मिट्टी के साथ 15–20 कि.ग्रा. अच्छी सड़ी खाद मिलाकर ट्रेंच में डाल दें। मृदा आधारित रोग से बचाव के लिए मृदा को फॉर्मलीन से उपचारित करना चाहिए। बुआई से पहले काले अल्कैथीन फिल्म से ट्रेंच को ढककर रखा जाता है ताकि इसका नमी न उड़े और मृदा भी कीड़ों आदि से मुक्त हो जाए। बुआई या पौध रोपण के बाद सभी ट्रेंचों/खाईयों को अल्ट्रवायेलेट स्टेविलाईज्ड पॉलीथिन से ढक देते हैं और रात में एक और काले पॉलीथिन से भी ढक देते हैं तथा इस काली पॉलीथिन को सुबह हटा दिया जाता है जिससे दिन के समय (पुरे दिन धूप रहती है) सूर्य की रोशनी के द्वारा लिया गया तापमान मृदा में रात में बनी रहे जिससे पौध का विकास हो सके। यह तकनीक पौधे को तेज गति से चलने वाले हवा, अधिक वाष्पीकरण, असाधारण तौर पर नमी के नुकसान एवं तापमान में अत्यधिक गिरावट से सुरक्षा देता है।

इस विधि से ऊँचाई पर उगाए गये उत्पाद स्वास्थ्यवर्धक एवं गुणवत्ता युक्त होते हैं। साथ ही उत्पादन का आकार काफी बड़ा भी हो सकता है।

अत्याधिक ऊँचे पहाड़ों पर ट्रेंच खेती का भविष्य व सभावनाएँ

ट्रेंच खेती से होने वाले उत्पाद का सबसे बड़ा खरीददार भारतीय सेना है बाकि स्थानीय बाजारों में बिकता है जिससे किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। पहाड़ों पर इन तकनीक को और ज्यादा व्यापक स्तर पर फैलाने की आवश्यकता है जिससे विभिन्न उपभोक्ताओं के लाभ मिलेगा तथा मैदानी क्षेत्र में भी ताजी सब्जी की आपूर्ति की जा सकेगी है।

डिजिटल तकनीक

आज का युग सूचना तकनीक का है जिससे खेती से संबंधित जानकारी किसान को दी जा रही है। इस तकनीक का तेजी से फैलाव हो रहा है। आज लगभग सभी के पास मोबाईल फोन है और यहाँ तक की किसान भी इसका भरपूर इस्तेमाल कर रहे हैं। कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण मंत्रालय का एम किसान पोर्टल एक अनूठी पहल है जिसके माध्यम से देश के करोड़ों किसान अपना पंजीकरण करके लाभ ले रहे हैं। इसके अति कृषि विकास से जुड़ी तमाम संस्थाएँ अपना–अपना ऐप बनाकर किसानों का मार्गदर्शन कर रही हैं साथ ही किसान कॉल सेन्टर के माध्यम से भी किसानों की समस्याओं का निवारण किया जा रहा है। किसानों के लिए एस एम एस एक जरिया बना है कृषि से संबंधित जानकारी, मौसम से संबंधित जानकारी, बाजार संबंधित जानकारी का और बहुत से किसान इससे लाभान्वित हो रहे हैं। इफको द्वारा इस दिशा में पहल सराहनीय है। आवश्यकता है मोबाईल आधारित ऐप विकसित करने की तथा उनको किसानों तक पहुँचाने की जिससे कम समय में अधिक से अधिक किसानों तक पहुँचा जा सके।

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान किसानों के लिए अपने–अपने संस्थान में टॉल फ्री नंबर हैं जैसे भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल का अपना टॉल फ्री न. 1800–180–1891 है जिससे किसान 10 बजे से 1 बजे तक और 2 से 5 बजे तक किसी भी कार्य दिवस में फोन कर गेहूँ एवं जौ से संबंधित जानकारी ले सकते हैं।

उपसंहार

भारत में भी किसान पंरपरागत खेती के साथ–साथ हाईटेक कृषि को भी अपना रहे हैं। आवश्यकता है हाईटेक खेती से संबंधित ज्ञान एवं कौशल से किसानों को अवगत कराने की। किसानों को प्रशिक्षण, भ्रमण, सेमिनार, सफल गाथा आदि के माध्यम से निपुणता प्रदान करने की। सरकार की विभिन्न योजनाओं के माध्यम से हाईटेक खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है। साथ ही अनुदान भी दिया जा रहा है। इच्छुक किसानों को इन योजनाओं से अवगत करवाकर प्रेरित करने की आवश्यकता है। हाईटेक खेती से जुड़ी सभी पहलुओं की जानकारी किसानों तक पहुँचाने में राज्य कृषि विभाग के अधिकारी व विस्तार कार्यकर्त्ता सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं तभी इसका वास्तविक लाभ किसानों को मिल पाएगा।

यथार्थपरक खेती : आज की आवश्यकता

के. उपाध्याय[1], आर. आर. जाखड़[2], मालु राम यादव[3], हरदेव राम[3] एवं राकेश कुमार[3]

[1]सेम हिगिनबोटम कृषि, विज्ञान एवं तकनीकी संस्थान, इलाहाबाद
[2]स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
[3]भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

कृषि परिस्थितिक तंत्र का निरन्तर ह्रास हो रहा है, जो मृदा के निरन्तर बिगड़ने, जल संसाधनों में कमी, बाढ़, सूखा, कीट, रोगों के बढ़ते क्रम में प्रदर्शित हो रहा है। वहीं दूसरी ओर सामाजिक आर्थिक दृष्टिकोण से प्रति इकाई भूमि, पानी और समय से उत्पादकता बढ़ाना नितान्त आवश्यक कार्य है। वैश्वीकरण मुख्य रूप से विश्व व्यापार संघ (डब्ल्यू. टी.ओ.) के दौर से छोटे एवं सीमान्त कृषकों के सम्मुख अनेक नई चुनौतियाँ सामने आ रही हैं। कुछ अनापेक्षिक चुनौतियाँ भी भविष्य में सामने आ सकती है। जैसे (भूमण्डलीय तपन) एवं इसके प्रभाव के कारण हमारी विविध पारिस्थितिक तंत्र पर प्रभाव सामने आ सकते हैं। यह प्रभाव, परम्परागत फसल क्षेत्रों में परिवर्तन, जलीय–चक्र में सूक्ष्म स्तर पर गडबड़ी एवं फसल मौसम के मध्य अनिश्चित प्रक्रिया के रूप में सामने आ सकते हैं।

यथार्थपरक (Percision Farming) खेती की भारतीय परिप्रेक्ष्य में आवश्यकता

मौजूदा स्थिति से निपटने के लिए कृषि को एक नये प्रारूप की आवश्यकता है। कृषि पारिस्थितिक तंत्र के कुशल प्रबंधन हेतु एवं उसके लिए रणनीति बनाने हेतु जानकारी एवं वैज्ञानिक ज्ञान को आपस में जोड़ने की आवश्यकता है। ऐसा करने से प्रकाश, पानी एवं पोषक तत्वों का उपयोग सही हो सकेगा। कृषि को अधिक आदान आधारित से इष्टतम् आदान आधारित खेती में परिवर्तित करने की आवश्यकता है। ऐसा तभी सम्भव हो सकता है, जब सूचना–जानकारी, ज्ञान एवं संसाधनों की दक्षता का उपयोग करने की रणनीति का उचित उपयोग किया जाये। भारत में कृषि जोत के कम होने सके कारण छोटे एवं सीमान्त कृषकों की अधिकता के कारण हमारी कृषि पद्धति मूलरूप से विखण्डित है। यथार्थपरक खेती में भी मूलरूप से सूक्ष्म स्तर पर खेती के प्रबंधन की रणनीति व्यवहार में लाई जाती है। इस प्रबंधन नीति में मृदा, फसलें, पानी, रसायनों, बाजार तक पहुँचने से सम्बंधित जानकारियों का उपयोग किया जाता है। वर्तमान में भारतीय कृषि स्थिति को देखते हुये यथार्थपरक खेती बिल्कुल आवश्यक है। गरीबी कम करने एवं भारतीय जनसंख्या के एक बड़े भाग के लिए खाद्य सुरक्षा को सुरक्षित करने में सहायता मिलेगी। उदाहरण के लिए आज उड़ीसा का एक औसतम किसान 1 हैक्टर क्षेत्र से 1 टन से कुछ अधिक धान पैदाकर रहा है। यदि वह एक हैक्टर से 1 टन के बजाए 4 टन उत्पादित करता है, तो उसके पास बेचने के लिए 3 टन धान होगा। साथ ही उसके हाथ में अधिक पैसा भी होगा।

यथार्थपरक खेती क्या है ?

आजकल सूचना तकनीक सहित विभिन्न नवीन तकनीकों का उपयोग खेतों में प्रबंधन के लिए किया जा रहा है। इससे उत्तम प्रबंधन एवं आर्थिक दक्षता के सुधार में सहायता मिली है। आधुनिक युग में सूक्ष्म तकनीक के बढ़ते आयाम ने फसल उत्पादन प्रबंधन एवं निर्णय लेने के कई रास्ते खोल दिये हैं। यही सोच यथार्थपरक खेती (Percision Farming) की अवधारणा में परिलक्षित होती हैं।

"प्रत्येक खेत में पाये जाने वाली परिस्थितियों के अनुरूप मृदा एवं फसल प्रबंधन का सावधानीपूर्वक नियोजन ही यथार्थपरक खेती का आशय हैं।''

यथार्थपरक खेती, एक स्थान विशेश हेतु फसल उत्पादन प्रबंधन पद्धति है जिससे निम्न उद्देश्यों की पूर्ति होती है :

- फसल उत्पादन एवं उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार।
- खेती की लागत में कमी।
- पर्यावर्णीय प्रदूषण में कमी और खेती की तकनीक के अभिलेखिकरण में सुधार।

यर्थाथ खेती को कभी–कभी स्थल विशिष्ट खेती (Site specific Farming) अथवा परिवर्तनीय दर तकनीक (Variable rate technology) की भी संज्ञा दी जाती है। यथार्थपरक खेती में कृषि को अंतरिक्ष युग में ले गई है। यह

रिमोट सेंन्सिग भौगोलिक सूचना प्रणाली जी आई एस एवं भूमंडलीय सूचना प्रणाली ग्लोबल इंफोरमैशन सिस्टम पर आधारित होती है।

कृषकों के लिए आजकल आंकड़े एकत्रित करना एवं इन आकड़ों को विभिन्न स्त्रोतों से उपलब्ध कराना अथवा किसी स्थान से सम्बंधित जानकारी का प्रसारण जैसी सुविधाएं आसानी से उपलब्ध हैं। उपग्रह से प्राप्त आंकड़ों का किसान विश्लेषण कर सकते हैं अथवा किसी कम्पनी द्वारा किये जाने वाले इस कार्य का उपयोग करना होगा। यर्थाथ पूरक खेती का किसानो के लिए वास्तविक महत्व यह है कि वह सटीक जानकारियों के उपयोग से अपनी आय को बढ़ा सकता है। सटीक जानकारियों के आधार पर किसान अपने खेत में भू–परिष्करण/जुताई की क्रियाओं को उत्तम समय पर कर सकता है। बीज दर का उचित निर्धारित कर सकता है। पौध सुरक्षा हेतु उत्तम एंव सटीक नियोजन कर सकता है और अपने खेत में मौजूद उपज की विभिन्नता को भी पहचान सकता है। इस खेती में विभिन्न क्यारियों की जानकारी के आधार पर क्रियान्वित कर कृषक अपनी फसल का उत्पादन, उत्पादकता एवं आय में वृद्धि कर सकता है। आज तकनीक यहाँ तक विकसित हो चुकी है कि फसल उत्पादन एवं उत्पादकता के विभिन्न आदानों के उपयोग की दर को नियंत्रित किया जा सकता है। आधुनिक तकनीक की सहायता से खेत के प्रत्येक 3 फीट के अन्तराल पर आए परिवर्तन की निगरानी की जा सकती है। कृषकों को यह स्थल–विशिष्ट जानकारी विभिन्न स्त्रोतों द्वारा उचित मूल्य पर प्रदान की जाती है। कीटनाशक, कवकनाशक, खरपतवारनाशक अथवा अन्य कृषि रसायनों का उपयोग केवल उन्हीं स्थानों पर किया जाता है जहाँ कीटो, रोगों अथवा खरपतवारों से ग्रसित हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि इनका उपयोग पूरे खेत में करने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार इन कृषि रसायनों के उपयोग की मात्रा में कमी होती है, अन्यथा मिट्टी, जल एवं पर्यावरण को काफी क्षति पहुँचा सकते हैं। इसी प्रकार उर्वरकों, चूना या अन्य आदानों को केवल वहीं उपयोग किया जा सकता है, जहाँ उनकी आवश्यकता है। ऐसा करने से कृषि लागत में कमी होगी। उपलब्ध तकनीक की सहायता से फल उत्पादन की निगरानी भी की जा सकती है। यह कार्य नक्शा तैयार करके किया जा सकता है, जो अधिक एवं कम उत्पादन क्षेत्रों को चिन्हित कर सकता है। नक्शे के आधार पर प्रबंधन के निर्णय लिये जा सकते हैं, जिससे अन्ततः उत्पादन में वृद्धि होती है, चूंकि इस तकनीक के उपयोग से कम लागत में अधिक उत्पादन प्राप्त होती है, अतः व्यय स्वतः कम हो जाता है।

यथार्थपरक खेती की तकनीक

यथार्थपरक खेती की तकनीक के पाँच अवयव हैं। इन अवयवों की जानकारियों का विभिन्न कृषि कार्य–कलापों में उपयोग करके लागत में कमी की और उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है, ये अवयव निम्नवत है, भौगोलिक सूचना प्रणाली, जी.पी.एस., सेन्सर्स (इंद्रिय), परिवर्तनीय दर तकनीक एवं उपज निगरानी। यर्थाथ पूरक खेती में सूचना तकनीकी एवं निर्णय नियोजन दोनों का विशिष्ट महत्व है। जी.आई.एस, जी.पी.एस. और सेन्सर्स के माध्यम से हमें फसल उत्पादन में वृद्धि हेतु विभिन्न जानकारियाँ प्राप्त होती हैं। इन प्राप्त जानकारियों के आधार पर कृषि क्रियाओं में किये गये परिवर्तन (क्रियान्वयन) के फलस्वरूप कृषि लागत में कमी एवं उपज में वृद्धि होती है। इस तकनीक के विभिन्न आयामों की जानकारी का उल्लेख नीचे किया गया है

जानकारी

यथार्थपरक खेती को अपनाने के लिए विभिन्न जानकारियों का होना नितान्त आवश्यक है। समय और सटीकता से इन जानकारियों का उपलब्ध होना आज के आधुनिक किसान के लिए सबसे मूल्यवान संसाधन है। जानकारी की उपलब्धता में निम्न से सम्बंधित आंकड़ों का समावेश होना चाहिए। जैसे फसल गुण, शंकर प्रभाव, मृदा गुण, उर्वरता की आवश्यकताएं, मौसम पूर्वानुमान, कीट–रोग एवं खरपतवारों की तादाद, पौध वृद्धि के प्रभाव, प्राप्त योग्य उपज, कटाई उपरान्त प्रक्रिया एवं बाजार पूर्वानुमान आदि। यथार्थपरक खेती में फसलोत्पादन के प्रत्येक चरण कृषक को इन जानकारियों का आवश्यक रूप से प्राप्त कर उनका विश्लेषण एवं उनका उपयोग करना चाहिए। आजकल इन्टरनेट में सम्बंधित आंकड़ें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। इन आंकड़ों तक सुगमता एवं शीघ्रता से पहुँचा जा सकता है, और नवीन आंकड़ों को शीघ्रता से जोड़ा जा सकता है।

तकनीक

कृषकों, कृषि वैज्ञानिकों एवं तकनीकीविदों को यह आंकलन करना चाहिए कि नवीन तकनीकों को खेती में कैसे उपयोग में लाया जाए? इन्हें कैसे क्रियान्वित किया जाए? उदाहरणार्थ इन आंकड़ों या तकनीक के संधारण, विश्लेषण एवं प्रबंधन हेतु कम्प्यूटर का उपयोग किया जा सकता है। कम्प्यूटर में इनका संधारण सुगम है। इसके अलावा विगत वर्षों की सम्बधित जानकारियों तक सुगमता से पहुँचा जा सकता है। आजकल इन आंकड़ों का संधारण, विश्लेषण एवं उपयोग से सम्बंधित कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर सुगमता से मिल जाते हैं। कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर में स्प्रेड शीट्स, डाटाबेसेस, जीआईएस एवं उपयोग करने के अन्य सॉफ्टवेयर्स समाहित होते हैं। इन्हें आसानी से चलाकर उपयोग में लाया जा सकता है।

भूमंडलीय सूचना प्रणाली (जीआईएस)

यह एक कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर है, जो आंकड़ों का संधारण, मरम्मत एवं उन्हें खेत के स्तर पर रूपान्तरित करने का कार्य करता है। यर्थाथ खेती हेतु जीआईएस सॉफ्टवेयर में भूमि सम्बंधित आंकड़ें भण्डारित कर सकते है। जैसे मृदा का प्रकार एवं मृदा में मौजूद पोषक तत्वों का स्तर मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों को भूमि की सतह वार भी संधारित कर सकते हैं। इन सभी जानकारियों को हम किसी खेत के विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार भी संधारित कर सकते हैं। एक पूर्ण रूप से कार्यशील जीआईएस का उपयोग भूमि के विभिन्न स्तरों के मध्य गुणों के विश्लेषण के लिए किया जा सकता है। इससे अन्य प्रबंधीय विकल्पों को अपनाने के लिए नक्शा तैयार किया जा सकता है। खेती की स्थिति का कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर में संधारण सामान्यतः उसके अक्षांश एवं देशांतर के द्वारा किया जा सकता है। यह जानकारी केवल जीपीएस के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। खेत में पोषक तत्वों के स्तर में परिवर्तन, मृदा प्रकार, स्थलाकृति, कीट, रोग एवं खरपतवारों के प्रकोप एवं उपज में परिवर्तन आदि को प्रदर्शित करते हुए कई नक्शों बनाये जा सकते हैं। नक्शे के आधार पर ही यथार्थपरक खेती में विभिन्न क्रियाओं का क्रियान्वयन किया जाता है।

भूमंडलीय स्थापन प्रणाली (जी.पी.एस.)

यह कई सैटेलाईट का एक सेट होता है, जो पृथ्वी की कक्षा में ऊँचाई पर स्थित होता है। ये सैटेलाइटस निरंतर रेडियो सिगनल्स का प्रसारण करते रहते हैं, जो विशेष उपकरणों के द्वारा इकट्ठा किया जाता है। एक जीपीएस के प्राप्तकर्त्ता को पृथ्वी पर उसकी स्थिति का निर्धारण करने हेतु चार सैटेलाइट्स की आवश्यकता होती है। जीपीएस जैसे उपकरण की यह मूल आवश्यकता है कि वह किसी विशिष्ट स्थिति पर बार–बार वापस आने में पूर्ण रूप से सक्षम है। मृदा नमुने के परीक्षण से हमें ज्ञात होता है कि कितनी उर्वरक की आवश्यकता है परन्तु यह भी आवश्यक है कि उर्वरक बिखेरने वाले यंत्र इसे सही मात्रा में, सही स्थान पर डालें। इस प्रकार जीपीएस के माध्यम से विशिष्ट स्थिति के कई आंकड़ें एवं मापने लिये जा सकते हैं। जीपीएस से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर जीआईएस के उपयोग से खेत के नक्शे तैयार किये जा सकते हैं। इसका उपयोग खेत में प्रबंधन निर्णय के लिए आंकड़ें एवं उसके प्रभाव की जानकारी उपलब्ध कराने में होता है।

सेन्सर्स

इनका उपयोग फसलों के विभिन्न प्रकार के तनाव, मृदा गुण, कीट–रोग एवं खरपतवारों के अतिक्रमण को ज्ञात करने के लिए किया जाता है। इनका उपयोग मृदा–गुण एवं फसल गुणों के मापन में उपयोग किया जा सकता है। सेन्सर्स युक्त ट्रैक्टर खेत में गुजरता है, ये मृदा एवं फसल सम्बंधित आंकड़ों का मापन कर लेता है। सेन्सर्स को पैदल खेत में ले जाकर भी आंकड़ें प्राप्त किये जा सकते हैं। आजकल उत्पादन की निगरानी करने वाली प्राथमिक सेन्सर्स पद्धति मापन करने में प्रयुक्त किये जा रहे हैं। विकसित देशों में व्यवसायिक सेन्सर्स पद्धति उपलब्ध हैं, जो यह दावा करते हैं कि मृदा के गुणों का मापन कर सकते हैं और उनके अनुसार परिवर्तनीय दरों का निर्धारण कर सकते हैं।

यथार्थ परक खेती में 3 सामान्य तकनीकों का उपयोग किया जाता है। इन तकनीकों को ''सेट ऑफ टूल्स'' भी कहते हैं, जो फसल, मृदा एवं पोजीशनिंग सेन्सर्स हैं। इन सेन्सर्स को वाहन पर भी जड़ा जा सकता है अथवा ये दूर भी रखे जा सकते हैं। ये मृदा विन्यास, मृदा नमी का स्तर, फसल तनाव, रोग एवं खरपतवार अतिक्रमण का पता लगा लेते हैं। कृषि आदानों को डालने की दर उनको मिश्रित करना, पानी एवं बीज को डालने की स्थिति, पोषक तत्व या रसायनों की मात्रा को परिवर्तित किया जा सकता है।

कम्प्यूटर आधारित पद्धति से जीआईएस नक्शे और आंकड़ों की सहायता से सेन्सर्स का उपयोग विशिष्ट मशीनों की सहायता से कृषि आदानों को परिवर्तनीय दर पर डाला जाता है जितना उस स्थान विशेष के लिए आवश्यक है।

निर्णय निर्धारण प्रबंधन

निर्णय निर्धारण में पारम्परागत प्रबंधन तकनीक एवं यथार्थपरक खेती के साधनों का समावेश किया जाता है। इससे किसान को अपने उत्पादन हेतु सबसे अच्छे प्रबंधकीय विकल्प या नुस्खे प्राप्त होते हैं। कभी–कभी ये निर्णय निर्धारण (प्रबंधन) या तो अविश्वसनीय होते हैं अथवा इसको समझाना कठिन होता है। इसलिए यर्थाथ पूरक खेती की इस तकनीक में कृषि आदानों व अधिकतम उत्पादन के मध्य सम्बंधों के आंकड़े एकत्रित किये जाने की आवश्यकता है। विश्लेषण करने वाले उपकरणों/साधनों के परिष्करण एवं स्थानीय स्तर पर सस्य क्रियाओं के ज्ञान को बढ़ाये जाने की आवश्यकता है। अधिकतर कृषि शोधकर्त्ता यह मानते हैं कि यथार्थपरक खेती में निर्णय निर्धारण का पहलू सबसे कम विकसित है।

यथार्थपरक खेती अपनाने के कुछ उदारहण

खरपतवार नियंत्रण

फसल की प्रक्रिया में यथार्थपरक खेती के अन्तर्गत खरपतवार नियंत्रण भी प्रभावशाली ढंग से किया जाता है। परम्परागत रूप से खरपतवार नियंत्रण के लिए पूरे खेत में समान रूप से खरपतवारनाशकों का छिड़काव किया जाता है, परन्तु ऐसे क्षेत्र जहाँ खेत में खरपतवार नहीं है, वहाँ पर खरपतवार नाशकों को डालने की आवश्यकता नहीं होती हैं। खरपतवारों की उपस्थिति के अनुसार खरपतवार–नाशकों में डालने से न केवल कम शाकनाशी की मात्रा की आवश्यकता पड़ेगी अपितु अनावश्यक रूप से पर्यावरण में शाकनाशी की मात्रा को भी रोका जा सकता है। खरपतवारों को पहचाननें की स्वचालित तकनीक का विकास किया गया है। दूसरी ओर, चित्र विश्लेषण पद्धति (इमेज एनालसिंस सिस्टम) में सीसीडी कैमरों का उपयोग किया जाता है। इसके लिए एक कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर का भी उपयोग किया जाता है। जो खरपतवारों की विभिन्न प्रजातियों के संगठन की पहचान करता है, और यह खरपतवार के पौधों को फसल के पौधों से पहचान करता है। खरपतवारों की पहचान उनके रंग, आकार, विन्यास के गुण आदि के आधार पर किया जाता है। वहीं दूसरी ओर ऑटो इलेक्ट्रानिक सेन्सर्स एक विशिष्ट सीमा में प्रकाश तरंगों की लम्बाई के परावर्तन करते है। चुकन्दर, मक्का, गेंहूँ और जौ स्थल विशेष आधारित खरपतवार नियंत्रण का जर्मनी में किया गया है। यह पद्धति डिजिटल, इमेज रग्यलिर जिसके माध्यम से खरपतवारों को पहचानने की ऑन–लाइन सुविधा उपलब्ध है। इस पद्धति में कम्प्यूटर आधारित निर्णय निर्धारण सुविधा उपलब्ध है। इस पद्धति में कम्प्यूटर निर्णय निर्धारण एवं जीपीएस नियंत्रित टुकड़ों में शाकनाशी छिड़काव की सुविधा उपलब्ध है। इस पद्धति के उपयोग से सभी फसलों में आर्थिक लाभ प्राप्त हुआ है। इसमें खरपतवारों की संख्या के आधार पर विभिन्न स्थानों में अलग–अलग मात्राओं में खरपतवारनाशकों का उपयोग किया गया। फसल उत्पादन के अन्य क्षेत्रों में भी यथार्थपरक खेती की विशिष्ट विधियां विकसित की गई हैं। इनमें से कुछ विधियों में इलैक्ट्रोमैग्नेटिक तरंगों का उपयोग मृदा गुणों की पहचान करने, रिमोंट सेंसिंग एवं सिमुलेशन आधारित स्थल विशिष्ट नाइट्रोजन उपयोग करने, यांत्रिक सेंसर्स आधारित फसल भार ज्ञात करने एवं धान्य फसलों के लिए स्थल विशिष्ट बोआई हेतु बीज दर निर्धारण की विधियां शामिल हैं।

नाइट्रोजन का उपयोग

यथार्थपरक खेती में नाइट्रोजन का उपयोग **'क्लोरोफिल फ्लोरेसेन्स'** मापने के उपयोग से किया जाता है। इस विधि से नाइट्रोजन स्तर की जाँच में मशीनें पौधों के सम्पर्क में नहीं आती है। बल्कि, लेजर–प्रेरित क्लोरोफिल फ्लोरोसेंट पहचान का उपयोग किया जाता है। ये पौधों में मौजूद नाइट्रोजन की सान्द्रता का सूचक होता है। इस विधि का उपयोग गेहूँ एवं मक्का में किया जा सकता है। विभिन्न प्रयोगों के परिणाम इंगित करते हैं कि नाइट्रोजन का पौधों द्वारा अवशोषित क्लोरोफिल फ्लोरोसेन्ट मापन विश्वसनीय रूप से किया जा सकता हैं।

कृषि के विकास में आधुनिक प्रौद्योगिकी की महत्त्वपूर्ण भूमिका

रिंकी, पंकज कुमार सिंह, नवीन एवं वनीता पाण्डेय
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2050 तक विश्व की जनसंख्या 9.6 अरब पहुँच जाएगी। इस बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए हमें एक बड़ी चुनौती का सामना करना पड़ सकता है। पर्याप्त भोजन उत्पादन के लिए आवश्यकता है, खाद्य उत्पादन के ऐसे अनूठे तरीकों की जिससे सीमित क्षेत्र में अत्यधिक खाद्यान्न का उत्पादन हो सके। प्रारम्भ में चली आ रही कृषि पद्धतियाँ विश्व खाद्य उत्पादन में अपनी पहचान बना पाने में समर्थ नहीं थीं, क्योंकि इनकी उत्पादन लागत परम्परागत कृषि पद्धतियों की तुलना में अधिक थी। परंतु आज उभरती हुई ऊर्जा कुशल प्रणालियों जैसे कि लंबवत खेती (वर्टीकल फार्मिंग), बंद पात्र में खेती, तथा तकनीक केन्द्रित उद्यमियों के प्रयासों के फलस्वरूप इन आधुनिक पद्धतियों का प्रयोग बढ़ा है।

जैसा कि हम जानते हैं कि कृषि एक प्राचीन उद्योग भी है किन्तु भोजन के प्रति आज की दुनिया की बदलती हुई पसंद ने इसे एक आधुनिक रूप दे दिया है। ये प्रौद्योगिकियाँ न केवल बढ़ती हुई आवश्यकता की आपूर्ति में समक्ष हैं अपितु किसानों को आर्थिक रूप से भी सुदृढ़ बनाने वाली है।

वैश्विक स्तर पर दिन–प्रतिदिन बढ़ती हुई भोज्य पदार्थों की मांग को देखते हुए ऐसे तरीके इस्तेमाल किए जा रहे हैं जिससे साल भर जरूरत के अनुसार कोई भी फल एवं सब्जी पर्याप्त मात्रा में उगाई जा सकती है। इनमें कुछ इस प्रकार हैं :–

1. सेंसर :–सेंसर किसानों को खेती से संबधित कई महत्त्वपूर्ण जानकारी देता है। सही समय की जानकारी, ट्रेस करने की क्षमता उनकी फसल, पशुधन तथा उपकरणों का आंकड़ा प्रदान करने में सहायक हैं। सेंसर में एक खास बात यह है कि यह आंकड़ों को मैन्युअल रिकार्ड किए बिना भी उसका विश्लेषण एवं निश्कर्षण करता है। आज यही कारण है कि अत्याधुनिक संेसर की यर्थाथता तथा सटीक प्रदर्शन के कारण वैज्ञानिक मृदा तथा मौसम की स्थिति को फसल की स्थिति से जोड़कर कृषि संबधित आवश्यक जानकारी देने समक्ष हो गए हैं।

कुछ महत्त्वपूर्ण संेसर निम्नवत है जिससे कुछ विशेष कार्यों का निष्पादन होता है।

- **वायु एवं मृदा सेंसर** :– ये सेंसर हवा, पानी तथा मृदा की परिस्थितियों को समझने में सहायक होते हैं।
- **लाइव स्टोक बायोमेट्रिक** :– इसमें कॉलर जिसमें जी.पी.एस आर. एफ. आई. डी तथा बायोमैट्रिक्स (जैवमितिय) लगे होते हैं। वह पशुधन के स्वास्थ्य तथा जरूरतों के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारी देते हैं।
- **फसल सेंसर** :– ये संेसर खेत में उर्वरक की सही मात्रा में उपयोग करने के सही समय के बारे में भी हमें अवगत कराते हैं।
- **उपकरण टेलीमेटिक्स** :– इस प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल उपकरणों को एक निश्चित दूरी से नियंत्रित करने के लिए किया जाता है।

2. भोज्य पदार्थ :– ऐसा अनुमान है कि आगे आने वाले समय में खाद्य पदार्थ सीधे आनुवंशिक परिवर्तनों से उत्पादित किये जायेंगें तथा उनको प्रयोगशाला में ही बनाया जाएगा। कुछ वैज्ञानिक भोजन की नई स्ट्रेन बनाने की बातें करते हैं जो पूर्णतः कृत्रि तरीकों द्वारा रचित होंगी।

3. स्वचालन तथा यांत्रिक अभियांत्रिकी :– स्वचालित यंत्र भविष्य में बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किए जाऐंगें। रोबोट तथा छोटे रोबोट फसलों की जांच एवं रखरखाव के लिए व्यापक रूप से किया जाएगा।

इस प्रकार अतिव्यापी आदानों को कम कर बीज, शाकनाशी, सूक्ष्म पोषक तत्वों तथा उर्वरकों पर होने वाले अतिरिक्त व्यय को कम करके भविष्य के लिए में खेती के मुनाफे का व्यवसाय बनाया जाएगा। जैसा कि हम जानते हैं कि प्रौद्योगिकी ने हमेशा सभ्यता के विकास में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रौद्योगिकी ने खेती के तरीकों को बदल कर कृषि को एक नया रूप दिया है।

ये सब नवीनतम तरीके कृषि के एक सतत् भविष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है। प्रस्तुत लेख में हम कृषि से संबंधित कुछ ऐसी ही उच्च तकनीकी प्रौद्योगिकियों के बारे में चर्चा करेंगें जो वैश्विक कृषि को एक नए आयाम तक पहुँचा कर दुनिया के सभी विकासशील देशों को अन्नोत्पादन में आत्म निर्भर बनाएगी।

रोबोटिक खेती :— जापान, जर्मनी सहित कई देशों में वैज्ञानिकों ने ऐसे रोबोट बनाए हैं जो अत्याधुनिक लेजर सेंसर का प्रयोग कर सेंसर व नियंत्रण के बीच एक ऐसा नेटवर्क बनाते हैं जो खेत की सही स्थिति की जानकारी देते हैं। यह सुखी तथा दलदली दोनों प्रकार की मृदा स्थितियों में उपयोग किये जा सकते हैं। ए.जी.ऐंट एक ऐसी रोबोट है जो समूह में कार्य करता है। ये रोबोट खेत में घुम—घुमकर खरपतवार को तरीके से इकट्ठे कर नष्ट करते हैं। फ्रांस में बना 'वाइन बोट' एक ऐसा स्वचालित रोबोट है जो अंगुर की खेतों की छटाई करने में निपुण हैं।

आज श्रमिकों की अस्थिता एवं सिमटते संख्या के कारण नर्सरी उद्योग में भी समय तथा श्रम को बचाने के लिए 'नर्सरी रोबोट' का प्रयोग किया जा रहा है। रोलिंग टायर, ग्रिपर हथियारों वाले ये रोबोट पौधों को उठाने एवं सही जगह पर ले जाने के लिए सेंसर का प्रयोग करते हैं।

'**हेमस्तर रोबोट**' एक ऐसा रोबोट है जो जी.पी.एस. तथा वाई—फाई प्रौद्योगिकी के प्रयोग द्वारा मिट्टी संरचना, तापमान नमी तथा पौधे के स्वास्थ्य की सही जानकारी किसान को देता है।

वर्टीकल फार्मिंग :— भविष्य में बहुमंजिली इमारतों में खड़ी खेती के माध्यम से कृषि के प्राकृतिक वातावरण को प्रतिलिपित किया जाएगा। यह ग्रीन हाउस जैसी ही तकनीक द्वारा किया जाएगा, किन्तु बड़े स्तर पर हमारे संसाधन सीमित हैं, इसलिए भविष्य में ऐसी ही एक तकनीक द्वारा टिकाऊ कृषि प्रौद्योगिकी को समर्थन देने की आवश्यकता है जो भविष्य में संसार को सही मामले में स्थिरता प्रदान करें।

सुधार के नए अवसर :— 'चट्नों पर वनस्पति' स्टर्लिंग फार्म रिसर्च और सर्विसिज (एस.आर.एफ.एस) द्वारा प्रस्तुत एक उदाहरण हैं —
'केरल' जैसा कि हम जानते हैं "नारियल के पेड़ों की भूमि" के नाम से प्रसिद्व राज्य है जहां 'कॉचर फाइबर' का निपटान एक बड़ी समस्या थी। फेंके गए भूसे से भूमि तथा जल प्रदूषण बढ़ रहा था, ऐसे समय में एस. आर. एफ. एस. ने इस कचरे को उपयोग करके एक क्रान्तिकारी उत्पाद बनाया, जिसे 'नियोपिट' कहा गया। यह एक ऐसा पर्यावरण हितैशी जैव मृदा कंडीशनर है, जिसकी जल धारण क्षमता मृदा की तुलना में 500—600 प्रतिशत अधिक है जो 'ग्रीन हाउस' खेती के लिए सबसे अच्छा माध्यम है। एस.आर.एफ.एस. ने 'नियोपिट' का इस्तेमाल कर बेमौसम

टमाटर, ककड़ी, मिर्च, तरबूज, स्ट्रॉबेरी, गेंदा, गुलाब इत्यादि का उत्पादन किया तथा उनको 30 देशों में निर्यात भी किया। एस.आर.एफ.एस. की इस उपलब्धि के लिए राष्ट्रपति ने 'सर्वश्रेष्ठ अनुसंधान एवं विकास पुरस्कार से नवाजा। निकट भविष्य में हमें ऐसे ही तरीकों की खोज करनी है जो पारम्परिक विधि से अलग हटकर परिणाम दें। साथ ही वर्तमान कृषि से उपजी किसी जटिल समस्या का समाधान भी दे।

शिशिल चंद्रण –जिन्हें उच्च तकनीक खेती के राजा के नाम से प्रसिद्धि मिली, वर्ष 2012–13 में उच्च तकनीक किसान पुरस्कार के विजेता रहे जो कि तिरूअन्तपुरम में डी.जे.एम. हाइटेक फार्म के मालिक हैं। इन्होंने नवीनतम प्रौद्योगिकी के द्वारा ककड़ी, शिमला मिर्च, पपीता, टमाटर, लौकी की भिन्न–भिन्न किस्मों को अपनी हाईटेक खेती द्वारा उगाकर परम्परागत खेती की तुलना में 10 गुणा अधिक पैदावार प्राप्त की है। यह स्मार्ट फार्म मॉड्यूल नमी, जल, वायु परिसंचारण कार्बनडाईआक्साईड तथा मृदा इत्यादि सभी कारकों को ध्यान में रखते हुए सेटिंग में बदलाव करके एस.एम.एस. भेजता है। यह पूरी तरह से स्वचालित है।

विश्व के विकसित देशों में तो हाईटेक कृषि और भी तेज रफ्तार से अपना पांव फैला रही है। न्यूयॉर्क शहर में सिंचाई के लिए वर्षा के पानी को इकट्ठा करके इस्तेमाल किया जाता है। फसल को कीड़ों से बचाने के लिए रसायनों के लिए जगह लेडीबग तथा 'वास्प' का प्रयोग किया जा रहा है। मृदा में पौधे उगाने की जगह ये लोग कंम्यूटर संचालित '**हाइड्रोपोनिक्स**' प्रणाली का प्रयोग कर रहे हैं जो कि लगातार वातावरण की दशा को दर्शाता है तथा आवश्यकता के अनुसार प्रकाश, छाया, हवा, गर्मी तथा सिचांई को स्वतः ही नियंत्रित करता है।

इतनी हाइटेक प्रणाली के लिए इस्तेमाल होने वाली बिजली सौर पैनलों द्वारा पैदा की जाती है ताकि लागत को कम किया जा सके। इस प्रकार बनाया गया कृत्रिम हरित गृह (ग्रीन हाउस) एल. ई. डी. प्रकाश पैसिव वेंटिलेशन, थर्मल कर्टन का कुशलतापूर्वक इस्तेमाल करके मृदा आधारित कृषि की तुलना में 10 गुणा पानी की बचत कर उत्पादन को बढ़ाता है तथा बैमौसमी सब्जियों व फलों को सालभर बाजार में उपलब्ध कराता है।

जापान में दुनिया का सबसे बड़ा 'इनडोर कृषि कारखाना' चल रहा है। वर्ष 2011 में इस्तेमाल होने वाली तकनीकी खेती पांरपरिक खेती की अपेक्षा 20 गुणा ज्यादा उत्पादन देती है तथा 92 प्रतिशत कम पानी का इस्तेमाल करती है।

स्वीडन में तो वर्टीकल फार्मिंग द्वारा 117 फूट ऊँची गगनचुंबी इमारत की हर मंजिल पर हरी पत्तेदार सब्जियाँ उगाने की योजना बनाई जा रही है। हालांकि इनकी सफलता पर संदेह भी जताया जा रहा है। किंतु यहाँ पर सब 'पिंक हाउस' संकल्पना पर आधारित होगा। पारम्परिक फ्लूयोरोसेंट लैंप के स्थान पर नीले व लाल रंग की एल. ई. डी. प्रकाश में सलाद की पत्ती अधिक तीव्रता से बढ़ती है। ग्रीन हाउस के पश्चात् पिंक हाउस का यह सिद्वांत उत्पादन बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

सिंगापुर में तो किसान कृषि को उच्च तकनीकों तथा उच्च उपजाऊ तरीकों के इस्तेमाल द्वारा एक आकर्षक व्यवसाय बनाने की और अग्रसर हैं। इंदौर वर्टीकल फार्म में खड़ी परतों में सब्जी उत्पादन के साथ ही ये लोग ऐसी मछलियाँ पाल रहे हैं जो कि जलीय बीमारियों के प्रति काफी मजबूत / प्रतिरोधी हैं। यहाँ के किसान पांरपरिक खेती की सीमाओं को पार करने के तरीकों की खोज में जुटे हैं।

'डिजाइनर मॉडयूल' का प्रयोग कर के पौधों को 14–22°c (डिग्री सेन्टीग्रेड) तापमान पर रोलिंग रैक में एक दूसरे से सटा कर रखा जाता है ताकि प्रकाश का अधिकतम अवशोषण हो सके। वर्ष 2014 से यहाँ किसान इसी हाईटेक पद्वति द्वारा सब्जियाँ उगा रहे हैं। पौधे उगाने वाले क्षेत्र में जाने से पहले ये लोग 'जंपसूत' पहनते हैं तथा धूल के कणों से सब्जियों को बचाने के लिए तेज हवा वाले फूहारे का प्रयोग किया जाता है। आज के बढ़ते प्रौद्योगिक परिदृश्य में कृषि भी 'स्मार्ट' बन रही है। जलवायु स्मार्ट कृषि को निकट भविष्य की एक अहम जरूरत के रूप में देखा जा रहा है, अतः उत्पादकता को बढ़ाने 'ग्रीन हाउस' गैसों के प्रभाव को कम करने एवं बढ़ती हुई जनसंख्या के मद्धेनजर खाद्य आपूर्ति, आजीविका एवं जनसुरक्षा के लिए यह एक मात्र सतत् विकल्प हैं।

कृषि में नैनोटेक्नोलोजी की भूमिका : एक परिदृश्य

प्रियंका चन्द्रा, पंकज कुमार सिंह एवं डी. पी. सिंह

फसल सुरक्षा अनुभाग, भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

हमारे देश की लगातार बढ़ती जनसंख्या (130 करोड़) के लिए अधिक अन्न उत्पादन की आवश्यकता है। यह वृद्धि अधिक भूमि पर कृषि करने से संभव हो सकती है, परन्तु भारत में पहले से ही खेती के लिए भूमि की उपलब्धता कम होती जा रही है क्योंकि बढ़ती आबादी के साथ विकास के अन्य कार्यों में भूमिका उपयोग हो रहा है। अतः कृषि के लिए और अधिक भूमि की उपलब्धता संभव नहीं है। हमारे देश की अधिकांश जनसंख्या अपने जीवनयापन के लिए कृषि पर निर्भर है, इसलिए कृषि क्षेत्र में लोगों की आय भी बढ़ानी चाहिए जिससे कि जीवन स्तर में सुधार हो सके एवं भूखमरी की समस्या का समाधान हो सके। कृषि से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए हमें नई एवं समुचित वैज्ञानिक प्रबन्धन प्रणालियों को अपनाना होगा। सम्पूर्ण जीवनयापन के लिए मिश्रित खेती, अंतः फसलीकरण तथा एकीकृत कृषि प्रणालियों को अपनाने के साथ–साथ कृषि के क्षेत्र में नित्य नए अनुसंधान एवं तकनीकों को समझना एवं अपनाना होता है, जिसमें जैवप्रौद्योगिकी (बायोटेक्नोलोजी) एवं नैनोटक्नोलोजी द्वारा कृषि के क्षेत्र में बढ़ते विकास एक सराहनीय प्रगति है। प्रस्तुत आलेख में कृषि में नैनोटेक्नोलोजी की भूमिका और महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है। यूरोपीय आयोग ने नैनोटेक्नोलोजी को छह में एक "कुंजी सक्षम टेक्नोलोजी" के रूप में मान्यता दी है। नैनोटेक्नोलोजी कृषि के साथ–साथ उद्योग के कई अन्य क्षेत्रों में सतत् प्रतिस्पर्धा और विकास में योगदान कर रही है।

नैनोस्केल के नए भौतिक एवं रासायनिक लाभदायक गुण जो बहुत सारे उपयोगी कार्य प्रदान कर रहे हैं जिनका उपयोग चिकित्सा, जैव प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स, भौतिक विज्ञान और ऊर्जा के क्षेत्रों में हो रहा है।

परन्तु आज नैनोटेक्नोलोजी के विकास को कृषि के क्षेत्र में अग्रसर करने की आवश्यकता है क्योंकि वैश्विक खाद्य–सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन की चुनौतियाँ आज हमारे समक्ष हावी हो रही हैं, अतः हमें निरंतर नए–नए प्रगतिशील विचारों/तकनीकों को अपनाने की जरूरत है।

इससे पूर्व कृषि में नयी तकनीक जैसे संकर किस्मों, जैव प्रौद्योगिकी, कृत्रिम रसायनों से बहुत फायदा पहुँचा है लेकिन अब नई चुनौतियों का सामना करने के लिए वैज्ञानिक कृषि के क्षेत्र में और उन्नति एवं नयी संभावनाएँ ढूंढ़ रहे हैं।

अग्रणी अनुसंधान एवं विकास के विश्लेषण के अनुसार, कृषि नैनोटेक्नोलोजी के उपयोगों पर एक दशक से शोध कार्य जारी है जिसमें कृषि की चुनौतियों जैसे स्थिरता, बेहतर किस्मों और उत्पादकता में वृद्धि के समाधान के लिए अनुसंधान हो रहा है। नैनोटेक्नोलोजी से निकाले गए उपकरणों को फसल प्रजनन और आनुवंशिक परिवर्तन के क्षेत्र में भी जाँचा–परखा जा रहा है।

कृषि के क्षेत्र में नैनोटेक्नोलोजी विशेष रूप से यह लक्ष्य है कि नैनोमटेरिअल्स के उपयोग से सक्रिय सामग्री के शीघ्र वितरण से रासायनिक उत्पादों के छिड़काव की मात्रा को कम करके निश्चायन के दौरान पोषक तत्वों की हानि को संरक्षित करना। इसके अलावा जल तथा पोषक तत्वों के संरक्षण के माध्यम से पैदावार को बढ़ाना।

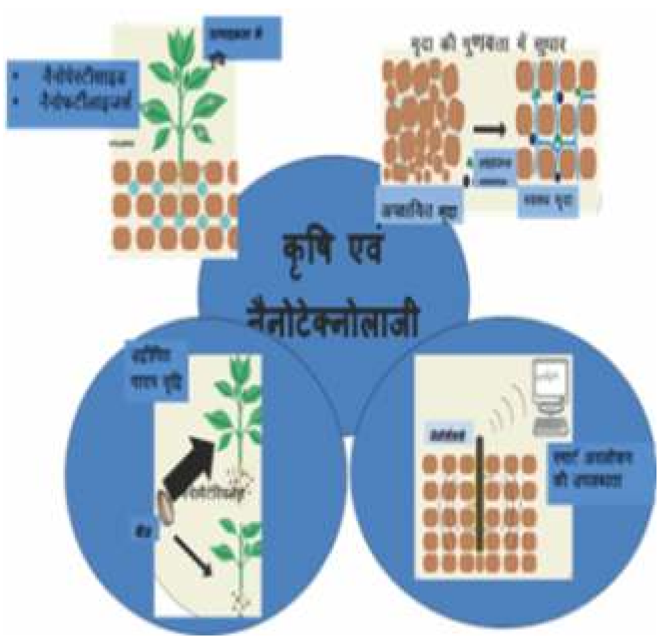

कृषि के क्षेत्र में नैनोमटेरिअल्स का भविष्य में उपयोगः—अपने उपयोग के अनुसार नव नैनोमटेरियअल्स तरह—तरह की तकनीकों जैसे कि इमाल्सिफिकेशन, पॉलीमेरटाईन, आयनिक जिलेटिन, ऑक्सिडेरिडक्शन आदि के द्वारा बनाये जाते हैं नैनोमटेरिअल्स पोषक तत्वों को गतिशील बनाने में स़क्षम हैं जो पौधों के लिए आसानी से मददगार होगा। अतः इसका उपयोग उर्वरक के रूप में किया जा सकता हैं।

इसके अलावा नैनोमटेरिअल्स कीटनाशक की संरचना में सुधार करके इनकी घुलनशीलता को बढ़ाता है तथा हाईड्रोलिसिस (जल अपघटन) एवं फोटोडिकम्पोजिशन को रोक सकता है अतः इनको कीटनाशक के साथ उपयोग कर सकते हैं।

पहले किये गए शोध के अनुसार हैड्रीजलस, नैनोकलेस, नैनोजेओलीटस में मिट्‌टी की जल धारण क्षमता बढ़ाने में सक्षम है। ये प्रणाली कृषि में बहुत उपयोगी हो सकती है।

Au, Sio_2, Zno तथा TLo_2 के नैंनोपार्टिकल्स और कार्बन नैंनोट्‌यूब्स पोषक तत्वों के उद्‌ग्रहण बढ़ाने में सक्षम हैं और पौधों के विकास को प्रोत्साहित कर सकता है।

निष्कर्षः— हालांकि नैनोतकनीक का उपयोग करना अभी भी संदेहास्पद बना हुआ है क्योंकि इनमें शामिल है डाईटेनियम डाईआक्साईड का प्रयोग प्रसाधन सामग्रियों में किया जाना, सिल्वर नैनोकण का डिब्बा बंद खाद्‌य पदार्थों में प्रयोग, कीटाणुनाशकों एवं घरेलू यंत्रों में प्रयोग, जस्ता ऑक्साईड नैंनोकण का प्रयोग प्रसाधन सामग्रियों में रंगलेप (पेंट) बाहरी—फर्नीचर वार्निश और सेरियम ऑक्साईड का ईंधन—उत्प्रेरक के रूप में इस्तेमाल।

कृषि नैनोटेक नवीन उत्पादों को बाजार में जगह बनाने के लिए काफी मुश्किलों का अभी सामना करना पड़ सकता है क्योंकि इनकी उत्पादन लागत बहुत ज्यादा है इसलिए वैज्ञानिकों को अपना ध्यान इसकी लागत कम करने में केन्द्रित करना चाहिए तभी सही अर्थ में हम नैनोटेक्नोलोजी से कृषि का और अपने देश का और अधिक विकास कर सकते हैं।

प्लास्टिकल्चर का कृषि में महत्त्व

दिनेश जींगर, अनिल कुमार वर्मा, अमिता कुमावत एवं सरोज सेपट
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110 012

आधुनिक युग में प्लास्टिक का उपयोग दैनिक जीवन के हर क्षेत्र में तेजी से बढ़ रहा है और कृषि जगत भी इससे अछूता नहीं रहा हैं। लोहे एवं लकड़ी का उपयोग कम हुआ है और उसकी जगह दैनिक जीवन में प्लास्टिक ने ले ली हे। प्लास्टिक में बहुत सी खुबियाँ पाई जाती हैं जिसके चलते बड़ी तेजी से इसका प्रयोग बढ़ा हैं। ये खूबियाँ इस प्रकार से हैं–

- ज्यादा मजबूत और लचीलापन होता है।
- इसमें जंग नहीं लगता और न ही किसी तरह की सड़न होती है।
- तरल पदार्थों एवं गैस के रिसाव को रोकने में बेहतर होती है।
- वजन के हिसाब से हल्का होना।

यह प्लास्टिक ही है जिसके चलते सुदूर उत्तर भारत एवं उत्तर पूर्वी भारत के दुर्गम पर्वतीय क्षेत्र जैसे श्रीनगर, लेह, लद्दाख, शिलाँग इत्यादि क्षेत्रों में साग–सब्जियों, कट–फ्लावर की खेती एवं फलोत्पादन संभव हो सका है, तो दूसरी तरफ रेगिस्तान की ऊबड़–खाबड़ एवं बेकार पड़ी जमीन पर वहाँ के किसान वहीं की विपरीत आबोहवा एवं दुर्गम भौगोलिक परिस्थितियों में न केवल साग–सब्जियों एवं फल–फूलों की व्यवसायिक खेती कर रहे हैं, जिसकी पूर्व में कल्पना भी नहीं कर सकते थे। प्लास्टिक के इस्तेमाल से और प्लास्टिक का कृषि जगत में बढ़ते उपयोग को '**प्लास्टिकल्चर**' नाम दिया गया है। आज प्लास्टिक ने कृषि जगत एवं किसान की दुनिया ही बदल कर रख दी है। खेती में आज प्लास्टिक का उपयोग कई रूप में हो रहा हैं। जैसे–सिंचाई में कृषि उपकरणों (यंत्रों) में, पॉली हाउस में, पॉली टनेल, शेड–नेट हाउस में, पलवार के तौर पर, मल्च के तौर पर, नर्सरी की थैलियों एवं प्लास्टिक ट्रे के रूप में और प्लास्टिक से बने सोलर ड्रायर के रूप में।

सिंचाई में प्लास्टिक :– पानी की किल्लत दिनों दिन एक प्रकार की गंभीर समस्या बनती जा रही है और ऐसे में कृषक वर्ग भी इस समस्या से अछूता नहीं हैं। हमारे देश के ज्यादातर किसान इस समस्या से जूझ रहे है। दिनों दिन जमीन में पानी का स्तर गिरता जा रहा है। ऊपर से पानी का यू ही बेकार में बह जाना इस समस्या को और जटिल बना देता है। प्लास्टिक तकनीक के अंतर्गत एच डी पी ई (हाई डेनसिटी पॉली इथाइलीन पॉलीमर) एवं एल डी पी ई (लो डेनसिटी पॉली इथाइलीन पॉलीमर) पाइपों का इस्तेमाल कर कई तरीकों से सिंचाई की जा रही हैं। इस से पानी की बचत के साथ–साथ सिंचित क्षेत्रों में बढ़ोत्तरी होती है। ये तरीके हैं–

प्लास्टिकल्चर का कृषि कार्यों में प्रयोग

फव्वारा या स्प्रिंकलर सिंचाई: इस विधि में फव्वारों द्वारा पौधों पर पानी बारिश की फुहार जैसा गिरता है। ऊँची–नीची जमीनों पर आसानी से खेती की जा सकती है क्योंकि इस विधि द्वारा पौधों की सिंचाई की जा सकती है। खुली सिंचाई की अपेक्षा फव्वारा विधि में पानी की बचत होती है। इसमें फसल के मुताबिक स्प्रिंकलर को सही दूरी पर लगा दिया जाता है। पम्प के इस्तेमाल से पानी तेज बहाव के साथ स्प्रिंकलर के ऊपर लगी नोजल से फुहार बन कर बाहर गिरता है। स्प्रिंकलर, मिनी स्प्रिंकलर, मिस्टर एवं पॉप अप इत्यादि आजकल चलन में है। फसल के अनुसार इनका चयन एवं उपयोग किया जाता है।

बूंद–बूंद/टपका/ड्रिप सिंचाई: बूंद–बूंद सिंचाई तकनीक के अन्तगर्त पानी को पौधों की जड़ों में उनकी जरूरत के अनुसार बूंद–बूंद गिरा कर पहुँचाया जाता है। इस तरीके में पानी के स्रोत (ट्यूबवेल प्लास्टिक या सीमेंट का टैंक) से एक मोटी मुख्य पाईप जुड़ी होती है और इससे सबमेन पाईप लाईन निकलती है उसे लेटरल कहते हैं। जो पूरे खेत में बिछी होती है और इन लेटरल पर बारीक छेद कुछ अंतराल (दूरी) पर ऊपर या अंदर लगे होते हैं जिन्हें ड्रिपर्स कहते हैं। जहाँ से बूंद–बूंद पानी निकलता हैं, जो की पौधों की जड़ों के आस–पास की जमीन को गीला करते हैं। ड्रिपर्स दो प्रकार के होते हैं ऑन–लाईन ड्रिपर्स एवं इन–लाईन ड्रिपर्स। ऑन–लाईन ड्रिपर्स फलों के बगीचों में जहाँ पौधों की दूरी एक मीटर से ज्यादा होती है, उपयोग लिया जाता है और एक मीटर से कम दूरी होने पर इन–लाईन ड्रिपर्स लगाए जाते हैं। खासतौर पर सब्जियों एवं फूलों के उत्पादन के दौरान इनका उपयोग होता है।

फर्टिगेशनः पानी में खाद या रसायनिक उर्वरक मिलाकर बूंद–बूंद सिंचाई द्वारा पौधों की जड़ो के आस–पास जरूरत के अनुसार देना फर्टिगेशन कहलाता है। इसके लिए ड्रिप सिंचाई के अलावा फर्टिगेशन टैंक या वेन्चुरी का प्रयोग किया जाता है। इस फर्टिगेशन विधि को अपनाकर किसान अपनी मेहनत, समय एवं धन की बचत कर सकते हैं। साथ ही अच्छी गुणवत्ता एवं अधिक मात्रा में उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं वो भी बिना प्रदूषण बढ़ाए।

ड्रम किट ड्रिप सिंचाईः इस तरीके से जरूरत के मुताबिक जगह–जगह सौ या डेढ़ सौ लीटर वाले मजबूत प्लास्टिक के ड्रमों को 3 मीटर ऊँचे सिमेंट के स्टैंड पर रख दिया जाता है। इन ड्रमों से पानी को निकलने के लिए लगाए पाइपों में गेट वॉल्व व फ़िल्टर लगाए जाते हैं ताकि जरूरत नही होने पर गेट वॉल्व को बंद कर पानी की सप्लाई को रोका जा सके। जहाँ कम बरसात होती है उस क्षेत्र की बागवानी फसलों के लिए यह तरीका किसी वरदान से कम नहीं है।

प्लास्टिक मल्वः जमीन पर उठी हुई क्यारियाँ बनाकर उसपर प्लास्टिक की काली या दूधिया या चाँदी के रंग वाली परत बिछा दी जाती हैं। इसे "प्लास्टिक मल्च" कहते है। आमतौर पर 25 माइक्रोन मोटाई वाली परत मल्च के लिए उपयुक्त रहती है। इससे मिट्टी में नमी ज्यादा समय तक बनी रहती है, जिससे बूंद–बूंद वाली सिंचाई तकनीक में और भी कम पानी लगता है क्योंकि पानी का

वाष्पोत्सर्जन रूक जाता है। खरपतवार नहीं उग पाते हैं जिससे निराई–गुड़ाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है इस प्रकार समय एवं धन की बचत होती है। सिल्वर ब्लैक मल्च का उपयोग करते समय सिल्वर सतह को ऊपर रखा जाता है और काली सतह अंदर की तरफ रखी जाती है। इससे पानी की बचत एवं खरपतवार नियंत्रण में सहायता होती है और कीट–पतंगों का प्रकोप भी कम होता है। इसलिए सिल्वर ब्लैक मल्च ज्यादा प्रचलन में है।

प्लास्टिक थैलियाँ एवं नर्सरी लगाने वाली प्लास्टिक ट्रे (प्रो ट्रेज)

आज बागवानी या दूसरी फसलों की नर्सरी तैयार करते समय फूलों व सब्जियों के लिए 10–15 सें.मी. व फलों के लिए 15–20 सें.मी. आकार की थैलियाँ इस्तेमाल की जाती हैं। साथ ही नर्सरी उगाने वाली प्लास्टिक ट्रे का प्रयोग साग–सब्ज़ियों की नर्सरी (पौध) तैयार करने के लिए किया जाता है। इसके मुख्य लाभ इस प्रकार हैं–

- पोलिथीन बैग (प्लास्टिक थैलियाँ) के पौधे में अगर बीमारी लगे तो उसी पौधे पर असर होता है। और उसे आसानी से उठाया जा सकता है। इसके अलावा पौधों को आसानी से कहीं भी लाया व ले जाया जा सकता है।
- नर्सरी ट्रे में सभी पौधों की बढ़वार बहुत अच्छी एवं समान रूप से होती हैं।
- पौधों की जड़ों का विकास बहुत अच्छा होता है, जिससे ये तुरंत जमीन (मिट्टी) में स्थापित हो जाते हैं।
- इस तरीके से बीजों का अंकुरण भी बढ़िया होता है और पौधे कम मरते हैं।

पॉली हाउस एवं शेड–नेट हाउसः ग्रीन हाउस लोहे के पाइपों या लकड़ी से बना एक ऐसा ढ़ाँचा है, जो कि एक पारदर्शी आवरण से ढका होता है जिसमें से सूर्य की किरण जो कि पौधों के लिए उपयुक्त पाई जाती है अंदर आ सकती है। विशेषतौर से 400 से 700 नैनों मी. वेवलेंथ वाली किरणें जिसकी हम प्रकाश सक्रिय किरणें कहते हैं। पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया के लिए उपयुक्त होती है। अगर यह पारदर्शी ढ़कने की सामग्री प्लास्टिक परत (पॉलीथिन शीट) काम में ली जाती है तो इसे **पॉली हाउस** कहते हैं। पॉली हाउस में कट फ्लावर की खेती, गुलाब, जरबेरा, कारनेसन, गुलदाउदी और (रंगीन शिमला मिर्च) की खेती की जाती है। अगर यह पारदर्शी ढ़कने की सामग्री शेड–नेट की जाली है तो उसे शेड–नेट कहा जाता है। शेड–नेट हाउस में रंगीन शिमला मिर्च, चेरी टमाटर, ब्रोकरी, लेट्यूस, लाल गोभी, हरा धनिया और सब्जियों की पौध, फलों की पौध एवं जंगली पौधों की नर्सरी तैयार करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। पॉली हाउस एवं शेड–नेट हाउस घर की तरह ढांचे के आकार का होता है। जिसे 200–400 माइक्रोन मोटाई वाली सफेद/पीली प्लास्टिक परत से ढका जाता है। यह ढांचा हरित–ग्रह प्रभाव के अनुसार काम करता हैं। जिसमें आबो हवा को काबू में करके बेमौसमी फसलों को भी उगाया जा सकता है। वास्तव में प्लास्टिकल्चर ने खेती में कई बदलाव किए हैं जिनसे पैदावार को काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है।

कृषि ऐप एक संजीवनी

मंगल सिंह चौहान, रजनी जैन एवं सोनिया चौहान

राष्ट्रीय कृषि आर्थिकी एवं नीति अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

हमारे देश में स्वतंत्रता के 70 वर्षों के बाद भी 58 प्रतिशत से अधिक आबादी की जीविका का एकमात्र साधन कृषि उपज अथवा कृषि आधारित आय है। इनमें ज्यादातर छोटे किसान हैं, जिन्हें आए दिन अपनी उपज को निकटतम बाजार में बेचनी पड़ता है, और जो भी मूल्य मिले, उससे अपने परिवार का भरण–पोषण करना पड़ता है। इस व्यवस्था में अधिकांशतः किसानो को न्यूनतम मूल्य पर अपनी उपज निकटतम बाजार में बेचनी पड़ती है या साहूकार को देनी पड़ती है। जिससे एक तरफ उसे अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिलता और दूसरी तरफ आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कर्ज भी उठाना पड़ता है। इससे किसान निर्धन, लाचार और कर्जदार बना रहता है।

हमारे देश में किसानो की निर्धनता के कई कारण हैं, लेकिन इसमें सूचनाओं की कमी जैसे : खेती प्रथाओं में सुधार की जानकारी न होना, बीजों की नई और बेहतर किस्मों का ज्ञान न होना, मानसून की सटीक एवं यथा समय सूचना न होना, कीट पतंगों से बचाव के तरीकों के बारे में न पता होना, सरकारी योजनाओं (बीमा योजनाएँ, ऋण योजनाएँ, रोजगार योजनाएँ) की पूरी जानकारी न होना आदि एक प्रमुख कारण है।

भारत सरकार किसानों के वर्तमान तथा भविष्य को सुधारने की दिशा में बहुत तत्पर है। इसके लिए नई–नई योजनाएं के माध्यम से अवसर प्रदान कर रही है। सरकार की प्राथमिकता है कि प्रत्येक कृषि अनुसंधान एवं तकनीकी की सूचना, किसान तक अवश्य पहुँचनी चाहिए। किसान आर्थिक व बौद्धिक रूप से समृद्ध हो सके और किसानों की आर्थिक, सामाजिक एवं निजी समस्याओं से निजात आसानी से हो जाए। इस कड़ी में सरकारकृषि ऐप्स सुविधा शुरू करने पर जोर दे रही है क्योंकि आज मोबाइल फोन किसान का सच्चा दोस्त और कृषि ऐप्स एक संजीवनी के समान है।

मोबाईल ऐप्स एक सॉफ्टवेयर होता है, जिसे विशेष रूप से विकसित किया जाता है ताकि इसे डेस्कटॉप या लैपटॉप कम्प्यूटर की तुलना में, वायरलेस कंप्यूटिंग उपकरणों जैसे टैबलेट और स्मार्टफोन पर आसानी से उपयोग किया जा सके। मोबाईल ऐप्स ग्राहकों की विभिन्न जरूरतों को ध्यान में रखकर ही तैयार किये जाते हैं, ताकि यह अधिकांश प्रयोगकर्ताओं को उपलब्ध हो सके। बाजार में उपयोगिताओं के अनुसार अनेक प्रकार के मोबाईल ऐप्स उपलब्ध हैं, जैसे बैंकिंग ऐप्स, सोसल मिडिया ऐप्स, कृषि सम्बंधित ऐप्स, मौसम सम्बंधित ऐप्स, विपणन सम्बंधित ऐप्स, गेमिंग ऐप्स इत्यादि। जिन लोगों के पास स्मार्ट फोन एवं इंटरनेट की सुविधा हो, वो उपयोगकर्ता इन ऐप्स का लाभ उठा सकते हैं। किसान अपने मोबाईल पर गूगल प्लेस्टोर में जाकर मोबाइल एप्स सेक्शन के माध्यम से इन एप्स को डाउनलोड कर इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

विश्व में लगभग 6 अरब लोग मोबाईल फोन का प्रयोग कर रहे हैं। इनमें से 70 प्रतिशत लोग ऐसे हैं, जिनकी आय अथवा रोजगार का स्रोत, कृषि क्षेत्र है (विश्व बैंक 2012)। आज दुनिया के अधिकांश विकासशील देश भी तेजी से मोबाईल फोन के व्यापक उपयोग का हिस्सा बनते जा रहे हैं। रविंदर कौर व जोशी विस्टर 2010 के अध्ययन के अनुसार, वर्ष 2012 तक भारत 300 मिलियन से अधिक मोबाईल उपभोक्ताओं के साथ, चीन के बाद दूसरा सबसे बड़ा बाजार होगा, जिनमें ग्रामीण उपयोगकर्ताओं की हिस्सेदारी लगभग 60% होगी। यह अनुमान सही निकला, क्योंकि भारत में मोबाईल का उपयोग तेजी से बढ़ा है। जिसने हम भारतीयों के रहन–सहन को ऊँचा उठाने में मदद की है। भारत में किए गए विभिन्न सर्वे बताते हैं कि मोबाईल के उपयोग से किसानों के खेती कार्यों में लगने वाले समय तथा धन की बचत होती है। वर्ष 2012 में डा० ऊषा रानी आहूजा एवं अन्य के द्वारा हरियाणा के जिलों में किया गया सर्वे भी यही दर्शाता है कि मोबाइल के उपयोग से खेती कार्यों में आसानी के साथ–साथ 95 प्रतिशत तक समय तथा धन की बचत हुई है। वैसे तो समय–समय पर किसानो के विकास के लिए भारतीय आधुनिक सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के कई मॉडल बनाए गए हैं जिनका किसानों ने लाभ भी उठाया है। (तालिका 1)

तालिका 1: भारत में किसानों के विकास के लिए आधुनिक सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के मॉडल

टेली केंद्र आधारित	इंटरनेट आधारित	वीडियो आधारित
• किसान कॉल सेंटर, भारत सरकार, 2004 • बी.एस.एन.एल. सहायता लाइन	• ग्रामीण ज्ञान केन्द्र, 1998 • आई.टी.सी.ई.–चौपाल, 1999 • ई-SAGU, 2004	• डिजिटल ग्रीन, 2009
मोबाईल–एसएमएस आधारित	**मोबाइल आधारित आवेदन**	**मोबाइल–आवाज संदेश आधारित**
• रॉयटर्स मार्केट (आरएमएल), 2007 • वार्ना अनवायर्ड • माइक्रोसॉफ्ट, 2007 • के वी के एनएआईपी, 2009 • किसान संचार, 2010	• फिशर दोस्त–एम एस एस आर एफ, 2008 • नोकिया–जीवन उपकरण, 2009 • टाटा–एम कृषि, 2009	इफको किसान संचार लिमिटेड (आई के एस एल), 2007

इन्हीं प्रयासों को आगे बढ़ाते हुए तथा किसानों की समस्याओं और आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सरकार ने कृषि वैज्ञानिकों एवं आई टी प्रभाग की मदद से ऐसे मोबाईल ऐप्स शुरू किए हैं, जो आसानी से किसानों को उनकी समस्याओं के समाधान की जानकारी दे पाए। ये ऐप्स नई तकनीकों को किसानों तक पहुंचाने में मददगार तो साबित होंगे ही और साथ ही प्रयोगशाला और खेतों की दूरी को भी कम करेंगे। ऐसे ही कुछ मोबाईल ऐप्स की जानकारी यहां दी जा रही है।

पूसा कृषि मोबाईल ऐप

यह मोबाईल ऐप्स सेवा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् की ओर से विकसित की गई है। यह ऐप्स फसलों की नई किस्मों के बारे में, संसाधन संरक्षण, खेती के कार्य व्यवहार के साथ–साथ खेती की मशीनों और उसके अम्ल से संबंधित सूचनायें भी किसानों को उपलब्ध कराती है। इस मोबाईल ऐप के इस्तेमाल से किसानों को मौसम के बारे में जानकारियां मिलेंगी जिससे वे अपनी फसल को बचाने के लिए उसके अनुरूप उपाय कर सकेंगे। यह सुविधा निःशुल्क है। इसे गूगल प्लेस्टोर से आसानी से डाउनलोड किया जा सकता है। इस सुविधा को देश के करीब दो करोड़ लोग प्रयोग कर रहे हैं।

एग्रीमार्केट मोबाईल ऐप : किसानों की एक बड़ी समस्या है, कि उन्हें विभिन्न बड़ी मंडियों में कृषि उत्पाद के मूल्य के बारे मे जानकारी नहीं होती। जिस कारण बिचौलिए उनके हिस्से का मुनाफा हड़प जाते थे, लेकिन अब एग्रीमार्केट मोबाईल ऐप किसानों को 50 किलोमीटर के दायरे में मंडियों में उनकी उपज का मूल्य तथा देश की बड़ी मंडियों में मूल्यों की जानकारी दे देगा। अब किसान को जहाँ अधिक मूल्य मिलेगा वहाँ अपनी उपज बेच सकेगा। इस मोबाईल ऐप को कृषि सहकारिता तथा किसान कल्याण मंत्रालय के आईटी प्रभाग द्वारा विकसति किया गया है। इसे गूगल स्टोर या एम किसान पोर्टल (http://mkisan-gov-in/Default-asp) से निःशुल्क डाउनलोड किया जा सकता है।

फसल बीमा योजना

भारत सरकार किसानो की अप्रत्याशित परिस्थितियों से निपटने हेतु किसानों को फसल बीमा प्रदान करने के लिए बड़ी राशि खर्च करती है। सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र की बीमा कंपनियां फसल बीमा प्रदान करती हैं। जिसका लाभ एक विशेष अवधि तक ही लिया जा सकता है परंतु प्रशासनिक एवं तकनीकी करणों से सूचनाएं किसानों तक नहीं पहुँच पाती।

क्रॉप इंश्योरेंस मोबाईल ऐप

यह मोबाईल ऐप भी कृषि सहकारिता तथा किसान कल्याण विभाग के सूचना एवं प्रौद्योगिकी प्रभाग द्वारा विकसित किया गया है। किसानो को इस मोबाईल ऐप से उनके क्षेत्र में उपलब्ध बीमा कवर के बारे में पूरी जानकारी मिलती हैं साथ ही ऋण लेने वाले किसानों को अधिसूचित फसल के

लिए इंश्योरेंस प्रीमियम, कवरेज राशि तथा ऋण राशि की गणना में भी मदद मिलती है। इसका प्रयोग सामान्य बीमा राशि, विस्तारित बीमा राशि, प्रीमियम ब्यौरा तथा अधिसूचित क्षेत्र में किसी अधिसूचित फसल की सब्सिडी सूचना के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है।

किसान सुविधा मोबाईल ऐप

कृषि सहकारिता एवं किसान कल्याण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा विकसित मोबाईल ऐप किसान सुविधा एवं सर्वग्राही मोबाईल विकसित ऐप है। इस एप से किसान एक बटन के क्लिक के साथ वर्तमान दिवस तथा अगले 5 दिनों के मौसम, बाजार में मूल्य, कृषि परामर्श, पौध संरक्षण, आईपीएम पद्धतियों आदि के साथ ही साथ मौसम एलर्ट एवं कमोडिटी के बाजार में भावों के साथ निकटतम क्षेत्र और राज्य में अधिकतम भावों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

एम किसान एप्लिकेशन

यह एप भी कृषि एवं सहकारिता विभाग की अपनी आईटी टीम ने सी डैक, पुणे की मदद से विकसित किया है। इसका उपयोग किसान भाई बिना (एम किसान) पोर्टल पर पंजीकरण किए हुए विभिन्न स्तरों पर विशेषज्ञों और सरकारी अधिकारियों द्वारा भेजे जा रहे परामर्श और सूचना प्राप्त करने के लिए कर सकते हैं। इस ऐप के कुछ महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं को इस प्रकार दर्शाया जा सकता है।

बीज की उपलब्धता

उन्नत एवं गुणकारी बीज, अच्छी उपज के लिए अत्यंत आव यक होते हैं। यह ऐप डीलरों और निर्माताओं को बीज उपलब्धता के डेटा डालने के लिए हैं। हर स्तर पर फसल किस्मों का चयन व डीलर और उनके उत्पादकों का संबंध निश्चित करना इस ऐप की मुख्य विशेषता है।

एग्री पोर्टल

यह एप्लिकेशन किसानों और कृषि व्यापारियों को बिना किसी शुल्क के अनेक मंडियों में ताजा भाव की जानकारी देता है। यह सभी हितधारकों को कृषि बाजार के उतार–चढ़ाव से भी अवगत कराता है। अभी यह एप हिन्दी, गुजराती और अंग्रेजी भाषाओं में उपलब्ध है। आने वाले समय में यह अन्य भाषाओं जैसे–तेलुगू, तमिल और बंगाली में भी उपलब्ध करवाया जायेगा। कार्य क्षमता बढ़ाने के लिए इस एप को नवीनतम संस्करण के साथ अपडेट करने की जरूरत है।

शेतकारी मासिक एंड्रॉयड ऐप

"शेतकारी मासिक" यह लोकप्रिय मासिक पत्रिका कृषि विभाग महाराष्ट्र द्वारा 1965 से प्रकाशित की जाती है। इसका एंड्रॉयड एप्लिकेशन के लिये एक बहुत ही सरल इंटरफेस है, मोबाईल पर इंटरनेट या वाईफाई कनेक्टिविटी की आवश्यकता है। डाउनलोड किये जाने के बाद, इसको बिना इंटरनेट कनेक्टिविटी के भी पढ़ा जा सकता है।

फार्म ओ पीडिया

यह ऐप ग्रामीण गुजरात के लिए विकसित किया गया है। यह ऐप मिट्टी और मौसम के अनुसार उपयुक्त फसलों के चुनाव तथा मवेशियों की देखभाल के बारे में जानकारी देता है। यह किसानों को अपने क्षेत्र के मौसम की जानकारी भी देता है। यह ऐप अभी अंग्रेजी और गुजराती भाषाओं में उपलब्ध है।

भुवन ओले ऐप

यह ऐप मूसलाधार बारिश व ओलों के कारण फसल को हुए नुकसान को मापने के लिए विकसित किया गया है। यह ऐप फसल की फोटो खींचकर के हुए नुकसान का आंकलन करने में मदद कर सकता है।

कृषि, सहकारिता तथा किसान कल्याण मंत्रालय, किसानों तथा अन्य हितधारकों को सभी आवश्यक सूचनाएं समय पर उपलब्ध कराने के लिए दृढ़–संकल्प है, जिससे देश में कृषि उत्पादकता और विश्व स्तरीय आय के लिए उचित वातावरण बनाया जा सके। ग्रामीण भारत में इंटरनेट की पहुंच काफी कम है, परंतु किसानों तथा दूर–दराज के लोगों में मोबाईलों की संख्या काफी तेजी से बढ़ रही है। कृषि मंत्रालय के–एम किसान पोर्टल को भारी सफलता मिल रही है। आज एस.एम.एस. द्वारा कृषि संबंधित सलाह लेने के लिए लगभग दो करोड़ किसानों ने पंजीकृत कराया है। यह सलाह उन्हें वैज्ञानिकों/तकनीकी अधिकारियों

द्वारा दी जाती है। अभी तक लांच किए गए मोबाईल ऐप्स के जरिए, किसान मौसम की भविष्यवाणी, मौसम के हालात के मुताबिक खेती को उन्नत बनाने के टिप्स, फसल को काटने का सही समय, सुखाने व बुवाई से लेकर कटाई तक के बारे में पूरी जानकारी, कृषि मंडी भाव, विशेषज्ञों की राय, खेती संबंधित ताजा समाचार सहित अन्य कई जानकारियाँ प्राप्त कर सकेंगें। ये मोबाईल ऐप उपयोग में भी काफी आसान है। इसलिए मोबाइल की औसत जानकारी रखने वाला किसान भी इनका उपयोग कर गरीबी, कर्जदारी, भुखमरी एवं अवसाद से बच सकता है। इस प्रकार ये मोबाईल ऐप किसानो के लिए संजीवनी का कार्य करेंगें।

संदर्भ

- विश्व बैंक (2012),''कृषि और ग्रामीण विकास पर विश्व विकास संकेतक''। http://data-worldbank-org/topic/agriculture&and&rural&development.

- कौर रविंदर व जोशी टपेजमत। (2010),''मोबाइल फोन्स बून ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था करने के लिए'', साक्षरता की जानकारी और कंप्यूटर शिक्षा जर्नल (LICEJ) वॉल्यूम। 1 (4) पीपी 261–265।

- ऊषा रानी आहूजा, रजनी जैन, सोनिया चौहान, अमरजीत सिंह, प्रेम नारायण और के. आर. चौधरी (2012), हरियाणा के कृषि में पिछड़े और विकसित क्षेत्रों में मोबाइल टेलीफोनः एक केस स्टडी, सुरभि मित्तल और ममता मेहर (2012), भारत से साक्ष्यः कैसे मोबाइल फोन छोटे किसानों के विकास के लिए योगदान दे सकते हैं ? अंतर्राष्ट्रीय कृषि त्रैमासिक पत्रिका, 51 (2012), नंबर 3: 227–244

पॉलीहाउस तकनीक

पंकज कुमार सिंह, अनुज कुमार, सोनिया श्योरान, गीता संधु एवं राजेन्द्र कुमार
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

देश की बढ़ती जनसंख्या का भरण–पोषण करना, आने वाले समय के लिए एक चुनौती बनकर सामने उभर रहा है। आने वाले समय में सभी खाद्य पदार्थ जैसे कि फल सब्जी, अनाज, दूध, दलहन, मांस, मछली, अंडा सभी की मांग बढ़ने वाली है। इन सभी खाद्य पदार्थों की पूर्ति के लिए देश में औसत जोत का छोटा होना आम बात है। कृषि उत्पादन में प्रयोग की जाने वाली अधिकतर सामग्री तथा वस्तुएँ दिन–प्रतिदिन मंहगी होती जा रही हैं इस कारण किसानों की आर्थिक दशा भी बिगड़ती जा रही है। आज जरूरत है उचित कृषि प्रणाली प्रबंधन एवं कृषि की आधुनिक तकनीक को अपनाने की जिसके माध्यम से कृषि एवं किसानों की आर्थिक दशा का सुधार संभव हो सके। आज आई.सी.यू. की तर्ज पर तैयार होने वाले पॉलीहाउस की तकनीक किसानों के लिए वरदान बनकर उभर रही है। आज दुनिया में इस तकनीक को अपनाने वाले अग्रणी देशों में स्पेन, नीदालैंड और इजराइल का नाम आता है। स्पेन में सर्वाधिक 70,000 क्षेत्रफल में संरक्षित खेती की जा रही है। भारत में 25,000 हैक्टर में पॉलीहाउस और 2000 हैक्टर में ग्रीन हाउस के अंदर खेती हो रही है और यह आंकड़ा बढ़ रहा है। (एच आर गौतम उवं रोहिताश्व कुमार, कुरूक्षेत्र, वॉल्यूम–62, अंक–8,2014) अतः पॉलीहाउस तकनीक आज समय की मांग है और इसके फायदे को भी हम नजरअदांज नहीं कर सकते।

पॉलीहाउस क्या है?

पॉलीहाउस एक विशेष प्रकार की प्रकार की घरनुमा संरचना होती है। जो किसी भी प्रकार की आपदाओं में फसलों को अपने अंदर सरंक्षित करके प्रति इकाई क्षेत्रफल का उत्पादन एवं उत्पादकता को कम समय में बढ़ा देती है। पॉलीहाउस को 200 माइक्रॉन मोटाई वाली पारदर्शी एवं पराबैंगनी किरणों से प्रतिरोधी पॉलीथीन की चादर से बनाया जाता है। इसलिए इसे 'पॉलीहाउस' कहते हैं।

पॉलीहाउस बनाने की विधि/तरीकाः– पॉलीहाउस मुख्यतः बांस, लकड़ी, पत्थर, लोहे के एंगल एवं जी. आई. पाईपों का उपयोग करके बनाया जाता है, जिसके अदंर

भू–परिश्करण क्रियाओं को संपन्न कराकर सब्जियों, फूलों एवं फलों की खेती के अतिरिक्त कृषि विज्ञान में सबंधित अन्य प्रयोगों को सुचारू रूप से संपादित करने के लिए उपयोग में लाया जाता है।

पॉलीहाउस बनाने से पहले प्रशिक्षणः– यदि किसान या कृषक उद्यमी या वैज्ञानिक/अनुसंधानकर्ता पॉलीहाउस खेती के क्षेत्र में प्रवेश करना चाहते हैं तो इसके लिए उन्हें पॉलीहाउस निर्माण की प्रशिक्षण अति आवश्यक है। इसके लिए आप नजदीकी पॉली घरों से जानकारी के लिए जाएं। इससे सबंधित जानकारी कृषि विज्ञान केन्द्र, कृषि विश्वविद्यालय या अन्य संस्थाओं से संपर्क कर ली जा सकती है।

पॉलीहाउस के लिए शैक्षणिक योग्यताः– पॉलीहाउस लगाने के लिए किसी भी अगर किसान पढ़ा–लिखा हो तो परिणाम और भी बेहतर हो सकते हैं। इस क्षेत्र में अनुभव के आधार पर ही सीखा जा सकता है। वैसे कृषि–विभाग किसानों को पॉलीहाउस के लिए प्रशिक्षित करने के लिए समय–समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करता रहता है।

पॉलीहाउस निर्माण की प्रक्रिया एवं सरकारी अनुदानः– अभी हाल ही में हिमाचल प्रदेश सरकार की योजनाओं के अनुसार, में किसान बिना प्रशिक्षण लिए पॉलीहाउस नहीं बना सकते। कृषि विभाग के आदेशानुसार पॉलीहाउस लगाने के लिए किसानों को अब पॉलीहाउस से

संबंधित तमाम तकनीकी जानकारियों लेने के लिए प्रशिक्षण लेना अनिवार्य किया गया है। अर्थात् प्रशिक्षण प्राप्त किसान ही पॉलीहाउस के लिए आावेदन कर सकते हैं।

कृषि विभाग के डा. वाई.एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना के अंतर्गत पॉलीहाउस निर्माण के लिए वर्तमान बजट में 2.50 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया है। इस योजना के तहत भूमालिक अपने मिलकीयत 105 वर्गमीटर रकबे से लेकर 2000 वर्गमीटर रकबे तक अपने खेतों में पॉलीहाउस स्थापित कर सकता है। इन पॉलीहाउस में किसान शिमला मिर्च, खीरा एवं टमाटर आदि की खेती कर सकते हैं। किसानों को पॉलीहाउसों के निर्माण के लिए 15 प्रतिशत राशि कंपनी को विभाग के माध्यम से जमा करनी होगी। सरकारी योजना के अनुसार पॉलीहाउस की खेती के प्रति किसानों को जोड़ने के लिए 85 प्रतिशत अनुदान दिया जा रहा है। मात्र 15 प्रतिशत राशि ही किसानों को अदा करनी होगी।

पॉलीहाउस की संरचनाः– यूँ तो ढाँचे की बनावट के आधार पर पॉलीहाउस कई प्रकार के होते हैं। जैसे–गुम्बदाकार, गुफानुमा, रूपान्तरित गुफानुमा, झोपड़ीनुमा आदि। पहाड़ों पर रूपान्तरित गुफानुमा या झोपड़ीनुमा डिजाईन अधिक उपयोगी होते हैं। ढांचे के लिए आमतौर पर जी. आई. पाईप या एंगल आयरन का प्रयोग करते हैं जो मजबूत एवं टिकाऊ होते हैं। अस्थाई तौर पर बाँस पर भी पॉलीहाउस निर्मित होते हैं जो सस्ते पड़ते हैं। आवरण के लिए 600–800 गेज की मोटी पराबैंगनी प्रकाश प्रतिरोधी प्लास्टिक शीट का प्रयोग किया जाता है। इसका आकार 30–100 वर्गमीटर रखना सुविधाजनक रहता है। निर्माण लागत तथा वातावरण पर नियंत्रण की सुविधा के आधार पर पॉलीहाउस तीन प्रकार के होते हैं।

1. निम्न कास्त पॉलीहाउस (कास्त पॉलीहाउस) 2. मध्यम कास्त पॉलीहाउस 3. उच्च कास्ट पॉलीहाउस

1. **साधारण कास्त पॉलीहाउस (लो कॉस्ट पॉलीहाउस):–** इस प्रकार के पॉलीहाउस में यंत्रों द्वारा किसी भी प्रकार का कृत्रिम नियंत्रण वातावरण पर नहीं किया जाता है।
2. **मध्यम कास्त पॉलीहाउस (मीडियम कॉस्ट पॉलीहाउस):–** इसमें कृत्रिम नियंत्रण के लिए (ठण्डा या गर्म करने के लिए) साधारण प्रकार के उपकरणों की ही प्रयोग करते हैं।
3. **उच्च कास्त पॉलीहाउस (हाई कॉस्ट पॉलीहाउस):–** इस प्रकार के पॉलीहाउस में आवश्यकतानुसार तापक्रम, आर्द्रता, प्रकाश, वायु संचार आदि को घटा–बढ़ा सकते हैं और मनचाही फसल किसी भी मौसम में ले सकते हैं।
4. **पॉलीहाउस की उम्र सीमा (टिकाऊ अवधि):–** यूँ तो पॉलीहाउस की उम्र सामा बनाए 3–5 वर्षों की होती है, परंतु बाजार में उपलब्ध पॉलीहाउस निर्माण सामग्री की गुणवत्ता टिकाऊपन ब्रांड, पॉलीथिन शीट की मोटाई आदि पर निर्भर करती है।

आवश्यक सामग्री पर सरकार द्वारा अनुदानः– राज्य सरकार द्वारा कुछ राज्यों में अनुदान भी दिया जा रहा है जैसे कि हरियाणा सरकार इस क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है जैसे कि

1. ग्रीन हाउस संरचना की पंखा व पैड प्रणाली के लिए लागत का 65 प्रतिशत जा अधिक से अधिक 952.25 रूपये प्रतिवर्ग मीटर होगा। प्राकृतिक रूप से वातायित ग्रीन हाउस संरचना के नलिका लकड़ी तथा ब्रांस सरंचनाओं के लिए लागत का 65 प्रतिशत जो अधिक

से अधिक क्रमशः 607.75, 334.75 और 243.75 प्रति वर्गमीटर होगा। यह सहायता प्रतिलाभ प्राप्तकर्त्ता के लिए 4000 वर्ग मीटर तक सीमित है।

2. प्लास्टिक की पालवार (मल्चिंग):– इसके लिए लाभ प्राप्तकर्त्ता को 2 हैक्टर तक लागत का 65 प्रतिशत जो अधिक से अधिक 13000 रूपये प्रति हैक्टर तक सीमित है।
3. छायाजाल घर (शेड नेट हाउस):– छायाजाल घर संरचना के नलिका, लकड़ी तथा बाँस की सरंचना के लिए लागत का 65 प्रतिशत जो अधिक से अधिक 390,266.50 और 195 रूपये प्रति वर्ग मीटर तक सीमित है। यह सहायता प्रति लाभकर्त्ता 4000 वर्गमीटर तक सीमित है।
4. प्लास्टिक की टनेल्सः– प्रति लाभकर्त्ता को 4000 वर्ग मी. तक लागत का 50 प्रतिशत जो अधिक से अधिक 19.50 रूपये प्रति वर्ग मी. तक सीमित है।

(स्रोतः हरियाणा किसान आयोग द्वारा मुद्रित पुस्तिका)

इन सब के अलावा कुछ अन्य विशेष स्थिति एवं परिस्थिति के अनुसार सरकार द्वारा सहायता दी जा रही है जैसे

- पक्षी/ओलावृष्टि बचाव ईकाई के लिए
- उच्च मूल्य वाली सब्जियों एवं फूलों की पौध एवं अन्य सामग्री के लिए
- समेकित पोषक तत्व प्रबंधन/समेकित नाशीजीव प्रबंधन को प्रोत्साहन हेतू।
- केंचुआ खाद ईकाइयों के लिए तथा बागबानी यंत्रीकरण के लिए भी अनुदान राज्य सरकार द्वारा दिया जाता है।

पॉलीहाउस में खेती करने का तरीकाः– अब अधिकतर किसान पॉलीहाउस के बारे में जानना चाहते हैं ताकि वे अधिक मुनाफा कमा सकें। इसमें भूमि में अधिक से अधिक जैविक खाद डाली जाती है जिससे जमीन की गुणवत्ता बढ़ सके। तत्पश्चात् पौधों के लिए बेड तैयार किए जाते हैं। ये बेड इस तरह के बने होने चाहिए जिससे पौधों को धूप और हवा पर्याप्त मात्रा में मिल सके। साथ ही इसकी चौड़ाई का भी ध्यान रखना चाहिए जिससे आसानी से क्यारियों में जाकर तुड़ाई, कटाई, एवं अन्य सस्य क्रियाएँ समय–समय पर की जा सकें।

पॉलीहाउस में उगाई जाने वाली सब्जियों का चुनावः– मुख्यतः पॉलीहाउस के अंदर बेमौसमी उत्पादन के लिए वहीं सब्जियों उपयुक्त होती हैं जिनकी बाजार में माँग अधिक हो और वे अच्छी कीमत पर बिक सकें। फसलों का चुनाव क्षेत्र की ऊँचाई के आधार पर कुछ भिन्न हो सकता है। पर्वतीय क्षेत्रों में जाड़े में मटर, पछेती फूलगोभी, पत्तागोभी, फ्रेंचबीन, शिमला मिर्च, टमाटर, मिर्च, मूली, पालक आदि फसलें तथा ग्रीष्म एवं बरसात में अगेती फूलगोभी, भिन्डी, मिर्च, पत्तागोभी, टमाटर, मिर्च आदि की पौध भी पॉलीहाउस में ली जा सकती हैं। इसी प्रकार ग्रीष्म ऋतु में शीघ्र फलन के लिए टमाटर, बैंगन, मिर्च, शिमला मिर्च, लौकीवर्गीय सब्जियों की पौध भी जनवरी में पॉलीहाउस में तैयार की जा सकती है।

पॉलीहाउस के अदंर सस्य क्रियाएँ एवं देखभालः– पॉलीहाउस के भीतर उगाई जाने वाली सब्जियों में वे सभी सस्य क्रियाएँ करनी पड़ती हैं जिन्हें खुले में अपनाते हैं। इसके अलावा गोबर की खाद का भी भरपूर उपयोग करना चाहिए। बीच–बीच में मिट्टी का निर्जमीकरण आवश्यक होता है। जिसके लिए फार्मेल्डिहाईड या अन्य रसायन या प्लास्टिक शीट बिछाकर सौर ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है। प्रति इकाई क्षेत्र में पौधों की संख्या बढ़ाकर पौधों की उचित छटाई द्वारा बेलदार फसलों से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। साधारण पॉलीहाउस में दिन में उचित वायु संचार का प्रबंधन अत्यावश्यक है।

पॉलीहाउस की अवधारणाः– पॉलीहाउस खेती में ऑफ सीजन के फूल, सब्जियों उगाई जाती हैं। यह प्रतिकूल मौसम परिस्थितियों में भी सब्जियों के उत्पादन में उपयोगी है। पर्यावरण नियंत्रित पॉलीहाउस में किसी भी सब्जी के उत्पाद के लिए आवश्यकतानुसार तापक्रम को घटाया–बढ़ाया जा सकता है।

सरकार द्वारा पॉलीहाउस को बढ़ावा देना/सरकारी प्रोत्साहन

हरियाणा सरकार की पहलः– अभी हाल में एक समाचार के अनुसार हरियाणा सरकार द्वारा 17 करोड़ की लागत से लगभग 100 एकड़ जमीन में लगने वाले पॉलीहाउस लगाने के लिए किसानों को अनुदान दिया गया इसके अलावा हरियाणा सरकार की और से किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए भी पॉलीहाउस में संरक्षित खेती करने के लिए प्रेरित किया जा रहा है और आव यक सारी

सुविधाएँ भी मुहैया कराई जा रही है। जिसके फलस्वरूप पॉलीहाउस के माध्यम से की गई खेती अन्य खेती से कई गुणा पैदावार लेकर किसान समृद्ध हो चुके हैं। उदाहरण के लिए करनाल जिले में 17 करोड़ की लागत से लगभग 100 एकड़ जमीन में लगने वाले पॉलीहाउस लगाने के लिए किसानों को अनुदान दिया गया हैं। परिणामस्वरूप करनाल जिले में सैकड़ों एकड़ भूमि में पॉलीहाउस लगाए गए हैं। पॉलीहाउस लगाने के लिए सरकार द्वारा 65 प्रतिशत अनुदान भी दिया जा रहा है। साथ ही पहले वर्ष में लगने वाले पौधों का खर्च भी सरकार वहन करती है। आज हरियाणा में लगभग 1500 एकड़ क्षेत्रफल में पॉलीहाउस के अदंर खेती हो रही है। हरियाणा सरकार नाबार्ड के सहयोग से किसान उत्पादक समूह (एफ पी ओ) बनाकर सामूहिक रूप से पॉलीहाउस में खेती व उसके उत्पादों के विपणन में सीधे सहयोग कर रही है ताकि किसानों को अधिक से अधिक मुनाफा मिल सके।

पॉलीहाउसः (गाजियाबाद) उत्तर प्रदेश का उदाहरणः— राष्ट्रीय बागबानी मिशन के माध्यम से पॉलीहाउस को बढ़ावा देने के लिए यूपी सरकार ने एक योजना चलाई है। यहाँ के दो दर्जन से अधिक किसानों ने इस साल सब्जी और फूल का उत्पादन कर रहे हैं जो अपने आप में एक बड़ा परिवर्तन है। सरकार के प्रोत्साहन से सिंभावली, हापुड़ ब्लॉक और आस—पास के 25 से 30 किसानों का रूझान पॉलीहाउस की तरफ बढ़ा है। सरकार का कहना है जो लागत आएगी उसका लगभग 47 प्रतिशत अनुदान दिया जाएगा। पॉलीहाउस पर अनुदान की यह योजना उत्तर प्रदेश में 2005 से है।

हिमाचल सरकार की योजनाएँः— कृषि विभाग के आदेशानुसार हिमाचल प्रदेश राज्य में पॉलीहाउस लगाने के लिए किसानों को प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन दिया जा रहा है। सरकारी योजना के अनुसार पॉलीहाउस की खेती के प्रति किसानों को जोड़ने के लिए 85 प्रतिशत तक का अनुदान दिया जा रहा है। इसके लिए किसान मात्र 15 प्रतिशत ही राशि अदा करते हैं। इसके अलावा यहाँ प्रमुख प्रशिक्षण केन्द्र भी खोले गए हैं।

पॉलीहाउस के फायदे

- पॉलीहाउस में ऑफ सीजन सब्जियाँ उगाई जा सकती जिस कारण तैयार की गई ऑफ सीजन सब्जी के बाजार में ऊँचे दाम मिलते हैं।
- पॉलीहाउस में इंडों इजराइल तकनीक का प्रयोग किया जाता है। जिसके चलते जहाँ सब्जी की फसल में खाद व दवाईयों का प्रयोग तो कम होता ही है साथ ही पानी की भी बचत होती है।
- पॉलीहाउस में की गई खेती संरक्षित एवं आपदा रहित है।
- इसमें वर्ष भर अनवरत उत्पादन को बढ़ावा मिलता है।
- पॉलीहाउस प्रतिइकाई क्षेत्र उत्पादन, उत्पादकता एवं गुणवत्ता को बढ़ा देता है।
- अगेती एवं बेमौसमी सब्जी के अतिरिक्त फूलों की खेती भी की जा सकती है।
- इसके माध्यम से सब्जी उत्पादन का क्षेत्रफल बढ़ता है और अन्य कृषि संसाधनों का विकास होता है। इस प्रकार पॉलीहाउस कृषि की तकनीक में एक नई क्रान्ति का शुभारंभ है।
- किसानों को नियमित आय की प्राप्ति होती है जिससे उसकी रोजमर्रा की जिंदगी में आर्थिक तंगी नहीं आती है।

निष्कर्ष

आज के परिवेश में पॉली हाउस तकनीक द्वारा सब्जी व फूलों की खेती किसानों की आर्थिक दशा सुधारने का एक सशक्त माध्यम बना है। आवश्यकता है पॉली हाउस तकनीकों में नए—नए विकल्पों की तलाश की ताकि बाजार की की मांग को ध्यान में रखकर उत्पादन प्रणाली में बदलाव लाया जा सके। आवश्यकता है उत्पादन से लेकर विपणन तक की समझ किसानों में विकसित करने की जिससे की अधिक से अधिक मुनाफा मिल सके। इस दिशा में उत्पाद विशेष के लिए बाजार विकसित करना तक किसानों को संगठित होकर एक ही प्रकार के उत्पाद के लिए बड़े—बड़े हब बनाने की ताकि उससे संबधित सभी प्रकार की सेवाएँ एक ही स्थान पर विकसित हो सकें साथ ही प्रसंस्करण से संबधित ईकाइयों की भी स्थापना की जा सके।

डबल्ड हैप्लाइडी प्रजनन के माध्यम से गेहूँ सुधार

मधु पटियाल एवं धर्मपाल
भा.कृ.अनु.सं– (क्षेत्रीय केंद्र, टुटीकंडी) शिमला, हिमाचल प्रदेश–171004

गेहूँ एक महत्वपूर्ण खाद्यान्न फसल है जो दुनिया के कुल कृषि क्षेत्र के 25 प्रतिशत में उगाई जाती है। पिछले पचास वर्षों से गेहूँ प्रजनन कार्यक्रम के द्वारा गेहूँ की उपज 0.7 टन है. प्रति दशक हुई है, जो एक महत्वपूर्ण आनुवंशिक लाभ है। लेकिन बढ़ती हुई जनसंख्या और बदलती जलवायु परिस्थितियाँ हमें गेहूँ का उत्पादन बढ़ाने के लिए अग्रसर करती है। इसलिए गेहूँ की नई किस्मों को विकसित करने के लिए पारंपरिक प्रजनन को आधुनिक जैवप्रौद्योगिकी के साथ पूरित किया जाना चाहिए।

गेहूँ प्रजनन में जीन स्थिरता और शुद्ध किस्में विकसित करने के लिए पारंपरिक विधि से आठ या नौ साल तक स्वपरागण (सेल्फ पॉलिनेशन) करना पड़ता है। इस समय को डबल्ड हैप्लाइड प्रजनन के माध्यम से कम किया जा सकता है। हैप्लाइड वह पौधे होते हैं जिनमें गेमेटिक क्रोमोसोम नंबर होता है। जब हम हैप्लाइड पौधों के क्रोमोसोम को सहज या कृत्रिम रूप से दुगुना करते हैं तो हमें डबल्ड हैप्लाइड पौधे मिल जाते हैं। डबल्ड हैप्लाइडी प्रौद्योगिकी ना केवल पारंपरिक प्रजनन कार्यक्रम को तेज करने में मदद करती है अपितु हमें 100 प्रतिशत होमोजाइगस लाईंने भी प्रदान करती हैं। यह आधुनिक प्रौद्योगिकी पौध प्रजनन में समय, स्थान और श्रम की भी बचत करती है ।

गेहूँ में डबल्ड हैप्लाइडी बनाने की विधियाँ

गेहूँ में डबल्ड हैप्लाइडी बनाने के कई तरीके हैं जैसे कि–पार्थेनोजेनेसिस, स्यूडोगैमी, एन्थर ओवरी को कृत्रिम मीडियम में उगाना। अब गेहूँ में जौ, मक्का और इम्पेरेटा स्यलिंडरिका घास से प्रजनन द्वारा भी डबल्ड हैप्लाइड बनाए जा रहे हैं।

एन्थर कल्चर विधि से गेहूँ के बंद पुष्प को एक विशेष अवस्था (मिड–लेट यूनी न्यूक्लियेटेड स्टेज) में एक कृत्रिम पोषक तत्व में विषाणुहीन तरीके से उगाया जाता है। इसके बाद इसको अंधेरे में रखा जाता है और छोटे पौधे आने पर रोशनी में रख दिया जाता है। बाद में इन पौधों को विशेष रसायन (कॉल्चीसिन) की सहायता से डबल्ड हैप्लाइड में परिवर्तित किया जाता है। यह प्रौद्योगिकी गेहूँ में डबल्ड हैप्लाइड बनाने की लिए ज्यादा इस्तेमाल नहीं होती है क्योंकि यह गेहूँ की कुछ चुनिंदा प्रजातियों में ही लागू हो सकती है। इस प्रौद्योगिकी से हमें श्वेत (एल्बीनो) पौधे बहुत मिलते हैं और डबल्ड हैप्लाइड पौधे बहुत कम होते हैं।

दूर के विभिन्न जाति के पौधों से संकरण करके (वाल्ड हाइब्रिडाईजेशन) गेहूँ में डबल्ड हैप्लाइड बनाने की सर्वश्रेष्ठ विधि है। इसके लिए जौ, मक्का या इम्पेरेटा स्यलिंडरिका घास को सबसे ज्यादा इस्तेमाल किया गया है। इस विधि में गेहूँ की बालियों को विभिन्न जाती के पौधों का पराग डाला जाता हैं। कुछ दिन बाद इन दूर की फसलों का क्रोमसोम खत्म हो जाते हैं और अगुणित भ्रूण (हैप्लाइड एंब्रीयो) को हम कृत्रिम पोषक तत्व/भोजन में जीवणुहीन परिस्थितियों में उगा लेते हैं। इससे हमें हैप्लाइड पौधा मिलता है जिसमें गेहूँ का गैमेटिक क्रोमोसोम नंबर होता है। थोड़ा बड़ा होने पर पौधों को कॉल्चीसिन द्वारा डबल्ड हैप्लाइड में परिवर्तित कर दिया जाता है।

जौ द्वारा गेहूँ का प्रजनन (बारक्ले, 1975) गेहूँ की कुछ ही प्रजातियों में किया जा सकता है इसलिए मक्का का इस्तेमाल किया गया हैं (जेंकतेलेर और नितजसचे, 1984)। मक्का द्वारा डबल्ड हैप्लाइड बनाने में मक्के को पोलिहाउस में लगाना पड़ता है जिससे डबल्ड हैप्लाइड बनाने की

तालिका 1 : पारंपरिक प्रजनन और हैप्लाइडी प्रजनन में प्रमुख अंतर

विशेषता	हैप्लाइडी प्रजनन	पारंपरिक प्रजनन
शुद्ध किस्में विकसित करने के लिए समय	2–3 वर्ष	7–8 वर्ष या अधिक
हेटरोसिस की स्थिरता	संभव	संभव नहीं
100 प्रतिशत होमोजाइगोसिटी	हाँ	नहीं
खर्च	ज्यादा	कम

कीमत में इजाफा होता है। साथ ही साथ मक्के के पराग की जीवनशक्ति (पोलन वाइबिलटी) कम होती हैं और हमें डबल्ड हैप्लाइड के कम पौधे मिलते हैं।

हाल ही में चौधरी और अन्य वैज्ञानिकों (2005) ने इम्पेरेतटा स्यलिंडरिका (एक जंगली घास) के इस्तेमाल से गेहूँ में डबल्ड हैप्लाइड बनाने की नई विधि की खोज की है। यह घास गेहूँ के किनारे काफी मात्रा में मिलता है और सदाबहार होता है, जिससे इसे बार–बार उगाना नहीं पड़ता। इसकी पौलेन वाइयबिलिटी भी बहुत देर तक होती है और हमें और विधियों की अपेक्षा ज्यादा डबल्ड हैप्लाइड पौधे मिलते हैं। हाल ही में देश में इम्पेरेटा स्यलिंडरिका द्वारा विकसित प्रथम डबल्ड हैप्लाइड गेहूँ ''हिम प्रथम'' भी विकसित किया गया है।

डबल्ड हैप्लाइडी का पौध प्रजनन में उपयोग

डबल्ड हैप्लाइडी ब्रीडिंग पौध प्रजनन में एक महत्वपूर्ण घटक बन सकता है। कई देशों में इस प्रौद्योगिकी से गेहूँ की किस्में विकसित की गई है। इस प्रौद्योगिकी के निम्न उपयोग है :

- यह प्रौद्योगिकी प्रजनन में इस्तेमाल होने वाली चयन प्रक्रिया को छोटा कर देती है जिससे नई किस्मों को बनाने में कम समय लगता है।
- डबल्ड हैप्लाइड लाईने सीधी नई किस्म या मूल्यवान आनुवंशिक स्टॉक्स के रूप में जारी की जा सकती है।
- इस प्रौद्योगिकी को हम मात्रात्मक आनुवंशिक अध्ययन (क्वांटिटेटिव जेनेटिक स्टडीज) के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं।
- डबल्ड हैप्लाईड लाईने जीनोम मैपिंग के लिए आदर्श होती हैं क्योंकि वे होमोज़ाइगस होती हैं।
- फल–फूल के कुछ पौधे जिनमें व्यवसायीकरण में बहुत समय लगता है उनको इस प्रौद्योगिकी से बढ़ाया जा सकता है।

गेहूँ में डबल्ड हैप्लाईड प्रौद्योगिकी द्वारा प्रगति

एन्थर कल्चर विधि द्वारा गेहूँ की कई किस्में विकसित की गई है। गेहूँ में इस विधि से सबसे पहले चीन ने जिंघुआ नंबर 1 और नंबर 764 बनाया। इस विधि द्वारा फ्रांस और हंगरी ने फ्लॉरिन और जीके डेलीबाब किस्में बनाई।

निष्कर्ष

गेहूँ एवं मुख्य खाद्यान्न फसल है इसलिए आने वाले वर्षों में भोजन की माँग को पूरा करने के लिए हमें विभिन्न स्तर पर इसके सुधार के प्रयास करने होंगे। डबल्ड हैप्लाइड ब्रीडिंग ना केवल पारंपरिक प्रजनन कार्यक्रम को तेज करके गेहूँ की नई प्रजातियाँ विकसित करने में मदद करेगी अपितु–आनुवंशिकी और जेनेटिक इंजीनियरिंग के अन्य अनुसंधान पहलुओं में भी उपयोगिता प्रदान करेगी। डबल्ड हैप्लाइड बनाने की विभिन्न तकनीकों में से मक्का और इम्पेरेटा स्यलिंडरिका के माध्यम से सरलता और जीन प्रारूप विशिश्टता (जेनोटाईप स्पेसिफिसिटी) से डबल्ड हैप्लाइड्स बनाए जाने की ज़्यादा क्षमता रखते हैं। डबल्ड हैप्लाइड पौधों के आनुवंशिकी, फसल सुधार एवम् विकास, पादप जैव प्रौद्योगिकी आदि विषयों में कई उपयोग हैं। साथ ही यह इंड्यूस्ड म्यूटाजेनेसिस और आनुवंशिकी परिवर्तनों (जेनेटिक ट्रॉन्स्फॉर्मेशन्स) के लिए प्रभावी अनुसंधान उपकरण प्रदान करता है। इसलिए यह आधुनिक उच्च प्रौद्योगिकी गेहूँ में इस्तेमाल होनी वाली पारम्परिक प्रजनन प्रक्रिया को निश्चित रूप से तेजी से बढ़ाने में सहायक होगी ।

हैप्लाइडी बनाने की विधियाँ	विकसित किस्में	देश
एन्थर कल्चर	हुआ पे 1, लंग हुआ 1, जिंघुआ 1, युंहुआ 1, युंहुआ 2	चीन
एन्थर कल्चर	खारोबा	मोरक्को
एन्थर कल्चर	फ्लॉरिन	फ्रांस
गेहूँ मक्का	ग्लोसा, फोर फ, लिटेर, मिरंडा	रोमानिया
गेहूँ इम्पेरेटा स्यलिंडरिका	हिम प्रथम	भारत

शटल ब्रीडिंगः एक प्रभावी तकनीकी

देवमणि बिन्द, ऋषिपाल गंगवार, आरेश कुमार, सुरेश कुमार, रिंकी, लोकेन्द्र कुमार एवं संजय कुमार सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान करनाल

परिचय एवं महत्त्व

शटल ब्रीडिंग का तात्पर्य फसल सुधार में विभिन्न संततियों में उपलब्ध प्रजनन सामग्री को मुख्य अनुसंधान केन्द्र तथा लक्षित वातावरणीय केन्द्रों के मध्य मूल्यांकन माना है। इसके द्वारा उत्कृष्ट प्रजाति विकास में लक्षित वातावरणीय अनुकूलता समाहित की जाती है। शटल ब्रीडिंग में विसंयोजी पीढ़ियों को दो भिन्न स्थानों पर बारी–बारी से उगाते हैं अर्थात् एफ$_2$ को एक स्थान पर एफ$_3$ को दूसरे स्थान पर एफ$_4$ को फिर पहले स्थान पर एफ$_5$को फिर दूसरे स्थान पर उगाते हैं। इस विधि का विकास मेक्सिको (सीमिट) में गेहूँ के प्रजनन के लिए किया गया था। ऐसा माना जाता है कि बारी–बारी से इन दोनों स्थानों पर वरण करने से जो भी किस्में प्राप्त होगी वह कई वातावरणों में अच्छा निष्पादन देगी। अतः इस विधि से विकसित किस्में विभिन्न वातावरणों में खेती के लिए उपयुक्त होंगी।

विश्व शान्ति पुरस्कार विजेता ड़ा. नार्मन बॉरलॉग (1970) के अनुसार इस तकनीकी के माध्यम से गेहूँ की किस्मों में रोगरोधी क्षमता एवं अधिक उपज क्षमता तथा पर्यावरण के अनुसार एक विस्तृत श्रृंखला और रोग प्रतिरोधी गेहूँ की किस्मों में विशिष्ट रूप से मूल्यवान एवं अति महत्त्वपूर्ण लक्षणों के नये संयोजन की व्यापक स्पेट्रम के साथ उच्च उपज क्षमता में प्रकाश के प्रति असंवेदनशील किस्में विकसित की हैं। यह तकनीक मुख्य रूप से मेक्सिको और अमेरिका के कुछ हिस्सों सहित पड़ोसी देशों में गेहूँ का उत्पादन बढ़ाने में अधिक योगदान दिया है। भारत में हरित क्रान्ति में एक अति महत्त्वपूर्ण अतुलनीय योगदान शटल ब्रीडिंग का भी रहा है जिसे नजर अदांज नहीं किया जा सकता है।

गेहूँ में शटल प्रजनन के मुख्य तत्व एवं उसके परिणाम

शटल ब्रीडिंग के लिए महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं में विभिन्न वातावरण शामिल हैं अर्थात् शटल ब्रीडिंग विधि में एक ही प्रजाति एवं जननद्रव्य को दो विभिन्न वातावरण में जाँच की जाती हैं। इस तकनीकी का मुख्य उद्देश्य उच्च उपज क्षमता एवं रोगरोधी किस्मों का विकास करना तथा एक से अधिक स्थानों पर परीक्षण करना साथ ही रोग रोधी किस्मों के विशिष्ट तनाव के लिए प्रत्येक वातावरण में जीनोटाईप की पहचान करना।

प्रसिद्ध वैज्ञाानिक डा. संजय राजाराम के अनुसार इस प्रणाली का उपयोग करके मेक्सिको (सीमिट) के वैज्ञानिक महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। इसमें महत्त्वपूर्ण जननद्रव्य को विकसित करना और अधिक उपज के लिए अनुकूल स्थिति पैदा करना तथा अधिक आनुवंशिक गुणों को सुधार कर किसानों को अधिक से अधिक लाभ पहुँचा रहे हैं। साथ ही शटल ब्रीडिंग तकनीकी का प्रयोग करके विश्व स्तर पर सूखा प्रभावित एवं सूखा के प्रति सहनशील किस्मों का विकास कर रहे हैं। इस तकनीकी में हर साल 500–800 लाईनों को ब्रीडिंग कार्यक्रम में शामिल किया जाता है तथा इन लाईनों को मुख्य रूप से क्रासिंग ब्लाक में शामिल करके इनमें कुछ महत्त्वपूर्ण लक्षणों के प्रति सहनशील एवं रोग के प्रति सहनशील लाईनों के साथ क्रास बनाये जाते हैं। जिससे एफ$_1$ संतति तैयार की जाती है तथा शटल ब्रीडिंग की विधि से जननद्रव्य संग्रह के आधार पर प्रजनन जीनोटाईप लगभग 400 उन्नत लाईनों का उपज परीक्षण करके लक्षित केन्द्रों पर भेजा जाता है तथा इस प्रक्रिया को करने में लगभग 5–6 साल लग जाते हैं।

सबसे पहले इस विधि का प्रयोग मेक्सिको स्थिति सीमीट (1970–1995) के बीच की गयी थी तथा इस विधि का उपज पर लगभग 0.9 प्रतिशत की अतुलीय वार्षिक वृद्धि हुई, जो उस समय एक सफल प्रयोग के साथ एक नयी तकनीकी के माध्यम से उपज में भारी वृद्धि दर थी। यह प्रजनन रणनीति लगभग 20वीं सदी के अंत तक काफी विकसित हुई और इसी का परिणामस्वरूप दुनिया भर में हरित क्रान्ति का सूत्रपात हुआ।

शटल ब्रीडिंग का चयन सिद्धान्त एवं विभिन्न केन्द्रों पर परीक्षण

शटल ब्रीडिंग के सिद्धांत के अनुसार मुख्य रूप से प्रजनन दृष्टिकोण आनुवंशिक पृष्ठभूमि के साथ–साथ वातावरण का विशेष ध्यान रखना चाहिए। जब जीनोटाईप का पैदावार विभिन्न वातावरण में सकारात्मक रूप से होती है तो उस जीनोटाईप में सुधार किया जा सकता है। गेहूँ की नई प्रजाति का विकास करने के लिए चयन एक महत्त्वपूर्ण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से एक प्रभावी कारक है। अप्रत्यक्ष चयन का उपयोग तब किया जाता है जब एक ही लक्षण को दो विभिन्न वातावरण में मापा जाता है।

शटल ब्रीडिंग कार्यक्रम मुख्य रूप से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के योगदान से एक अति महत्त्वपूर्ण परियोजना के माध्यम से करनाल में स्थिति भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान में कार्यक्रम पर एक विशिष्ट परियोजना चलाई जा रही है तथा इस परियोजना का पाँच उपकेन्द्रों पर संचालन भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान, करनाल के माध्यम से किया जा रहा है।

भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसधांन संस्थान, करनाल में शटल ब्रीडिंग परियोजना का मुख्य उद्धेश्यः–

1. गेहूँ की अधिक उपज एवं रोगरोधी किस्मों का विकास एवं जैविक तथा अजैविक कारकों के प्रति सहनशील बनाया।
2. शटल ब्रीडिंग के कार्यक्रम इस परियोजना से जुड़े विभिन्न केन्द्रों पर जननद्रव्य का विनिमय करना तथा अलग–अलग वातावरण में उनकी जाँच करना।

भा.कृ.अनु.प..–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान करनाल में स्थिति शटल ब्रीडिंग परियोजना के साथ काम कर रहे विभिन्न उपकेन्द्रों की सूचीः–

उप केन्द्र	कार्य क्षेत्र
जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश)	मध्य क्षेत्र
जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय जूनागढ़ (गुजरात)	मध्य क्षेत्र
एस. डी. कृषि विश्वविद्यालय बीजापुर, (गुजरात)	मध्य क्षेत्र
जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, पावरखेड़ा (मध्य प्रदेश)	मध्य क्षेत्र
कृषि विश्वविद्यालय, धारवाड़ (कर्नाटक)	प्रायद्वीपीय क्षेत्र

चित्र संख्या 1 :– शटल ब्रीडिंग कार्यक्रम के माध्यम से पूर्वी प्रायद्वीपीय क्षेत्र के विभिन्न केन्द्रों पर प्रजनन समाग्री का प्रवाह

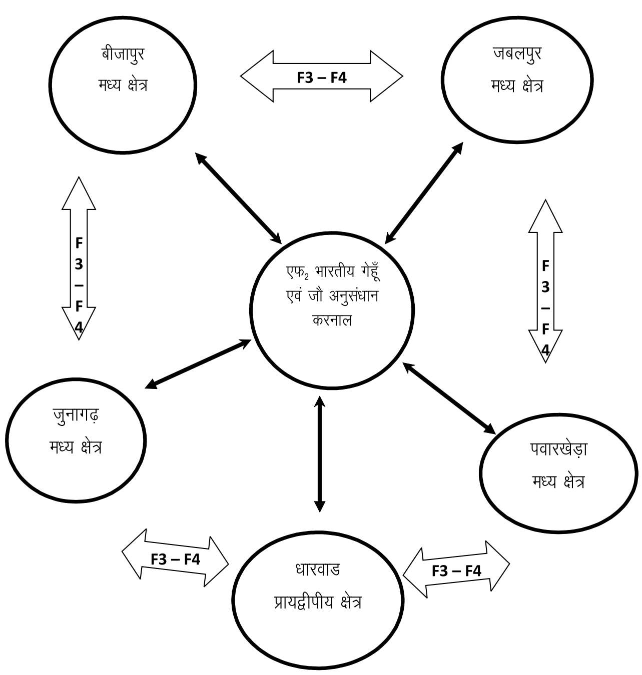

शटल ब्रीडिंग को बढ़ाने के लिए नये तरीके

बढ़ती आबादी का भरण–पोषण करने के लिए हमारे भारतीय किसानों एवं वैज्ञानिकों को एक साथ मिलकर काम करने की चुनौती है। साथ ही शटल ब्रीडिंग विधि को बढ़ाने के नये–नये तरीकों एवं उसमें आधुनिक विधियों के उपयोग करने की जरूरत है। आज दुनिया भर में अधिक फसल उत्पादन एवं रोगरोधी किस्मों का विकास करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सभी वैज्ञानिक नये–नये तरीकों एवं नये–नये मॉडलों का प्रयोग करके फसल सुधार पर काम कर रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सभी वैज्ञानिकों को फसल सुधार पर काम करने के लिए आगे आना होगा तथा एक दूसरे से इससे सम्बन्धित सभी विषयों पर बात करनी होगी तथा कृषि विशेषज्ञों को ज्यादा से ज्यादा किसानों की मदद करनी होगी साथ ही साथ उनको कृषि से जुड़ी नई–नई तकनीकों के बारे में बताना होगा। आज के किसानों को तेजी से बढ़ते हुए संसाधन एवं नये तरीकों की खेती को अपनाना होगा तथा उनका संरक्षण भी करना होगा। शटल ब्रीडिंग के माध्यम से आज के बदलते मौसम एवं वैश्विक तपन की वजह से इस विधि का अपनाकर काफी फायदा हो सकता है। जिसमें हम कम से कम जुताई, बेहतर जल उपयोग क्षमता, पौधों के स्वस्थ में सुधार तथा रोगों के प्रति रोगरोधी किस्मों का विकास कर सकेंगे।

शटल ब्रीडिंग के विभिन्न अवयव

शटल ब्रीडिंग के नये अवयवों में जीनोमिक्स के क्षेत्र में प्रगति करना तथा ट्रांसजेनिक्स और जैव प्रौद्योगिकी सूचना विज्ञान तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पादप प्रजनन को बढ़ाने के लिए तथा जननद्रव्य वैज्ञानिकों को जोड़ा जाना तथा आनुवंशिक रूप से एक साथ फसलों के जीनपूल का बेहतर प्रबंधन करना आदि शामिल है।

शटल ब्रीडिंग के पूरक प्रभाव

अखिल भारतीय गेहूँ एवं जौ सुधार परियोजना के माध्यम से इस कार्यक्रम में लगभग 206 लाईनों (एफ$_3$ से एफ$_8$) का शटल ब्रीडिंग के पाँच उप केन्द्रों पर अनुसंधान प्रयोग एवं परीक्षण चल रहा है। जिसमें सभी एफ$_1$ लाईनों का जेनेरेशन से लेकर एफ$_8$ जेनेरेशन तक के मूल्यांकन का कार्य लक्ष्य है। शटल ब्रीडिंग के माध्यम से काफी हद तक किसानों के लिए नई–नई प्रजातियों को विकसित करने में मदद मिली हैं और काफी हद तक काम भी चल रहा है। भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल ने इस प्रजनन विधि के माध्यम से चार प्रजातियों को अधिक उपज एवं रोग मुक्तकर विकसित करने में सफलता हासिल की है।

शटल ब्रीडिंग कार्यक्रम का संचालन नब्बे के दशक में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किया है। पूर्वी भारत में प्रजनन सामग्री का आदान–प्रदान आदर्श जीनोटाईप का चयन एक बेहतर अवसर एवं अनुकूल परिस्थिति के आधार पर चयन। शटल ब्रीडिंग के माध्यम से 5–7 वर्षों में एक नई प्रजाति का विकास किया जा सकता है। आज के समय में बेहतर जीनोटाईप के विकास के लिए उन्नत अनुसंधान का होना आवश्यक है तथा नई–नई परिस्थितिकी तंत्र के बदलाव के समय में नवीन जैवप्रौद्योगिकी के माध्यम से काम करने की जरूरत है। साथ ही विभिन्न अणुसूचकों का प्रयोग करके विभिन्न प्रकार के रोगों की पहचान की जा सकती है।

अतः शटल ब्रीडिंग की विधि का उपयोग करके हम रोगरोधी एवं अधिक उपज क्षमता वाली किस्मों का विकास कर सकते हैं।

शटल ब्रीडिंग विधि से विकसित किस्मों की तालिका

विकसित प्रजाति	उत्पादन क्षेत्र	उत्पादन क्षमता (कु./है.)
डी बी डब्ल्यू–93	प्रायद्वीपीय क्षेत्र	39.0
डी बी डब्ल्यू–71	उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	68.9
डी बी डब्ल्यू–107	उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र	68.7
डी बी डब्ल्यू–110	मध्य क्षेत्र	50.1

प्रक्षेत्र एवं कृत्रिम विधियों द्वारा पितृ चयन

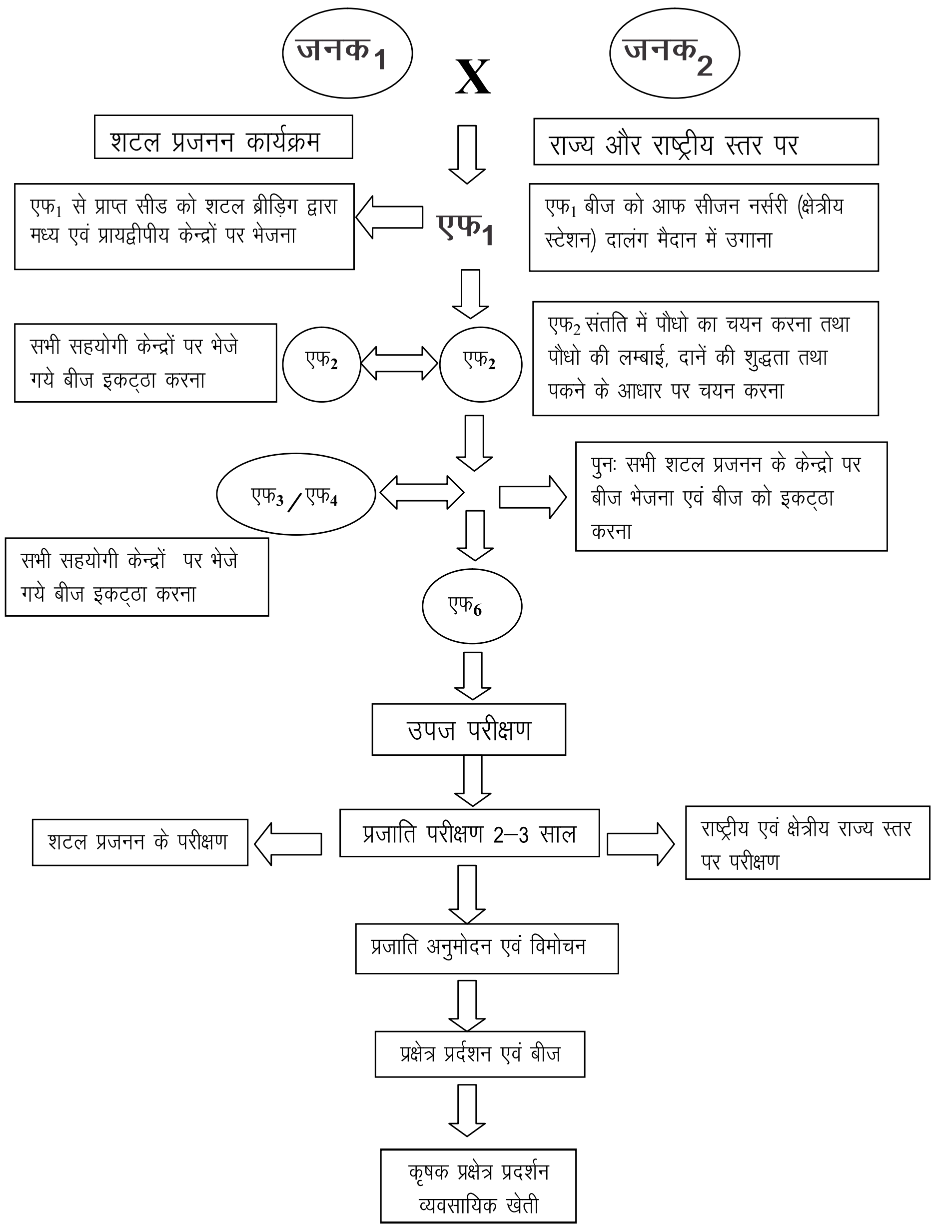

चित्र 2 –शटल ब्रीडिंग कार्यक्रम की रूपरेखा

सीधी–बिजाई धान में खरपतवार प्रबंधन

अमिता कुमावत एवं सीमा सेपट

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

धान हमारे देश की सबसे महत्त्वपूर्ण खाद्यान्न फसल है और देश की खाद्यान्न सुरक्षा में इसका महत्त्व सर्वोपरि है। भारत में लगभग 44 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र पर धान की खेती की जा रही है। धान के क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत विश्व में प्रथम स्थान पर है, लेकिन उत्पादकता की दृष्टि से भारत का स्थान काफी पीछे है। वर्तमान में विश्व की उत्पादकता (मेरा धान) 4430 किलोग्राम/हैक्टेयर है जबकि भारत में 2390 कि.ग्रा./हैक्टेयर है।

धान उत्पादक के लिए मुख्यतः रोपाई विधि अधिक उपयोग की जाती है। रोपाई विधि में जल की काफी अधिक आवश्यकता पड़ती है। एक अनुमान के अनुसार रोपाई विधि से 1 किलोग्राम धान उत्पादन के लिए 3000–5000 लीटर पानी की आवश्यकता होती है, क्योंकि इस विधि में पहले पौध तैयार करने में पानी लगता है और फिर मुख्य खेत में गारा (पडलिंग) करना पड़ता है। पडलिंग में काफी पानी लगता है। भारत में उगाये जाने वाले धान का 58 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित हैं और देश में उपलब्ध सिंचाई जल का लगभग 60 प्रतिशत हिस्सा अकेले धान उत्पादन में उपयोग होता है।

धान उगाने वाले राज्यों मुख्यतः पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश में भूमिगत–जल स्तर में गिरावट आ रही है। जिसके परिणामस्वरूप जल को भूमि से निकालने में अधिक ऊर्जा और धन की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, जलवायु परिवर्तनों के कारण भी भविष्य में धान उत्पादन के लिए जल की उपलब्धता में कमी की संभावना है? साथ ही परम्परागत विधि से धान उगाने पर मीथेन गैस (एक हरित–गृह गैस) की भी सार्थक मात्रा उत्सर्जित होती है। परम्परागत विधि से नर्सरी तैयार करने और फिर इसकी रोपाई करने में श्रमिकों की अधिक संख्या में आवश्यकता होती है।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर धान उगाने की कुछ वैज्ञानिक विधियों को अपनाने की आवश्यकता है। जिसमें प्रति इकाई जल से धान का अधिकाधिक उत्पादन हो, कम श्रमिक लगे, पर्यावरण प्रिय हो और साथ ही धान उत्पादन में कमी भी न आए। इस दिशा में धान की सीधी बिजाई विधि काफी फायदेमंद सिद्ध हुई है। यह धान की कम लागत वाली और कम पानी उपलब्ध होने की परिस्थिति में धान उगाने की एक आधुनिक विधि हैं। जिसमें बिना पडलिंग किये शुष्क भूमि में बीज की सीधी बिजाई की जाती हैं। यद्यपि सीधी बिजाई से धान में समय एवं धन की बचत होती है और समय पर खेत अगली फसल के लिए खाली हो जाता है। परंतु इस विधि से धान उगाने पर खेतों में खरपतवार की प्रमुख समस्या होती है। धान की सामान्य वृद्धि के साथ ही कई प्रकार के चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले खरपतवार उग आते हैं जो फसल में दिए गये पानी और पोषक तत्वों में अधिकांश भाग का अवशोषण कर लेते हैं। जिसके फलस्वरूप धान की गुणवत्ता और पैदावार में भारी कमी आ जाती है। परंपरागत विधि से रोपित धान में प्रथम 30 से 60 दिनों तक सीधी बिजाई सबसे महत्वपूर्ण क्रांतिक समय माना जाता है। यदि इस अवस्था पर खरपतावारों का नियंत्रण नहीं किया जाता है तो रोपाई किये गये धान में 10–40 प्रतिशत तक व सीधी बिजाई वाले धान की पैदावार में 50 प्रतिशत से भी अधिक कमी आ जाती है।

सीधी बिजाई धान में उगने वाले मुख्य खरपतवारः–

संकरी पत्ती वाले खरपतवार

ग्रास (घास खरपतवार)

1 डेक्टानोक्लोवा कोलोना (मकरा)
2 डेक्टानोक्लोवा कोलोना (साँवक)
3 डेक्टानोक्लोवा कुसगैली (जंगली धान)
4 लेप्टोक्लोवा चाइनेनसिस
5 पासजालम डिस्टिकम
6 साईनोडोन डेक्टाइलोन (बरमुडा घास)

नट ग्रास (सेजिज) खरपतवार

1 साईप्रस डाइफोरमिस
2 साईप्रस इरिया
3 साईप्रस रोटंडस

चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार

1 अमानिया रोबस्य
2 डाइगेरा आरवेंसिस (कोन्दरा)
3 एक्लिप्टा प्रोस्ट्रेटा (जलभगरा)
4 यूफोरबिया हिरटा (दूधी)
5 फाइलेंलस निरूरी (हजारदाना)
6 ट्राइएन्थेमा पारचुलाकास्ट्रम (पत्थर चट्टा)/सांटी)

धान में पाये जाने वाले खरपतवारों में सांवक एवं जंगली धान सबसे ज्यादा हानिकारक है। ये धान के पौधों से मिलते–जुलते हैं। अतः धान के खेत में इन खरपतवारों को पहचानना काफी मुश्किल होता है।

खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवस्थायें :– फसलों में खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवस्थायें फसल की वृद्धि पर निर्भर करती है। इन अवस्थाओं पर समुचित खरपतवार प्रबंधन से सबसे ज्यादा लाभ होता है। धान में खरपतवार–प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्थायें तालिका–1 में दी गई है।

तालिका–1 विभिन्न परिथितियों में धान में खरपतवार–प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्थायें

फसल	क्रांतिक अवस्थायें
1.ऊपरी भूमि में धान की सीधी बिजाई	बुआई से 6 सप्ताह तक
2.निचली भूमि में धान की सीधी बिजाई	बुआई के पहले 6 सप्ताह तक
3.निचली भूमि में धान की रोपाई	रोपाई के 30–45 दिनों तक

खरपतवार में नियंत्रण की विधियाँ :–अच्छी फसल स्वयं खरपतवारों का नियंत्रण करती हैं। सस्य क्रियाओं से खरपतवारों की रोकथाम करके अच्छी फसल ले सकते हैं, लेकिन पारम्परिक विधियों से (निराई–गुड़ाई) खरपतवार नियंत्रण करने पर लागत तथा समय अधिक लगता है। इसके साथ–साथ इन विधियों का प्रयोग करना कभी–कभी असंभव होता है। धान के लिए निम्नलिखित विधियों को अपनाया जा सकता है जो इस प्रकार है।

ग्रीष्म जुताई

खरपतवार नियंत्रण की इस विधि में गर्मी के मौसम (मई–जून) में खेत की गहरी जुताई करके छोड़ देते हैं। जिसमें मृदा में दबे हुए खरपतवारों में बीज एवं अन्य प्रजनक भाग मृदा सतह पर आकर स्वयं नष्ट हो जाते हैं। खरपतवारों की रोकथाम के साथ–साथ ही इस विधि से अन्य हानिकारक जीवों का भी नियंत्रण हो जाता है।

बीज क्यारी तकनीकी :– यह खरपतवार रोकथाम की पुरानी विधि है जिसमें बुआई से पहले खेत की सिचांई करते हैं और 15–20 दिनों के लिए खेत को वैसा ही छोड़ देते है। जिससे सभी वार्षिक खरपतवार उग आते हैं। इन खरपतवारों को जुताई करके या पैराक्वाट (1 कि.ग्रा./है) का छिड़काव करके नष्ट कर देते हैं। इसके बाद फसल बोई जाती है।

खरपतवार रहित शुद्व बीज :– खरपतवार रहित शुद्व एवं साफ–सुथरे बीज की बुआई करने से धान की फसल में खरपतवारों का प्रयोग कम किया जा सकता है।

बुआई की विधि, समय और बीज की मात्रा :– धान की बुआई मशीन द्वारा पक्तियों में करना खरपतवार नियंत्रण के हिसाब से सही होता है। धान में बुआई 20 से.मी. × 10 से.मी. की दूरी पर करने एवं समय पर करने से खरपतवारों का प्रकोप कम हो जाता है।

उर्वरक प्रबंधकः– नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश की उचित मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा एवं नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा धान की सीधी बुवाई में अंतिम जुताई से पहले प्रयोग करें एवं नाइट्रोजन की शेष एक तिहाई मात्रा कल्ले निकलने की अवस्था तथा बची हुई एक तिहाई मात्रा अवस्था आरम्भ होने पर प्रयोग करना चाहिए।

निराई–गुड़ाईः– फसल अवधि के दौरान निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है। धान बुवाई के 20–25 दिन के अन्तराल पर दो बार हाथ द्वारा निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों का नियंत्रण करना एक अच्छा तरीका हैं, हालांकि प्रायोगिक एवं आर्थिक रूप से यह सस्ता तरीका नहीं है क्योंकि श्रमिकों की कमी भी हो रही है साथ ही मजदूरी भी बढ़ती जा रही है।

फसल अवशेषों का बिह्वाहनः– सीधी बीजाई वाले धान की बुआई से पहले वाली फसल में अवशेष जो आर्थिक रूप

से अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं होते, उनका प्रयोग खरपतवारों में नियंत्रण के लिए किया जा सकता है। ये फसल अवशेष मृदा की सतह को ढक लेते हैं जिससे खरपतवारों के बीजों के अंकुरण में बाधा उत्पन्न होती है। इस प्रकार फसल में जीवन काल में फसल अवशेष खरपतवार प्रबधंन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सेसबेनिया सह–कल्वर (ब्राउन मेन्योरिंग):– सीधी बिजाई वाले धान में खरपतवार नियंत्रण की यह उपयुक्त विधि है। इस विधि में धान की बुआई के साथ ही ढैंचा की बुआई की जाती है। जब ढ़ैंचा की फसल 25–30 दिन की हो जाये तब 2,4–डी या 25 ग्रा. बिसपाईरीबैक सोडियम का प्रतिशत की दर से छिड़काव करके ढ़ैंचा की फसल को नष्ट कर देते हैं। जिससे खरपतवार भी नष्ट हो जाते हैं और साथ ही मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा में सुधार होता है।

यांत्रिक विधि से खरपतवार नियंत्रण :– यांत्रिक विधि से खरपतवार नियंत्रण केवल पंक्तियों में बोए गये धान की फसल में ही संभव है। कोनोवीडर का उपयोग खरपतवारों को नष्ट करने के लिए किया जाता है, हांलाकि यांत्रिक विधि द्वारा खरपतवारों को नष्ट करना मुश्किल और अधिक समय लेने वाला है।

शाकनाशियों द्वारा खरपतवार नियंत्रण:– शाकनाशियों का उपयोग सीधी बिजाई धान में खरपतवारों के नियंत्रण के लिए भविष्य में बढ़ने की संभावना हैं क्योंकि क्रांतिक अवस्था पर मजदूरों की उपलब्धता में कमी और उनकी बढ़ती मजदूरी के कारण पारंपरिक विधियों से नियंत्रण करना असंभव होता जा रहा है। इसके अलावा शाकनाशियों के द्वारा खरपतवारों का नियंत्रण, जल्दी, कम लागत में एवं प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है और साथ ही यह विधि आर्थिक दृष्टि से भी लाभकारी है। सीधी बिजाई वाले धान में प्रयोग किये जाने वाले प्रमुख

तालिका–2 सीधी बिजाई धान में उपयोग किये जाने वाले प्रमुख खरपतवारनाशी

शाकनाशी	सक्रिय तत्व की मात्रा (ग्रा./है.)	प्रयोग का समय	टिप्पणी
पेन्डीमेथेलिन	1000–1500	बुआई के 1–3 दिन बाद	लगभग सभी संकरी पत्ती वाले खरपतवार, चौड़ी पत्ती वाले, वार्षिक एवं सेजिज का नाश करती है। इसकी उचित क्रिया के लिए भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
आक्सीडारजाईल	80–100	बुवाई के 1–3 दिन बाद	लगभग सभी खरपतवारों का नाश करती है। इसके छिड़काव के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
बिसवाईरीबैक सोडियम	20–25	बुवाई के 25–30 दिन बाद	लगभग सभी खरपतवारों, संकरी पत्ती वाले, चौड़ी पत्ती वाले, एवं वार्षिक सैजिज का नाश करती है। इनाइनोक्लोमा स्पेसीज का बेहतर नियंत्रण करती है।
पाइराजोसल्फूरोन ईथाइल		बुवाई के 1.2 दिन बाद	सांवक के प्रभावी नियंत्रण हेतु उपयुक्त है।
प्रेटिलाक्लोर+ सेफनर	20–25	बुवाई के 3–5 दिन बाद	सभी प्रकार के घास जाति व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण के लिए उपयुक्त है।
पेंडिमेथेलिन एवं उसके बाद बिसपाईरीबैक सोडियम	750	बुवाई के 1–3 दिन बाद तथा बुवाई के 25–30 दिन बाद	व्यापक स्पेक्ट्रम खरपतवार नियंत्रण के लिए उपयुक्त।
पेनोक्सुलम	1000–1500	15–20 दिन बाद	व्यापक स्पेक्ट्रम खरपतवार नियंत्रण।
बिसपाईरीबैक+ पाइरोसल्फूरोन	22.5 20+25	बुआई के 15–20 दिन बाद	लगभग सभी घास जाति, चौड़ी पत्ती वाले एवं नट (सेजिज) का नाश हो जाता है।

शाकनाशी, उनकी मात्रा और प्रयोग विधि का विवरण सारणी–2 में दिया गया है।

शाकनाशियों के प्रयोग में सावधानियाँ

1. शाकनाशियों की उचित मात्रा का उचित समय पर प्रयोग करना चाहिए।
2. छिड़काव यन्त्र को छिड़काव करने से पहले पूर्ण रूप से साफ कर लेना चाहिए।
3. पूरे खेत में एक समान छिड़काव करना चाहिए।
4. छिड़काव करने के लिए फ्लैट फैन नोजल का उपयोग करना चाहिए।
5. शाकनाशी का छिड़काव करने के वाले व्यक्ति का शरीर छिड़काव करते समय पूरा ढका होना चाहिए।
6. छिड़काव के समय मौसम साफ होना चाहिए एवं छिड़काव हवा के विपरित दिशा में नहीं करना चाहिए।
7. छिड़काव के समय धूम्रपान व किसी खाने वाली चीज का सेवन नहीं करना चाहिए।
8. छिड़काव के बाद स्प्रे यन्त्र को अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिए।
9. छिड़काव के बाद स्नान कर लेना चाहिए तथा शाकनाशी के खाली डिब्बों को जमीन में दबा देना चाहिए।

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

सीधी–बिजाई द्वारा धान में खरपतवार नियंत्रण की विभिन्न विधियाँ है जो पहले ही बताई गई हैं। अधिकतर कृषि विशेषज्ञों का विचार है कि खरपतवारों के नियंत्रण के लिए एकीकृत खरपतवार प्रबंधन अपनाया जाना चाहिए क्योंकि खरपतवार नियंत्रण की सभी विधियाँ प्रत्येक परिस्थिति में प्रभावी नहीं होती। अतः सभी उपलब्ध विधियों का प्रयोग करते हुए खरपतवारों की संख्या का लाभदायक आर्थिक स्तर पर प्रबंधन करना एकीकृत खरपतवार नियंत्रण कहलाता है।

शाकनाशी मिश्रण का समन्वित एवं प्रभावी खरपतवार नियंत्रण हेतु उपयोग

दिनेश जिंगर[1], सम्पत लाल मून्दड़ा[2], राजेश कुमार मीना[3], मालु राम यादव[3], विजेन्द्र कुमार मीना[3], उत्तम कुमार[3] एवं रूपा राम जाखड़[4]

[1]भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110 012
[2]राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर – 313 001
[3]भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय डेरी कृषि अनुसंधान संस्थान, करनाल –132 001
[4]कृषि अनु. स्टै., स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर –334006

भारत एक कृषि प्रधान देश है। जिसकी लगभग 54.6 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। कृषि एवं इससे जुड़े सभी घटक मिलकर संपूर्ण सकल घरेलू उत्पाद का 17.4 प्रतिशत (2015–16) भाग का योगदान करते हैं। लेकिन आजकल बढ़ते जैविक एवं अजैविक प्रतिरोधों के कारण खेती का लाभः लागत अनुपात घटता जा रहा है। जो किसानों के लिए गंभीर विषय का कारण है इसके फलस्वरूप किसानो का खेती से लगाव कम होता जा रहा है। अगर सभी अवरोधों की गणना की जाए तो लगभग कुल उत्पादन का 20 से 25 प्रतिशत भाग केवल इन्हीं के कारण नष्ट होता है।

इन सभी अवरोधों में खरपतवार सर्वाधिक प्रभावित करता है। कुल नुकसान का 33 प्रतिशत भाग केवल खरपतवार के कारण ही होता है और फसल के अनुसार गणना करें तो ये 10 प्रतिशत से 90 प्रतिशत तक प्रभावित करता है। इसलिए समय पर प्रभावी खरपतवार प्रबंधन करना एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। सामान्यतः आजकल किसान लगातार रसायनिक विधि का ही उपयोग कर रहे हैं। इसमें लगातार एक ही शाकनाशी का उपयोग करने से इसकी कार्य क्षमता घटती जा रही है तथा फसलों में इसके प्रति प्रतिरोधक क्षमता का निर्माण हो रहा है। इसलिए एक से अधिक विभिन्न कार्यशैली के शाकनाशी मिश्रण में उपयोग किए जाएं तो हम प्रभावी ढंग से हमारे खेत की खरपतवार का प्रबंधन किया जा सकता है तथा प्रतिरोध निर्माण से भी बचा जा सकता है।

शाकनाशी मिश्रणः पौधों में दो या दो से अधिक अलग–अलग ढंग से कार्य करने वाले शाकनाशियों के मिश्रण को शाकनाशी मिश्रण कहते हैं। शाकनाशी मिश्रण के प्रयोग से व्यापक एवं जटिल खरपतवार श्रृंखला का नियंत्रण संभव है तथा साथ में खरपतवार विचलन एवं शाकनाशी प्रतिरोधी जैसी गंभीर समस्या से बचाव किया जा सकता है।

खेतों में शाकनाशी मिश्रण का महत्व

व्यापक तौर पर खरपतवार श्रृंखला का नियन्त्रणः– हालांकि खरपतवार नियंत्रण के लिये बाजार में आजकल लगभग 400 से अधिक शाकनाशी उपलब्ध है परन्तु अधिकांश शाकनाशी केवल सीमित खरपतवारों को ही नियंत्रित करते हैं और एक ही शाकनाशी से मनवांछित खरपतवार नियंत्रण कर पाना संभव नहीं हो पाता है परन्तु शाकनाशी मिश्रण द्वारा व्यापक खरपतवार नियंत्रण संभव है, अर्थात् शाकनाशी मिश्रण के एक ही छिड़काव में अनेक प्रकार के खरपतवारों का नियंत्रण होता है। जैसे मक्का में एट्राजीन व एलाक्लोर के मिश्रण के उपयोग से फसल में सभी प्रकार के खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण पाया गया है।

खरपतवार विचलन से बचावः लगातार एक ही प्रकार के शाकनाशी के उपयोग से खरपतवार विचलन की समस्या उत्पन्न हो जाती है जैसे कि किसी खेत में घास कूल के खरपतवारों को शाकनाशियों से नियंत्रित करने पर चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की संख्या में बढ़ोतरी हो जाती है, क्योंकि घास कूल के खरपतवार तो शाकनाशी द्वारा नियंत्रित हो जाते हैं परन्तु चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो जाती है इसी तरह यदि लगातार चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को शाकनाशी द्वारा नियंत्रित किया जाता है तो कालान्तर में घास कुल के खरपतवारों की संख्या में अधिकता हो जायेगी। ऐसी स्थिति में शाकनाशी मिश्रण के प्रयोग से इस समस्या से काफी हद तक बचाव किया जा सकता है।

खरपतवारों में शाकनाशियों के प्रति प्रतिरोधकता से बचावः शाकनाशी मिश्रण के उपयोग से खरपतवारों में प्रतिरोधकता विकसित होने की दर को धीमा/नियंत्रित किया जा सकता है। एक खरपतवारनाशी का प्रयोग बार–बार करने से प्रतिरोधकता जल्दी उत्पन्न होती है परन्तु शाकनाशी मिश्रण में अलग–अलग स्थल वाले शाकनाशी होने से प्रतिरोधकता उत्पन्न नहीं हो पाती है।

खरपतवार नियंत्रण दक्षता में वृद्धिः शाकनाशी मिश्रण के प्रयोग से अधिकांश खरपतवार कम उपयोग दर पर एक ही छिड़काव में नियंत्रित हो जाते हैं जो कि घटक के ज्यादा उपयोग दर पर भी संभव नहीं है तथा इसके द्वारा फसल को नुकसान भी नहीं होता एवं उत्पादकता में वृद्धि भी होती है।

छिड़काव की लागत में कमीः एक मनचाहा एवं प्रभावी खरपतवार नियंत्रण करने के लिए अलग–अलग शाकनाशी का बार–बार छिड़काव करना पड़ता है। परन्तु शाकनाशी मिश्रण से एक ही छिड़काव में व्यापक खरपतवार नियंत्रण संभव है क्योंकि इसमें कई शाकनाशियों का सम्मिश्रण उपयोग में लेते हैं फलस्वरूप लागत दर भी कम आती है क्योंकि एक ही छिड़काव में इसका उपयोग करके व्यापक खरपतवार नियंत्रण संभव है।

सक्रिय तत्व की मात्रा में कमीः एक अच्छा मिश्रण वह है जो अच्छी अनुकूलता के साथ प्रभावी हो तथा शाकनाशियों की कम दरों के उपयोग से उचित खरपतवार नियंत्रण कर सकता हो, जो कि अलग–अलग शाकनाशी के ज्यादा दर के उपयोग से भी संभव नहीं हो पाता है।

फसल व वातावरण के लिए सुरक्षितः खरपतवारनाशी की कम दरों के उपयोग से फसलों में उनके अवशेष कम आते हैं तथा मृदा व जल प्रदूषण भी कम होता है एवं अगली फसल को भी कोई नुकसान नहीं होता है क्योंकि मिश्रण में उपस्थित प्रत्येक शाकनाशी की कम मात्रा उपयोग में ली जाती है।

फसल–चक्र में संवेदनशील फसल उगाने का अवसरः किसी एक शाकनाशी के उपयोग से खरपतवार नियंत्रण हेतु ज्यादा शाकनाशी का उपयोग करना पड़ता है परिणामस्वरूप अगली फसल को नुकसान की सम्भावना रहनी है परन्तु मिश्रण में शाकनाशी को कम दर से उपयोग करने पर मृदा में इसके अवशेष नहीं रहते है तथा अगली फसल पर इसका कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

शाकनाशी मिश्रण के प्रकार

फैक्ट्री मिश्रण/पूर्व मिश्रितः यह मिश्रण वांछित शाकनाशियों को आवश्यक अनुपात में मिश्रित कर बनाया हुआ होता है जिसको किसान सीधा छिड़काव रूप में ले सकते हैं।

उदाहरणः परस्यूट प्लस = पेंडीमिथेलिन (30%) + इमेजाथाइपर (2%)

आइसोगार्ड प्लस = आइसोप्रोट्यूरान + 2,4–डी

एनीलोगार्ड = एनीलोफॉस (24%) + 2,4–डी (32% ई.सी)

फील्ड मिक्स अथवा टैक मिश्रणः इसमें दो या दो से अधिक शाकनाशियों को आवश्यक अनुपात में उपयोग से पहले मिश्रित किया जाता है।

उदाहरणः लासो एट्राजीन = एट्राजीन + एलाक्लोर

शाकनाशियों से संबंधित आवश्यक जानकारीः शाकनाशियों का छिड़काव संबंधित व्यक्ति अथवा विषय विशेषज्ञ से सलाह लेने के पश्चात् या खरीदे गये शाकनाशी पर लिखे गये लेबल अथवा साथ में मिले प्रपत्र पर दी गई जानकारी के अनुसार ही अनुपात करें। बाजार में उपलब्ध शाकनाशी रसायनों को विश्वसनीय लाइसेन्सधारी से ही खरीदें। यह सुनिश्चित करें कि शाकनाशी की समाप्ति तिथि निकल तो नहीं गई। यह भी सुनिश्चित करें कि प्रयुक्त किये जाने वाले रसायन का असर जमीन में कब तक रहेगा ताकि अगली फसल का उसी अनुरूप चयन किया जा सके।

रसायन के छिड़काव हेतु पानी की मात्राः ईकाई क्षेत्र में छिड़काव हेतु पानी की मात्रा मुख्यतयाः छिड़काव करने वाले आदमी के चलने की गति, मशीन के प्रकार (नैपसैक अथवा फूट स्प्रेयर अथवा पावर स्प्रेयर) नोजल के प्रकार (प्लैट फैन, फ्लड जेट एवं सौलिड केन नोजल) तथा फसल की अवस्था आदि बातों पर निर्भर करती है। इकाई क्षेत्र में छिड़काव हेतु कितना पानी आवश्यक होगा, इस हेतु छिड़काव मशीन से परीक्षण (जिसका क्षेत्रफल हमें मालूम है) में छिड़काव कर निर्धारित क्षेत्र में छिड़काव हेतु पानी की मात्रा निम्नानुसार ज्ञात कर सकते हैं। सामान्य तौर पर 400–500 लीटर पानी प्रति हैक्टेयर अनुशंसित है।

फसलों में शाकनाशियों का प्रयोगः बाजार में उपलब्ध महत्वपूर्ण शाकनाशी मिश्रण तालिका–1 में प्रदर्शित किया गया है। कौन सी फसल में कौन सा शाकनाशी मिश्रण का प्रयोग, उसकी मात्रा, छिड़काव का समय तथा किस तरह के खरपतवारों पर प्रभावी है तालिका–2 में प्रदर्शित किया गया है। शाकनाशी मिश्रण का प्रयोग सावधानी से करें

तालिका 1: फसलों में व्यापक खरपतवार श्रंखला नियंत्रण हेतु बाजार में उपलब्ध मुख्य शाकनाशी मिश्रण

क्र.सं.	सम्मिश्रण उत्पाद	नाम	उपयोग
1.	एलाक्लोर + एट्राजीन	लासोएट्राजीन	मक्का, ज्वार व गन्ने में एकवर्षीय खरपतवारों के नियंत्रण हेतु।
2.	एमीट्रायन + एट्राजीन	गेसापेक्स कोम्बी 500 एफ. डब्ल्यू.	गन्ने में खरपतवार नियंत्रण हेतु
3.	एनीलाफॉस 24% + 2,4–डी 32% ई.सी.	एनीलागार्ड प्लस	धान में व्यापक श्रंखला खरपतवार नियंत्रण हेतु सेजेज सहित
4.	मेटसल्फ्यूरोन मिथायल 10% + क्लोरोम्यूरान इथायल 10% + सरफेक्टेन्ट	आलमिक्स	धान में व्यापक श्रंखला खरपतवार नियंत्रण हेतु सेजेज सहित
5.	मीजोसल्फ्यूरोन मिथायल 3% +आइडोसल्फ्यूरान मिथायल सोडियम 0.6% डब्ल्यू.जी.	अटलांटिस	गेहूँ में व्यापक श्रंखला खरपतवार नियंत्रण के लिये
6.	इमाजिथापर (0.2%) + पेण्डीमेथीलीन (30%)	वेलार 32 ई.सी.	सोयाबीन में व्यापक श्रृंखला खरपतवार नियंत्रण हेतु
7.	सल्फोसल्फ्यूरान 75% + मेटासल्फ्यूरान 5% डब्ल्यू.जी.	टोटल	गेहूँ में व्यापक श्रंखला खरपतवार नियंत्रण हेतु।
8.	बेनसल्फ्यूरान + प्रीटीलाक्लोर	लान्डेक्स पावर 6.6 ई.सी.	धान में व्यापक श्रृंखला खरपतवार प्रबंधन हेतु।

तालिका 2: महत्वपूर्ण फसलों में शाकनाशी मिश्रण की प्रयोग विधि एवं मात्रा

क्र.सं.	फसल	मिश्रण	प्रयोग विधि
1.	गेहूँ व जौ	i. क्लोडिनाफॉव (60 ग्रा./है.) + 2,4–डी (500 ग्रा./हे.)	फसल बुवाई के 28–35 दिन पश्चात् टैंक मिक्स करके प्रयोग करें।
		ii. क्लोडिनाफोब (60 ग्रा./है.) + आईसोप्रोट्यूरोन (500 ग्रा./है.)	फसल बुवाई के 28–35 दिन पश्चात् टैंक मिक्स करके प्रयोग करें।
		iii. सल्फोसल्फ्यूरान (30 ग्रा./है.) + 2,4–डी (0.75 ग्रा./है.)	फसल बुवाई के 28–35 दिन पश्चात् टैंक मिक्स करके प्रयोग करें।
2.	मक्का, ज्वार व बाजरा	एट्राजीन (0.75 कि.ग्रा./है.) + पेण्डीमेथीलीन (0.75 कि.ग्रा./है.)	टैंक मिक्स, अंकुरण पूर्व
3.	सोयबीन	इमाजीथापर + पेण्डीमेथीलीन	अंकुरण पूर्व
4.	धान	प्रीटीलाक्लोर + 2,4–डी, ई.ई.	बुवाई के 4 दिन पश्चात् उच्च भूमि धान में
5.	कपास	पेण्डीमेथीलीन (1.5 कि.ग्रा./है.) + डायरॉन (1.0 कि.ग्रा./है.)	अंकुरण पूर्व
6.	गन्ना	2,4–डी + एट्राजीन	अंकुरण पूर्व अथवा पश्चात्

अन्यथा फायदे के बजाय नुकसान हो सकता है। थोड़ी सी भी शंका की स्थिति में छिड़काव से पूर्ण संबंधित व्यक्ति से शंका समाधान करने के उपरान्त ही छिड़काव करें।

शाकनाशी मिश्रण के उपयोग संबन्धित सावधानियाँ

1. किसान को शाकनाशी के बारे में सम्पूर्ण जानकारी होनी चाहिए जिसका वो मिश्रण उपयोग करना चाहता है क्योंकि दो ऐसी शाकनाशी जिनको मिलाने पर लाभ के स्थान पर नुकसान भी हो सकता है उसे नहीं मिलाना चाहिए।
2. साफ पानी का उपयोग करना चाहिए। मशीन में पानी भरते समय छननी का प्रयोग आवश्यक करें।

3. किसान को तकनीकी रूप से जागरूक होना चाहिए क्योंकि असंतुलित मात्रा का मिश्रण फसल को नुकसान पहुँचा सकता है।
4. शाकनाशी मिश्रण का छिड़काव उचित समय पर करें वरना प्रभावी खरपतवार नियंत्रण कर पाना संभव नहीं है।
5. छिड़काव के समय हवा के बहाव का विशेष ध्यान रखें। छिड़काव पूरे क्षेत्र में समान रूप से करें तथा दोहरावें नहीं।
6. छिड़काव से पहले एवं बाद में दोनों स्थिति में छिड़काव मशीन को अच्छी तरह धोकर ही प्रयोग करें।
7. छिड़काव करते समय मौसम का विशेष ध्यान रखें एवं सुबह एवं शाम के समय में ही छिड़काव करें।
8. छिड़काव के समय आँख, नाक, कान एवं मुँह पर किसी स्वच्छ आवरण का उपयोग करें।
9. हाथों में दस्ताने का उपयोग करें तथा छिड़काव के बाद साबुन से धोयें।
10. छिड़काव के समय खाना, पीना और धुम्रपान नहीं करना चाहिए।

गेहूँसा/गेहूँ का मामा

जंगली जई

छिलका रहित जौ एक महत्त्वपूर्ण खाद्यान्न

जोगेंद्र सिंह, दिनेश कुमार, रेखा मलिक, अनिल खिप्पल, विचित्र कुमार आर्य, दीपक एवं अजित सिंह खरब
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान करनाल

जौ (हार्डियम वल्गेयर एल.) सबसे पुरानी मानव प्रयोग में आने वाली फसल हैं जिसकी उत्पत्ति उत्तर पूर्व के उपजाऊ क्रिसेंट में मानी जाती है। जौ के दाने का उपयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है। जिसका अधिकतर प्रयोग पशु आहार तथा माल्ट उद्योग में बियर, व्हिस्की, ऊर्जायुक्त पेय आदि बनाने के लिए होता है। कुछ देशों में इसका प्रयोग खाद्यान्न के लिए भी किया जा रहा है। भोजन के रूप में जौ की वार्षिक खपत लगभग 2 से 36 किलोग्राम/व्यक्ति है। भारत में जौ को गरीब आदमी की फसल समझा जाता है क्योंकि इसकी खेती के लिए कम निवेश की आवश्यकता होती है। इसके अलावा जौ को अत्यंत कठिन परिस्तिथियों जैसे कि बारानी, लवणीय/क्षारीय भूमि एवम् कम उपजाऊ वाले क्षेत्रों मे सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में इसका प्रयोग खाद्य अनाज, स्थानीय मधुपेय, पशु आहार आदि रूपों में किया जाता है। उत्तर भारत के अति उच्च (समुद्र तल से 2000 मीटर या अधिक) पर्वतीय क्षेत्रों में मुख्यतः जौ ही उगाया जाता है एवं अन्य फसलों के मुकाबले अधिक पैदावार भी देता है। वर्तमान समय में जौ के औषधीय गुणों के कारण इसका प्रयोग खाद्यान्न के रूप में काफी प्रचलित हो रहा है। जौ के दाने में विभिन्न खनिज पदार्थों का समावेश होता है जैसे कि स्टार्च (65–68 प्रतिशत), प्रोटीन (10–17 प्रतिशत), बीटा–ग्लूकन (4–11 प्रतिशत), लिपिड (2–3 प्रतिशत) और खनिज लवण (1.5–2.5 प्रतिशत यद्यपि ये पोषक तत्त्व प्रजाति, फसल के लक्षणों एवं वातावरण पर काफी हद तक निर्भर करते हैं।

दानों पर उपस्थित छिलके के आधार पर जौ दो प्रकार का होता हैं। 1. छिलका जौ 2. छिलका रहित जौ 1. छिलका जौ का उपयोग अधिकतर पशुओ के आहार एवं मधुपेय बनाने के लिये होता है जबकि छिलका रहित जौ का उपयोग मुख्यतयः भोजन के रूप में होता हैं। छिलका रहित जौ मुख्तया चीन के कुइन्घै, तिब्बत पठार, नेपाल, ऑस्ट्रेलिया, मेक्सिको, कनाडा, जापान, सीरिया, इंग्लैंड, इथोपिया, अमेरिका, मिस्र, जर्मनी, स्वीडन एवं फ्रांस देशों में उगाया जाता है। भारत में छिलका रहित जौ का प्रयोग भोजन के रूप में मुख्यतः हिमाचल प्रदेश एवम् जम्मू कश्मीर के लेह–लद्दाख क्षेत्रों में होता है। हाल ही में छिलका रहित जौ में उपस्थित उच्च खनिज पदार्थ तथा औषधीय गुणों के कारण जौ एक महत्त्वपूर्ण खाद्य फसल है। छिलका रहित जौ में बीटा–ग्लूकन, प्रोटीन, स्टार्च, अमीनो एसिड, विटामिन आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। रिपोर्टों के आधार पर जाना गया है कि छिलका रहित जौ में पोषक तत्वों की मात्रा छिलका जौ की अपेक्षा उत्कृष्ट होती हैं जिनका उपयोग आजकल की दिनचर्या में अति आवश्यक है।

छिलका रहित जौ बीटा–ग्लूकन का एक अच्छा स्रोत

छिलका रहित जौ में बीटा–ग्लूकन की मात्रा लगभग 4 से 11 प्रतिशत पाई जाती है। यदि हम इसका लगातार सेवन करते हैं तो कई रोगों से निजात पा सकते हैं। साधारणतया देखा गया है कि वर्तमान समय में मनुष्य बहुत कम परिश्रम करने लगा है। जिससे दिन प्रतिदिन बीमारियों की चपेट में आता जा रहा हैं। इन बीमारियों में मुख्यतया मोटापा, मधुमेह, हार्ट अटैक इत्यादि हैं यदि छिलका रहित जौ का सेवन लगातार करते हैं तो रक्त में उपस्थित शर्करा के स्तर को कम किया जा सकता है जिससे टाइप–2 मधुमेह पर नियन्त्रण पाया जा सकता है। बीटा–ग्लूकन धमनियों में उपस्थित कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को कम करने मे सहायक होता है। क्लीनिकल परीक्षणों में देखा गया है कि यदि मनुष्य प्रतिदिन 3 से 8 ग्राम बीटा–ग्लूकन लेते हैं तो औसतन 7 से 10 प्रतिशत तक एल. डी. एल. कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को बीटा–ग्लूकन के द्वारा कम किया जा सकता है। भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल में शोध द्वारा जौ की ऐसी जननद्रव्य लाईनों को इजाद किया है जिनमें बीटा–ग्लूकान की मात्रा 6.0 प्रतिशत से अधिक पायी जाती है। उदाहारण के लिए, डी. डब्ल्यू. आर. 30 एवं डी. डब्ल्यू. आर. यू. बी. 76 जबकि जौ की कुछ सेग्रिगेटिंग लाईनों में बीटा–ग्लूकान 8.3 प्रतिशत तक पाया गया है।

छिलका रहित जौ प्रोटीन का एक अच्छा स्रोत्र

प्रोटीन एक आवश्यक पोषक तत्व है जो हमारे स्वास्थ्य को हृस्ट–पुष्ट एवं सन्तुलित बनाये रखने के लिये जरुरी है। छिलका रहित जौ में लगभग 14 प्रतिशत तक प्रोटीन पाया

क्र.सं.	खनिज लवण	जौ	क्र.सं.	खनिज लवण	जौ
	प्रोक्सीमेट्स			विटामिन्स	
1	पानी की मात्रा (ग्राम)	9.44	1	थायमिन (मिलीग्राम)	0.646
2	ऊर्जा (किलो कैलोरी)	354	2	राइबोफ्लेविन (मिलीग्राम)	0.285
3	प्रोटीन (ग्राम)	12.48	3	नियासिन (मिलीग्राम)	4.604
4	कुल लिपिड, वसा (ग्राम)	2.3	4	विटामिन बी6 (मिलीग्राम)	0.318
5	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	73.48	5	फोलेट (माइक्रोग्राम)	19
6	कुल डाइटरी फाइबर (ग्राम)	17.3	6	विटामिन ए (आई यू)	22
	खनिज पदार्थ		7	विटामिन ई (अल्फा–टोकोफेरॉल) (मिली ग्राम)	0.57
1	आयरन (मिलीग्राम)	3.6	8	विटामिन के (फायलोक्यूईनॉन) (माइक्रो ग्राम)	2.2
2	जिंक (मिलीग्राम)	2.77		लिपिड्स	
3	पोटैशियम (मिलीग्राम)	452	1	फैटी एसिड्स, टोटल सैचुरेटेड (ग्राम)	0.482
4	सोडियम (मिलीग्राम)	12	2	फैटी एसिड्स, टोटल मोनोअनसैचुरेटेड (ग्राम)	0.295
5	कैल्शियम (मिलीग्राम)	33	3	फैटी एसिड्स, टोटल पोलीअनसैचुरेटेड (ग्राम)	1.108
6	फॉस्फोरस (मिलीग्राम)	264			
7	मैग्नीशियम (मिलीग्राम)	133			

स्रोतः http://ndb-nal-usda-gov/ndb/search/list (न्यूटरिएन्ट डाटा 2004,बारले)

जाता है। भारत में पुराने समय से जौ का प्रयोग विभिन्न रूपों में किया जाता रहा है जैसे चपाती, दलिया, सत्तू, ऊर्जायुक्त पेय, इत्यादि बनाने के लिये उपयोग में आता है जिन सभी में प्रोटीन का होना अति आवश्यक है। ऐसा पाया गया है कि छिलका रहित जौ में छिलका जौ की अपेक्षा लगभग 1–3 प्रतिशत अधिक क्रूड प्रोटीन पायी जाती है। बी. के. 306 एवं बी. सी. यू. 554 जननद्रव्य लाईनों, जिनमें अधिक प्रोटीन की मात्रा पायी गयी है।

छिलका रहित जौ जिंक का एक अच्छा स्रोत

जिंक मानव स्वास्थ्य के लिए एक आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व है। यह तत्व हमारे शरीर को स्वस्थ बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है विशेष रूप से शिशुओं के लिए। मानव शरीर को प्रतिदिन जिंक की औसतन जरूरत 33 मिलीग्राम होती है। जिंक हमारी त्वचा, दांत, हड्डियों, बालों के स्वास्थ्य में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है, नाखून, मांसपेशियों, नसों और मस्तिष्क के विकास के लिए यह अत्यंत आवश्यक है। जिंक एंजाइमों को नियंत्रित करता है जो हमारे शरीर में कोशिकाओं को नवीनीकृत करने का काम करते हैं जिंक की कमी एक महत्वपूर्ण सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है, जो महिलाओं और बच्चों की एक बड़ी संख्या को विश्व एवं भारत में प्रभावित कर रही है । जौ को अपने आहार में शामिल करके काफी हद इस समस्या का समाधन पाया जा सकता है। पोषक तत्वों के आधार पर वर्तमान अध्ययन में पाया गया है कि छिलका रहित जौ में लगभग 19.98 से 49.72 पी.पी.एम. जिंक की मात्रा पायी जाती है यदि हम अपने आहार में छिलका रहित जौ का सेवन करते है तो स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध होगा।

छिलका रहित जौ आयरन का एक अच्छा स्रोत

मानव शरीर को स्वस्थ रखने के लिए आयरन एक महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ हैं जिसे उचित मात्रा मे आहार के द्वारा लेना बहुत जरूरी है। आयरन हमारे शरीर मे हीमोग्लोबीन बनाने के लिए अति आवश्यक है। यदि भोजन में आयरन की पर्याप्त मात्रा नहीं होती है तो आपको आयरन की कमी से एनीमिया हो सकता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, लगभग 1.62 अरब लोग आयरन की कमी से पीड़ित है। आयरन मुख्यतयाः खाद्यान्न, सब्जियों एवं दलहन वाली फसलों में पाया जाता है। छिलका रहित जौ भी आयरन का एक अच्छा स्रोत है इसे अपने आहार में शामिल करके काफी हद तक इस समस्या का समाधन पाया जा सकता है। छिलका रहित जौ में लगभग 22.6 से 47.1 पी.पी.एम. आयरन की मात्रा पायी जाती है यदि हम अपने आहार में छिलका रहित जौ का सेवन करते हैं तो स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक होगा।

पर्ण धब्बा रोग की पहचान एवं रोकथाम

साहिल परूथी[1], महेन्द्र कुमार आर्य[2], पंकज कुमार सिंह[3] एवं डी.पी. सिंह[4]

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान करनाल

गेहूँ भारत की एक प्रमुख खाद्यान्न फसल है। इसकी पारम्परिक खेती ठण्डे प्रदेशों में होती थी लेकिन आजकल गेहूँ की मांग बढने से इसकी खेती उष्ण तथा आर्द्र जलवायु वाले प्रदेशों जैसे पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल तथा असम में भी होने लगी है। इसके कारण कई रोग जो कि गेहूँ में ज्यादा महत्त्वपूर्ण नहीं थे जैसे पर्ण धब्बा या स्पॉट ब्लोच उष्ण तथा नम जलवायु में गेहूँ की फसल को ज्यादा हानि पहुंचाने लगे हैं।

परिचय

गेहूँ में बहुत सी बीमारीयाँ लगती हैं उनमें से पर्ण धब्बा/पूर्ण अंगमारी एक प्रमुख रोग हैं। इसे अंग्रेजी भाषा में स्पॉट ब्लोच कहते हैं। यह भारत में उत्तर पूर्वी तथा प्रायद्वीपीय क्षेत्र में अधिक होता है तथा उत्तर पश्चिम में जब तापमान बढ़ता है तब फरवरी–अप्रैल माह में आती है।

प्रभावित क्षेत्र

पर्ण धब्बा रोग प्रायः गर्म तथा आर्द्र क्षेत्रों में होने की संभावना रहती हैं, जहाँ पर तापमान ठंड के महीनों में 17.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक रहता है। पर्ण धब्बा भारत में आर्द्र क्षेत्र जैसे बिहार, पश्चिम बंगाल, पूर्वी उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, असम तथा कर्नाटक में गेहूँ की फसल को प्रभावित करता है। मगर यह रोग उतर पश्चिम भारत के उन क्षेत्रों को भी प्रभावित करता है जहाँ गेहूँ–धान फसल चक्र अपनाया जाता है।

रोग का प्रसार

यह रोग संक्रमित बीज, अन्य पौधों, फसल अवशेषों तथा संक्रमित मृदा से पैदा होता है। संक्रमित बीज रोगी पौधे को जन्म देते हैं तथा बाद में रोग के रोगाणु हवा द्वारा अन्य स्वस्थ्य पौधों को संक्रमित करते हैं।

रोग का स्तर

इस रोग का रोगजनक बहुत जल्दी फैलता है। यदि इसके रोगजनक को उचित वातावरण मिल जाये तो यह रोगग्राही किस्मों में अधिक नुकसान पहुँचा सकता है। इस रोग से 50 प्रतिशत तक उपज में हानि होती है तथा दाने काले व सिकुड़ जाते हैं तथा इनका जमाव भी कम हो जाता है।

लक्षण

- पर्ण धब्बा पौधे के सभी भागों जैसे पत्तियाँ, तना, जड़ तथा दाने पर लक्षण उत्पन्न करता हैं।
- प्रारम्भ में इस रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियों पर 1 से 2 मिलीमीटर आकार के छोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं जो प्रायः हरीमाहिनता (येलो) से घिरे होते हैं।
- पर्ण धब्बा के कारण प्रकाश संश्लेषण की कमी होने से पत्तियाँ अपरिपक्व अवस्था में पीली पड़ कर मर जाती हैं।
- धब्बे आपस में मिल कर पत्तियों के अधिक क्षेत्र में फैल जाते हैं तथा अंगमारी का रुप ले लेते हैं।
- यदि बालियाँ प्रभवित होती हैं तो दाने काले तथा सुकड़े हुए बनते हैं।
- जड़ में इस रोग के लगने से समय से पहले ही पौधे सूख जाते हैं तथा दाने हल्के बनते हैं।

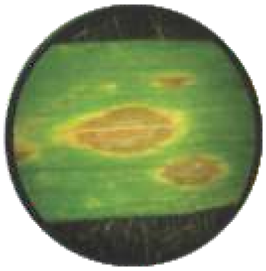

चित्र 1. गेहूँ की पत्तियों पर स्पोट ब्लोच के धब्बक

चित्र 2. गेहूँ की फसल में पर्ण धब्बा रोग का प्रभाव

रोग रोधी प्रजातियाँ

- उत्तरी भारत के पहाडी क्षेत्र में मुख्य रोग रोधी किस्में एच.एस.490, एच.एस.507, वी.एल. 892
- उत्तरी पश्चिमी मैदानी क्षेत्र में एच.डी.2967 पी.बी. डब्ल्यू.644, डब्ल्यू एच.1105
- मध्य क्षेत्र में एच.आई.8498, एच.आई.8759
- प्रायद्वीपीय क्षेत्रों में एम.ए.सी.एच.3949, एम.ए.सी.एच. 6222, यू.ए.एस.446

रोग प्रबंधन विधि

- प्रमाणित तथा रोग रोधी प्रजाति का चयन करें क्योंकि यह सस्ती सुरक्षित तथा पारिस्थितिक तंत्र के अनुरुप है।
- स्वच्छ बीज प्रयोग में लाने चाहिए बीजों को थायरम 2. 5 ग्राम/कि.ग्रा., कारबोक्सिन+थायरम 1:1,2.5 ग्राम/कि. ग्रा. की दर से उपचारित करके प्रयोग में लाना चाहिए।
- पर्ण धब्बा रोग के लक्षण दिखने पर प्रोपिकोनाजोल (0. 1 प्रतिशत) कवकनाशी का छिड़काव करना चाहिए।
- समय–समय पर विचार विमर्श द्वारा भी फसलों पर रोग की पहचान एवं नियंत्रण के उपायों की जानकारी कृषि वैज्ञानिक एवं कृषि रोग विशेषज्ञ से भी करनी चाहिए।

गेहूँ व जौ उच्च गुणवत्ता बीज उत्पादन तकनीक

राजेश कुमार आर्य एवं एस के सेठी
आनुवंशिकी व पौध प्रजनन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

उन्नत किस्मों का पूरा फायदा उठाने के लिए उनकी व्यवसायिक स्तर पर एक बड़े भू–भाग पर खेती करनी चाहिए इसके लिए जरूरी है कि उन्नत किस्मो का उच्च गुणवत्ता वाला बीज बड़े पैमाने पर तैयार किया जाए। उच्च गुणवत्ता का प्रमाणित बीज कोई भी सरकारी एवं गैर–सरकारी संस्था बना सकती है परन्तु इसके लिए बीज उत्पादक लाईसैंस के साथ–साथ बीज प्रमाणीकरण की फीस एवं निर्धारित शर्तों को पूरा करना जरूरी होता है। लगभग 10–12 वर्षों के सतत् व कठिन प्रयास से कृषि वैज्ञानिक नई किस्म तैयार करते हैं। यह विभिन्न परीक्षणों से गुजर कर केन्द्रीय किस्म जारी करने वाली समिति के पास जाती है, जो इसे किसानों के लिए जारी करती है। ऐसी नई किस्म का लाभ किसानों को तभी मिल सकता है, जब इसका अच्छी गुणवत्ता वाला शुद्ध बीज पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो। बीज तैयार करने की कड़ी में प्रजनक बीज पहली अवस्था है। इसी से आगे की पीढ़ियों में आधार बीज व प्रमाणित बीज बनते हैं और इनकी गुणवत्ता प्रजनक बीज पर निर्भर करती है। प्रजनक बीज की गुणवत्ता प्रजनक द्वारा तैयार किए गए न्यूक्लियस बीज पर आधारित होती है। अतः अच्छी पैदावार लेने के लिए बीज की गुणवत्ता का बनाए रखना बहुत जरूरी है।

न्यूक्लियस बीज खुद फसल प्रजनक तैयार करता है व प्रजनक बीज पैदा करने की जिम्मेदारी किस्म तैयार करने वाले संस्थान या संस्था की होती है। इसी बीज की शुद्धता पर बीज उत्पादन कार्यक्रम निर्भर है।

बीज की श्रेणियां

1. प्रजनक बीज–ब्रीडर बीजः–

यह बीज पूर्ण रूप से बीज के प्रजनक अथवा किसी वैज्ञानिक संस्थान जैसे कृषि विश्वविद्यालय, भारत सरकार के संस्थान तथा आई.ए.आर.आई., आई.आई.डब्ल्यू.बी.आर., सी.एस.एस.आर.आई, एन.एच.आर.डी.एफ आदि में बीज प्रजनक की निगरानी में उगाया जाता है तथा संसाधित व बैगिंग किया जाता है।

पहचानः–

1. इस बीज के बैग पर एक लेबल सुनहरा–भूरा रंग का लगा होता है।
2. संस्थान का पता बैग पर छपा होता है।
3. लेबल पर प्रजनक के/उत्पादक प्रजनक के हस्ताक्षर होते है।
4. इसके साथ बिल व मोनिट्रिंग रिपोर्ट के साथ ब्रीडर प्रमाणपत्र भी दिया जाता है।

2 आधार बीज श्रेणीः–

यह ब्रीडर बीज से उगाई गई फसल की उपज होती है। प्रमाणीकरण के अंतर्गत इसको कोई भी ईकाई पैदा कराती है तथा प्रमाणीकरण संस्था के द्वारा परीक्षण कराकर बैगिंग कराया जाता है। यह केवल बीज उत्पादन में ही प्रयोग किया जाता है।

पहचानः–

1. इस बीज के थैले पर बीज उत्पादक ईकाई का नाम छपा होता है।
2. थैले पर बीज का विवरणः– फसल जाति, श्रेणी, लाट नं., पैकिंग तिथि, भार, नमी प्रतिशत, उगाव शक्ति, शुद्वता व मूल्य छपा होता है।
3. कटटे पर एक सफेद रंग का टैग उत्पादक ईकाई के लेबल के साथ प्रमाणीकरण संस्था के नाम, पता सहित व सूचना सहित लगा होता है।

3. प्रमाणित श्रेणीः–

यह आधार बीज की उपज को जब बीज का प्रमाणीकरण के अंतर्गत फसल उगवाकर थैलाबंदी कराकर बाजार में उपलब्ध करवाया जाता है जिसे साधारण किसान व्यवसायिक उपज के लिये खरीदते हैं, प्रमाणित श्रेणी का बीज कहते है।

पहचानः– 1. इस थैले पर आधार बीज की तरह सूचनायें छपी होती हैं। केवल श्रेणी के सामने प्रमाणित व टैग का रंग नीला होता है।

प्रमाणित बीज को बोने से निम्नलिखित लाभ होते हैं:–1. स्वस्थ बीज 2. शुद्ध बीज 3. उचित नमी के मापकों के साथ सुखाया व भण्डारित बीज 4. 10 से 15 प्रतिशत अधिक पैदावार 5. बिमारी रहित व किस्म की शुद्धता की गारंटी इत्यादि अनेकों लाभ मिलते हैं।

प्रमाणित बीज कहाँ से लें–प्रमाणित बीज लेने के लिए सबसे पहले चौ.च.सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के रामधन सिंह समय–समय पर कृषि विज्ञान केंद्रों द्वारा भी गांव के स्तर पर बीज उपलब्ध करवाया जाता है। किसान मेला व फार्म दर्शन जैसे आयोजनों में हरियाणा के सभी सरकारी उपक्रमों जैसे एन.एस.सी., केंद्रीय राज्य बीज फार्म, इफको, कृषको, हैफेड, एच.एस.डी.सी द्वारा बीज उपलब्ध करवाया जाता है जो निजी सस्थाओं द्वारा उत्पादित बीज से काफी सस्ता होता है।

शुद्ध व गुणवत्ता वाला बीज पैदा करने के लिए विशेष सावधानियाँ व कुछ खास कार्य करने पड़ते हैं। भारतीय न्यूनतम बीज प्रमाणीकरण मानक (1988) के अनुसार खेत में उगाई जाने वाली बीज की फसल के लिए मानक है, जो कि तालिका 1 व 2 में दिए गए हैं।

किस्म का चुनाव

किस्म का चुनाव अपने क्षेत्र व दशा के अनुसार करें। यदि सम्भव हो सके तो नई किस्मों का बीज बनाए क्योंकि इसकी ऊपज अधिक होगी तथा बिक्री भी आसानी से हो जाएगी।

1. अगेती व बारानी दशा (25 अक्टूबर से 5 नवम्बर) : सी. 306, डब्ल्यू.एच. 1080
2. कम खाद पानी व नवम्बर की बिजाई : डब्ल्यू.एच. 147, डब्ल्यू.एच. 1025
3. सिंचित व अधिक उपजाऊ दशा (1 से 25 नवम्बर) : एच.डी. 3086,एच.डी. 2967, डी.बी.डब्ल्यू. 17, डब्ल्यू. एच. 1105, पी.डी.डब्ल्यू. 621–50

तालिका–1: गेहूं व जौ के लिए खेत में खड़ी फसल के प्रमाणित बीज के मानक

खेत मानक			
खेत चुनाव	:	स्वयं उगे पौधों रहित	
खेत निरीक्षण	:	दो बार	
खेत से खेत की दूरी	:	आधार बीज : 3 मीटर	
		प्रमाणित बीज : 3 मीटर	
खेत की बीमारी वाले खेत से दूरी	:	आधार बीज : 150 मीटर	
		प्रमाणित बीज : 150 मीटर	
विशेष अधिकतम मानक (प्रतिशत)			
		आधार बीज	**प्रमाणित बीज**
अलग तरह के पौधे	:	0.50	0.20
अलग न होने वाले अन्य फसल के पौधे	:	0.01	0.05
बीज जनित बीमारी के पौधे	:	0.1	0.5

तलिका–2 : प्रमाणित बीज के लिए न्यूनतम मानक

गुणक	आधार बीज	प्रमाणित बीज
शुद्ध बीज (न्यूनतम)	98.0 प्रतिशत	98.0 प्रतिशत
अन्य पदार्थ (अधिकतम)	2.0 प्रतिशत	2.0 प्रतिशत
अन्य फसल के बीज (अधिकतम)	10 / कि.ग्रा.	20 / कि.ग्रा.
कुल खरपतवार बीज (अधिकतम)	10 / कि.ग्रा.	20 / कि.ग्रा.
आपत्तिजनक खरपतवार बीज (अधिकतम)	2 / कि.ग्रा.	5 / कि.ग्रा.
जमाव (न्यूनतम)	85 प्रतिशत	85 प्रतिशत
नमी (अधिकतम)	12 प्रतिशत	12 प्रतिशत

4. पछेती व सिंचित दशा (26 नवम्बर से 25 दिसम्बर) : डब्ल्यू.एच. 1124, डब्ल्यू.एच. 1021, राज 3765, यू.पी. 2338, पी.बी.डब्ल्यू. 590, डी.बी.डब्ल्यू. 76
5. लवणीय/क्षारीय भूमि के लिए सिंचित दशा में (समय की बिजाई) : डब्ल्यू.एच. 157, के.आर.एल. 19
6. कठिया गेहूँ (समय की बिजाई) : डब्ल्यू.एच. 896, डब्ल्यू.एच. 912, डब्ल्यू.एच. 943 और 946

खेत का चुनाव

बीज उत्पादन के लिए समतल भूमि की आवश्यकता होती है। यदि भूमि में वर्ष दर वर्ष गेहूँ या जौ की फसल ली जाती हो तो उसमें जंगली जई व कनकी जैसे खरपतवार पनपते हैं। अतः यह सावधानी रखनी चाहिए कि ऐसे खरपतवार अच्छा बीज पैदा करने में बाधा न बनें।

खाद एवं उर्वरक

संभव हो सके तो गोबर की खाद/हरी खाद/केंचुए की खाद जरूर डालें क्योंकि यह नमी संरक्षण के साथ–साथ पोषक तत्व भी प्रदान करती है और भूमि को स्वस्थ बनाए रखती है। उर्वरक हमेशा मिट्टी जांच के आधार पर डालें। यह मिट्टी जांच न हो पाए तो उर्वरक आम सिफारिश के अनुसार डालें। 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 24 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 12 कि.ग्रा. पोटाश और 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ देना चाहिए। बिजाई के समय आधी मात्रा नाइट्रोजन, पूरी फास्फोरस एवं पोटाश व जिंक सल्फेट दें। बाकी आधी मात्रा नाइट्रोजन की पहले पानी के साथ दें। एक एकड़ के बीज में तीन पैकेट एजोटोबैक्टर टीके के भी मिलाएं।

बिजाई की विधि

बीज के खेतों की बिजाई बीज–ड्रिल से करें। एक किस्म की बिजाई के बाद बीज–ड्रिल को अच्छी तरह साफ करें जिसमें लगी जालियां, बीज प्याले व ऊपर लगी टंकी शामिल हैं। इनके अन्दर अटका हुआ कोई भी बीज नई किस्म में मिश्रण कर सकता है। अतः इसमें कोई भी लापरवाही नहीं होनी चाहिए।

– बाहर से अलग–अलग दिखने वाली किस्में ही साथ–साथ बोएं ताकि मिश्रण की स्थिति में आसानी से पहचानी जाएं व अलग पौधे को निकाला जा सके।
– हर 6 या 8 पंक्तियों के बाद एक पंक्ति खाली छोड़ें ताकि आसानी से खेत में घूमा जा सके व मिश्रण को उखाड़ा जा सकें। इसके लिए एक बीज डालने वाली नली को बन्द किया जा सकता है।
– एक ही दिशा में बिजाई करें इससे अन्य खेत के कार्यों व निरीक्षण में सहायता मिलती है।

किस्म से किस्म की दूरी

एक किस्म के प्लाट की दूरी अन्य किस्म के प्लाट से 3 मीटर होनी चाहिए। बीज में खुली या बन्द कंगियारी रोग फैलने से बचाव के लिए, बीज के खेत को बीमारी वाले खेतों से 150 मीटर दूर बिजाई करें।

अलग पौधों की छटाई

– बीज उत्पादन खेतों से अलग तरह के पौधों को निकाला जाता है जो कि किस्म के गुणसूत्रों में बदलाव व परपरागण आदि से पैदा होते हैं। गेहूं की बौनी किस्मों में यह समस्या आम है।
– अलग तरह के पौधे आरिकल का रंग, बालियां आने तक कुल दिन, पौधों की ऊंचाई, बाली व पौधे पर मोम, बालियों का रंग, बालियों की आकृति व सघनता आदि के आधार पर पहचाने जा सकते हैं।
– कम से कम तीन छंटाई की जरूरत होती है। पहली बालियां निकलने पर, दूसरी बालियां निकलने के 20 दिन बाद और तीसरी बालियां पकने पर।
– छंटाई किए गए पौधे, जिनमें बीज बन गया है को कहीं दूर स्थान पर नष्ट करें ताकि मिश्रण न हो।
– अगर फसल गिर गई तो छंटाई प्रभावी नहीं होगी। अतः खाद व सिंचाई का उचित प्रबन्ध करें।

खड़ी फसल का निरीक्षण

बीज की फसल का विशेषज्ञों से निरीक्षण करवाना चाहिए। इसमें फसल प्रजनक, राज्य के बीज प्रमाणीकरण अधिकारी व राष्ट्रीय बीज निगम के अधिकारी शामिल हैं। खड़ी फसल का कम से कम दो बार निरीक्षण करना चाहिए जिनमें पहला परागण पूर्ण होने पर, दूसरा जब फसल पूरी तरह पीली हो जाए। यह विशेषज्ञ टीम बीज फसल का बारीकी से निरीक्षण करती है ताकि यह समस्त बीज मानकों को पूरा करें।

बीज संस्करण में प्रयोग होने वाली मशीन का विवरण निम्न प्रकार है

क्र.सं.	मशीन	मशीन का कार्य
1	प्री क्लीनर	बीज में से फसल का डंठल व तुड़ा, बारिक मिट्‌टी, बीज के आकार से छोटे कंकर, पत्थर, मिट्‌टी, बीज आदि दूर किए जाते है।
2	बीज ग्रेडर	इस मशीन में बीज को आकार के अनुसार, बड़े व छोटे बीज, मिट्‌टी, तिनके आदि को अलग किया जाता है।
3	ग्रेविटी सेपरेटर	इस मशीन में वजन के अनुसार हल्के बीज व पत्थर आदि को अलग किया जाता है।
4	ईन्डेंट सिलेंडर	इस मशीन से बीज के कटे, टूटे दाने आदि को अलग किया जाता है।
5	सीड ट्रिटर	इस मशीन का प्रयोग तभी किया जाता है यदि फसल के बीज का कैमिकल उपचार करना हो।
6	एलिवेटर	एलिवेटर एक तरह की मशीन होती है जो बीज को नीचे से उठाकर ऊपर ले जाकर दूसरी मशीन तक पहुंचाती है।

बीज फसल की कटाई व कढ़ाई

– बीज में मशीनी मिश्रण न हो इसलिए इसकी कटाई व कढ़ाई बड़ी सावधनी से करनी चाहिए। थ्रेसर, कम्बाईन मशीन, ट्राली व प्रोसेसिंग मशीन को पूर्णतया साफ करना चाहिए।

– पूर्णतया सफाई के बाद भी थ्रेसर व कम्बाईन मशीन में कुछ दाने रहे जाते हैं। अतः जब इनका प्रयोग किया जाए तो थ्रेसर में 25–30 कि.ग्रा. व कम्बाईन मशीन में 2–3 क्विंटल बीज अलग रख देना चाहिए व इसको बीज में प्रयोग न करें।

बीज भंडारण

जब बीज के खेत को काटा जाता है तो उसमें 14–15 प्रतिशत तक नमी होती है। सही बीज भण्डारण के लिए नमी की मात्रा को नीचे लाया जाता है। सूखने के बाद बीज को अच्छी तरह से साफ करें ताकि धूल–मिट्‌टी, कंकड, तिनके, खरपतवार आदि के बीज निकल जाएं। साफ बीज में भी सभी बीज बराबर आकार के नही होते। इसलिए बीज की ग्रेडिंग करने की आवश्यकता होती है। इससे टूटे–फूटे, सिकुडे एवं छोटे बीज निकल जाते है। ग्रेडिंग किया हुआ बीज एक आकार का और स्वस्थ होता है। अगर हवा बन्द डिब्बों में बीज को भण्डार किया जाए तो नमी 11 प्रतिशत होनी चाहिए और अगर बोरियों में भण्डार किया जाए तो नमी की मात्रा 8–9 प्रतिशत होनी चाहिए। कीड़ों व चूहों से नुकसान न हो इसके लिए भण्डारण कीट विज्ञानी की सहायता लेनी चाहिए।

बीज प्रसंस्करण तकनीक

उच्च गुणवत्ता वाले बीज के लिए निम्नलिखित पैमाने निर्धारित किए गए हैः–अनुवांशिक (जैनेटिकल) शुद्धता, भौतिक (फिजीकल) शुद्धता, आकार (साइज) में समानता, अंकुरण क्षमता आदि। गुणवत्ता वाले बीज उत्पादन में बीज की भौतिक शुद्धता एवं आकार में समानता वाले पैमाने हम बीज संस्करण तकनीक द्वारा प्राप्त कर सकते है।

बीज की फसल काटने के बाद बीज में बहुत सी अवांछित चीजे जैसे कि फसल का तुड़ा, बिना बीज निकले फली, मिट्‌टी या कांकर के टुकड़े, खरपतवार के बीज, कटे दाने के टुकड़े, छोटे या बड़े आकार के दाने आदि होते हैं। हम इन सभी अवांछित चीजों को बीज संस्करण तकनीक द्वारा दूर करके, बीज की भौतिक शुद्धता एवं आकार में समानता का पैमाना प्राप्त कर सकते हैं। बीज संस्करण तकनीक में भिन्न–2 बीज संस्करण मशीन (यन्त्र) प्रयोग में लाई जाती है और एक विशेष कार्य प्रणाली चक्र में लगाई जाती है।

बीज संस्करण में होने वाले उपरोक्त कार्य मशीनों द्वारा किए जाते हैं। इस कार्य में प्रयोग होने वाली मशीन का विवरण निम्न प्रकार है :–प्री क्लीनर, बीज ग्रेडर, ग्रेविटी सेपरेटर, ईन्डेंट सिलेंडर, सीड ट्रिटर आदि

बीज गुणवत्ता की जाँच

1. भौतिक शुद्धता निर्धारण

भौतिक शुद्धता के परीक्षण का लक्ष्य बीज ढेर के भौतिक गठन को निर्धारित करना होता है। इसके लिए बीज ढेर में

से निर्धारित मात्रा में एक प्रतिनिधि नमूना लिया जाता है। इस नमूने में न्यूनतम बीज सँख्या लगभग 3–4 हजार तक रखी जाती है। इस नमूने की शुद्धता का नियमानुसार परीक्षण किया जाता है। भौतिक शुद्धता परीक्षण के नमूने को चार घटकों में बांटा जाता है।

(क) शुद्ध बीज : शुद्ध बीज उसे ही माना जाता है जो केवल सम्बन्धित किस्म और प्रकार के ही होते हैं, टूटे हुए बीज, जो आधे या आधे से अधिक हों, उन्हें भी शुद्ध बीज में गिना जाता है।

(ख) अन्य फसलों के बीज : सम्बन्धित किस्म के शुद्ध बीजों के अलावा अन्य फसल/किस्मों के बीजों को अन्य फसल–बीजों के अन्तर्गत रखा जाता है।

(ग) ऐसे पौधों के बीज जो नियम/अधिनियम द्वारा खरपतवार के रूप में अधिसूचित कर दिये जाते हैं या सामान्य उपयोग से खरपतवार के रूप में जाने जाते हैं।

(घ) हानिकारक खरपतवारों के बीज–परीक्षण : ऐसी जाँच के लिए जो नमूना लिया जाता है, सामान्यतया शुद्धता परीक्षण के नमूने की तुलना में 5 से 25 गुना तक रखा जाता है। इस परीक्षण में सम्बन्धित बीज में हानिकारक खरपतवारों के बीजों की उपस्थिति की दर मालूम की जाती है। प्रत्येक प्रकार के हानिकारक खरपतवारों के बीजों की संख्या प्रति कि.ग्रा. के रूप में व्यक्त की जाती है।

(ड़) अक्रिय पदार्थ : टूटे हुए आधे से कम बीज के अलावा अक्रिय पदार्थ के अन्तर्गत फसल और खरपतवारों के पौधों की बीज जैसी संरचनाओं को तथा अन्य पदार्थों को रखा जाता है।

शुद्धता परीक्षण के नमूने को उपर्युक्त चार घटकों में अलग करने के बाद इनको तोला जाता है तथा फिर नमूने में इनके अनुपात को प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जाता है।

2. जमाव/अंकुरण की जाँच

अंकुरण की जांच : शुद्धता परीक्षण के उपरान्त, जमाव की जाँच प्रयोगशाला में शुद्ध बीज घटक को नमूने के तौर पर लिया जाता है। सामान्य तौर पर यह परीक्षण सौ–सौ बीजों को चार जगह लेकर कुछ आवश्यक निर्धारित दशायें उदाहरणार्थ उपयुक्त नमी, अनुकूल तापमान, उपयुक्त अधःस्तर व दिन आदि के अंतर्गत बिजाई करके किया जाता है। परीक्षण अवधि के दौरान अधःस्तर जैसे विशेष प्रकार की रेत (सीलीका सैंड़), अंकुरण के विशेष कागज (जरमीनेशन पेपर) आदि की नमी को परख लेना चाहिए। परीक्षण अवधि पूर्ण होने पर जमाव शक्ति के मूल्यांकन में निम्न लक्ष्य देखे जाते हैं।

क. सामान्य पौधे – ऐसे अंकुरित बीज जिन में मूल व तना सामान्य तथा पूर्ण विकसित हो।

ख. असामान्य पौधे – ऐसे अंकुरित बीज जिन में मूल या तना या दोनों ठीक प्रकार से विकसित ना हो।

ग. मृत बीज – ऐसे बीज जो अंकुरित न होकर गल–सड़ जाए।

घ. कठोर बीज – कठोर बीज सामान्य रूप से जमाव क्षम होते हैं। लेकिन बीजावरण कठोर होने के कारण इनके भीतर पानी प्रवेश नहीं कर पाता। जिसके फलस्वरूप बीज अपनी वास्तविक स्थिति में ही रह जाता है।

आमतौर पर जमाव प्रतिशत जाँचने के लिए केवल सामान्य पौधों को ही प्रतिशत में आंका जाता है। लेकिन दलहनी फसलों के जमाव की जाँच में सामान्य पौधों तथा कठोर बीजों को जोड़कर प्रतिशत में आंका जाता है।

3. नमी/आर्द्रता की जाँच

बीज की नमी की उचित मात्रा बीज के स्वस्थ एवं अच्छे अंकुरण के लिए आवश्यक है। बीज में उपयुक्त नमी उचित रखरखाव, भण्डारण, प्रसंस्करण, पैकेजिंग के लिए भी आवश्यक है। कटाई के समय बीज में नमी 18–20 प्रतिशत होती है। भण्डारण के समय 10–12 प्रतिशत नमी होनी चाहिए।

बीज की नमी की मात्रा की जाँच कई विधियों से की जा सकती है :

(क) बीज चबाकर : दाँतों के नीचे बीज को चबाकर देखो। यदि कड़क की आवाज आती है तो उसमें नमी कम है और यदि बीज दबता और टूटने पर कड़क की आवाज नहीं आती, इसका मतलब है की बीज अभी गीला है।

(ख) वायु भट्टी : इस विधि में बीज का नमूना लेकर उसे भट्टी में एक निश्चित ताप एवं समय तक सुखाया जाता है। बीजों के भार में आई कमी ही नमी की मात्रा है।

$$\text{नमी प्रतिशत} = \frac{\text{बीज के भार में आई कमी}}{\text{बीज का ताजा भार}} \times 100$$

(ग) नमी मापक यंत्र : यह एक विद्युत द्वारा संचालित यन्त्र होता है जो बीज की नमी तुरन्त बता देता है तथा इसका प्रयोग करना भी आसान है जो कि विभिन्न कम्पनियों द्वारा निर्मित है तथा बाजार में उपलब्ध है।

4. रोग रोधिता निर्धारण :

बीज गुणवत्ता के मूल्यांकन में बीज रोग का निर्धारण करना आवश्यक है। इसके निर्धारण में कवक विज्ञानियों और पादप रोग विज्ञानियों द्वारा प्रयुक्त मानक सिद्धान्त व विधियां अपनाई जाती है। बीज की रोगरोधिता निर्धारण के लिए सामान्य तौर पर कवक वैज्ञानिक और रोग वैज्ञानिक की सेवाएं ली जाती है।

बीज प्रमाणीकरण प्रक्रिया

बीज प्रमाणीकरण की प्रक्रिया प्रमाणित बीजों के उत्पादन में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। स्वस्थ व प्रमाणित बीज किसानों तक समय पर पहुँचाने के लिए हरियाणा राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्था का निर्माण 1976 में किया गया। यही वह संस्था है जो बीजों के प्रमाणीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाती है। प्रमाणित बीजों के लिए यह संस्था निम्नलिखित गतिविधियाँ करती रहती है–

- एक फसल वर्ष में पंजीकरण करवाने के लिए प्रार्थना–पत्र की प्राप्ति
- प्रार्थना पत्र की जाँच व स्रोत का निरीक्षण
- पंजीकरण के आधार पर फसल का क्षेत्र निरीक्षण
- पंजीकृत उत्पादकों को क्षेत्र निरीक्षण की रिपोर्ट काटकर देना।
- बीज संसाधन, पैकिंग और सील का निरीक्षण करना
- बीज की जाँच के लिए बीजों का नमूना लेना
- बीज प्रयोगशालाओं में बीज की जाँच
- जाँच में पारित बीजों को प्रमाणपत्र व टैग देना

कृषि में आधुनिक तकनीकी प्रयोग से कम लागत में अधिक आय

सचिन कुमार, भूदेव सिंह त्यागी, ज्ञानेन्द्र सिंह, आशीष ओझा एवं मधु कुमारी

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

कृषि क्षेत्र को लाभकारी सौदा बनाने और किसानो की आय को दोगुनी करने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए परंपरागत खेती के साथ–साथ नवीनतम एवं आधुनिक तकनीकी का उपयोग किया जाना आवश्यक है। जिसके लिए एक कार्य योजना के तहत नई तकनीक और उन्नत जानकारियों के अलावा आधुनिक प्रौद्योगिकी से अपने खेतो की उपज वृद्धि एवं उचित मूल्य प्राप्त करने के प्रयास करने होंगें।

समय एवं आवश्यकता अनुरूप कृषि की उत्पादकता बढ़ाने के लिए नई प्रौद्योगिकी का उपयोग करना बहुत जरूरी है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई.सी.ए.आर.) की एक अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार देश में केवल 18.5 प्रतिशत खेतीहर मजदूर हैं और इनमें से मात्र 0.5 ही तकनीकी रूप से प्रशिक्षित हैं अतः नवीनतम प्रौद्योगिकी प्रयोग के लिए इस अन्तर को कम किया जाना चाहिए।

कृषि देश का सर्वाधिक रोजगार मुहैया कराने वाला क्षेत्र है। परन्तु इसमें ज्यादातर लोग परंपरागत खेती में ही कुशल हैं, लेकिन आधुनिक खेती के लिए वे पूर्णतय प्रशिक्षित नहीं हैं। जैसे मिट्टी की जांच, सूक्ष्म सिंचाई, उन्नत बीज, सन्तुलित उर्वरक, कीटनाशक और कृषि उपकरणों के साथ फसलों की कटाई के बाद उपज को बाजार तक पहुँचाने और फसल का उचित मूल्य प्राप्त करने की आवश्यकता है जिसको एक बड़े स्तर की मुहिम का रूप दिया जाना चाहिए।

खेतों पर मशीनों का प्रयोग

आज के दौर में खेती को उन्नत बनाने में जितनी अहमियत उन्नत खाद, बीज, सिंचाई व समय प्रबन्धन की है, उतनी ही आधुनिक कृषि यन्त्रों की भी है। यन्त्रों की सहायता से हम सुविधापूर्वक समय की बचत एवं लागत में कमी के साथ भूमि की जुताई, पौध लगाना, फसल बुवाई, रखरखाव और फसल काटना आदि कार्यों को कर सकते हैं। इनके प्रयोग से किसान अपनी खेती को आसान बनाकर खेती की लागत में काफी कमी ला सकते हैं और खेती में होने वाले जोखिम को भी घटा सकते हैं। किसान के पास कृषि श्रमिकों की कमी होने पर भी यन्त्रों द्वारा अधिक भूमि पर खेती कर सकता है। कृषि में मशीनों के प्रयोग द्वारा अधिक उत्पादन के कुछ उदाहरण निम्न प्रकार है–

सीड ड्रिल द्वारा बुआई

आमतौर पर सीड ड्रिल का प्रयोग बड़े क्षेत्र में बुवाई करने के लिए ही किया जाता है। जिसमें मशीन के द्वारा बुवाई निश्चित अन्तराल के साथ पंक्ति में की जाती है। इसमें बीज बोने के साथ–साथ रसायनिक खादों का प्रयोग, बीज उपचार व बीज ढकने का कार्य एक ही बार में किया जाता हैं। इस प्रकार मशीन से बुवाई करने से किसानो को निम्नलिखित लाभ है–

- सीड ड्रिल से धान की सीधी बुवाई एक नई तकनीक है तथा वर्षा सिंचित क्षेत्रों में जहाँ पानी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं है, धान की सीधी बुवाई सीड ड्रिल से सुविधापूर्वक की जा सकती है। सीड ड्रिल से बुवाई करने से फसल अवशेष भूमि पर छोड़ दिए जाने से पानी और हवा से मिट्टी अपर्दन व पोषक तत्वों की लिचिंग में कमी, मिट्टी की जल धारण क्षमता व कार्बनिक पदार्थ मे वृद्धि और माइक्रोबियल गतिविधियों में सुधार होता है। इसके अलावा श्रम, ईधन व परिचालन लागत में सीधे बचत होती है।
- जानवर और पक्षियों द्वारा होने वाले नुकसान से

उत्पादन कम होता है। सीड ड्रिल का प्रयोग करने से इस समस्या के समाधान के साथ अधिक उत्पादन लिया जा सकता है।

- सीड ड्रिल द्वारा बुवाई पंक्ति में की जाती है जिसमें फसल की सफाई, निराई–गुड़ाई व खरपतवार नियन्त्रण सुविधापूर्वक किया जा सकता है।
- छिड़काव विधि में किसान अपनी उपज का एक भाग बीज के रूप में इस्तेमाल करता है। सीड ड्रिल का प्रयोग करने से बीज की बुवाई दर कम हो जाती है जिससे किसान अधिक क्षेत्रफल पर उत्तम बीज की बुवाई कर अधिक लाभ प्राप्त कर सकता है।

पौधों की सिंचाई की उच्च तकनीक

देश के विभिन्न भागों में वर्षा कम होने तथा कभी–कभी बिल्कुल न होने पर किसानों को सूखे का सामना करना पड़ता है। अतः व्यावसायिक/नगदी फसलों को उगाने के लिए किसान वर्षा पर निर्भर नहीं कर सकते जो कि एक प्राकृतिक साधन है। साथ ही अन्य शुष्क क्षेत्रों में पानी की काफी कमी होती है। जिससे वहाँ के किसानो को अपने खेतों में सिंचाई करने के लिए पर्याप्त जल उपलब्ध नहीं हो पाता, परन्तु सिंचाई की आधुनिक तकनीकी अपनाकर किसान उचित जल प्रबधन कर सकते हैं। कुछ आधुनिक सिंचाई विधियाँ निम्न प्रकार है–

बौछारी सिंचाई

इस विधि मे स्रोत में पानी को वांछित दबाव के साथ खेत तक ले जाया जाता हैं और स्वचालित छिड़काव यंत्र द्वारा पूरे खेत में बौछार द्वारा वर्षा की बूँदों की तरह छिड़का जाता है। इसके निम्नलिखित लाभ है–

- बौछारी विधि से असमतल क्षेत्रों पर भी अच्छी तरह से सिंचाई की जा सकती है। ऊँची–नीची अधिक ढलान वाली दशा के लिए भी यह प्रणाली उपयुक्त है।
- बौछारी विधि से समस्त क्षेत्र पर फसल उगाई जा सकती है जिससे किसान अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकता है।
- सतही विधि से कुल पानी का 31–46 प्रतिशत ही फसलों को उपलब्ध हो पाता है जबकि बौछारी विधि में यह 82 प्रतिशत तक फसलों को उपलब्ध होता है।
- जिन फसलों को सर्दी के दिनों में पाला आदि से काफी नुकसान होता है वहाँ बौछारी विधि अपनाकर कम पानी के प्रयोग द्वारा फसलों को पाला प्रकोप से बचाया जा सकता है।
- इस विधि में उर्वरकों को पानी के साथ मिलाकर फसलों में दिया जाता जा सकता है जिससे उर्वरक पानी के साथ पौधों के नीचे नहीं जा पाता है और रेतीली भूमि में बौछारी सिंचाई करने से मृदा कटाव भी नहीं होता है।
- इस विधि द्वारा भूमि की भौतिक दशा व संरचना में भी सुधार होता है।

टपका सिंचाई

इस विधि में प्रयुक्त यन्त्र जिन्हें एमीटर या एप्लीकेटर कहते हैं द्वारा जल धीरे–धीरे लगातार बूँद–बूँद करके पौधों तक प्लास्टिक की पतली नालियों के माध्यम से पहुचायाँ जाता हैं। यह विधि जल की अत्यन्त कमी वाले स्थानो पर प्रयोग की जाती हैं। इस विधि के निम्नलिखित लाभ हैं–

- सिंचाई की अन्य विधियों की अपेक्षा 50 प्रतिशत तक पानी की बचत जिससे किसान दो गुने क्षेत्रफल पर सिंचाई कर सकता है।
- पौधों को पानी समान रूप से मिलता है। अतः सम्पूर्ण क्षेत्र में उपज मे वृद्धि होती है।
- किसान फसलो की सिंचाई सुविधापूर्वक कर सकता है जिससे मजदूरों का खर्च बचाया जा सकता है।
- इस विधि मे नालियाँ बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। अतः फसलों के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र में वृद्धि हो जाती है।
- इस विधि से पानी देने पर उर्वरक/पोषक तत्वों की

लिचिंग में कमी आती है तथा पौधों को उर्वरक सीधे जड़ों में पहुँचाया जा सकता है। जिससे उर्वरक उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है।

- नालियों में उगे खरपतवार पानी का अवशोषण नहीं कर पाते। जिस कारण खरपतवार बहुत कम मात्रा में उगते हैं और मृदा कटाव भी नहीं होता है।
- बीज अंकुरण प्रतिशत में वृद्धि होती है।

आधुनिक परिवहन

कृषि उत्पादों को हम आधुनिक परिवहन के माध्यम से सुरक्षित और कुशल तरीके से एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचा सकते हैं। खेती में उपयोग आने वाले सामान तथा उपज को उपभोक्ता तक कम समय में पहुँचाने में ट्रैक्टर, ट्रक, रेलगाड़ी और समुद्री जहाजों का प्रयोग कर रहे हैं। किसानो का कृषि उत्पाद समय पर उपभोक्ताओं के पास पहुँच सकता है। आधुनिक परिवहन प्रणाली के निम्नलिखित लाभ हैं–

- आधुनिक परिवहन के माध्यम से डेयरी से जुडे किसान ग्रामीण क्षेत्रों से दूध शहरों मे पहुँचा कर अधिक लाभ कमा रहे हैं।
- किसान अपने उत्पाद दूर बड़े–बड़े बाजारों (एक देश से दूसरे देश में) में भी बेच सकते हैं।
- आधुनिक परिवहन प्रौद्योगिकी से किसानो को खेत पर उर्वरक और उपकरण आसानी से प्रयुक्त हो सकते हैं।
- कृषि उत्पाद खेत से बाजार में सुविधापूर्वक और समय से पहुँचते हैं। इस प्रकार किसानों का उत्पाद सुरक्षित रहता है और किसानों को आर्थिक नुकसान भी नहीं होता हैं।
- किसान अपने उत्पाद का विपणन स्वयं कर सकता है और व्यापार से सम्बन्धित जानकारी भी प्राप्त कर रहा है।
- किसानों के द्वारा परिवहन का प्रयोग करने से मध्यस्थ की भूमिका समाप्त होने से अधिक लाभ प्राप्त होगा।

शीतलन सुविधाएं

भारत फल उत्पादन में प्रथम स्थान पर तथा सब्जी उत्पादन में दूसरे स्थान पर है। लेकिन किसानों के पास उत्पादों के उचित रखरखाव के पर्याप्त साधन न होने के कारण उत्पादन का कुछ भाग उपभोक्ता तक पहुँचने से पूर्व ही नष्ट हो जाता है और उसकी गुणवत्ता में भी काफी कमी आती है। जिससे किसानों को फलों, सब्जियों व अन्य उत्पादों के विपणन में समस्या आती है, और उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता है। अतः इस समस्या के समाधान के लिए शुलभ कोल्ड स्टोरेज या प्रशीतन का विशेष महत्व है। किसी उत्पाद या पदार्थ को उसके वातावरण के ताप के नीचे तक ठण्डा करने की प्रक्रिया को प्रशीतन कहते हैं। विगत वर्षो में इन यांत्रिक विधियों का विस्तार बर्फ बनने से लेकर खाद्य एवं पेय पदार्थों को शीतल रखने तथा अधिक समय तक इन्हें संरक्षित रखने हेतू किया गया परन्तु अब इनका प्रयोग बहुत बड़े व्यवसायिक पैमाने पर किया जाने लगा है। ये सुविधाए किसानों को टमाटर, डेयरी उत्पाद, फल, फूल आदि उत्पादों को अधिक समय तक ताजा रखने और समय पर बाजार में उपलब्ध कराने के लिए उपयोग कर रहे हैं जिससे उत्पाद वितरण तक ताजे रहेंगें और उनका स्वाद भी अच्छा रहेगा। इस प्रकार किसानों के उत्पादों को सुरक्षित और गुणवत्ता युक्त बनाना सम्भव हो गया है। यह किसान और उपभोक्ताओं दोनों के लिए फायदेमंद हैं। किसानों के पास अधिक मांग होने पर किसान उपभोक्ताओं को ताजा उत्पाद देने के साथ बिना–मौसम के भी शाक–सब्जी व फल उपलब्ध करा सकते हैं और अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

ई–कृषि

ई–कृषि को इंटरनेट और संबधित तकनीक के प्रयोग पर आधारित कृषि मूल्य श्रृंखला के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसमें सूचना और संचार तकनीक के पहले से अस्तित्व में या नये उभरते तरीकों का अनुप्रयोग और नवीनतम समाधानों का विकास, डिजाईन और धारणाओं का विकास शामिल है। ई–कृषि के अनुप्रयोग में वे सभी कृषि और ढांचागत परियोजनाएं शामिल हैं जिसमें सूचना और संचार तकनीक द्वारा लोगों के सशक्तीकरण की क्षमता मौजूद होती हैं। संचार और सूचना तकनीक के माध्यम से किसान मांग आधारित कृषि सम्बन्धित सूचना उपलब्ध कर सकते हैं ताकि वे अपने उत्पादों के मूल्य, जुताई के विभिन्न तरीकों, फसल सुरक्षा और उत्पादों के सही दामों पर सक्षम खरीददारों से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर सकें। किसानो को विभिन्न सूचनाओं और प्राथमिक

वस्तुओं को उपलब्ध कराने वाली कंपनियों, (जिन्हें इनपुट कंपनियां कहते हैं जैसे बीज, उर्वरक, फसल रक्षा रसायन, खेती संबंधी मशीनरी, माल ढुलाई, वेयर हाउसिंग, मौसम संबंधी आंकडे उपलब्ध कराने वाली संस्थाएं) आदि के माध्यम से विभिन्न प्रकार से लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मण्डियों को आनलाईन करने के फैसले के अच्छे परिणाम निकलकर सामने आये हैं जिनसे बिचौलियो से छुटकारा मिला है और साथ ही आनलाईन बिक्री होने से किसानों को सीधा फायदा मिला है। ई–कृषि के माध्यम से किसान अपना उत्पाद बाजार मे घर बैठे बेच सकते हैं और बेचे गये उत्पाद का मूल्य सीधा अपने बैंक खाते में प्राप्त कर सकते हैं। ई–कृषि से किसानो का डाटा भी आनलाईन रहेगा जिससे उपभोक्ता सीधे किसान से उत्पाद प्राप्त कर सकते हैं और जिससे किसानो को उचित मूल्य मिलेगा तथा उपभोक्ताओं को भी फायदा होगा। ई–कृषि से किसानो को निम्नलिखित लाभ हैं

- मौसम के पूर्वानुमान और आपदाओं की समय पर जानकारी
- बेहतर और सहज कृषि–पद्यतियों की जानकारी
- कृषि जोखिम मे कमी और आय में वृद्धि
- बेहतर जागरूकता और नई जानकारी
- फसल बीमा योजना जैसी सरल और किसान हितैषी सरकारी विनियामक उपायों की जानकारी
- सस्ती वित्तीय सहायता की जानकारी

मोबाईल ऐप

मोबाईल ऐप के माध्यम से हमे प्रतिदिन बाजार में फसलों के मूल्यों और मौसम जैसे–तापमान, बारिश और आर्द्रता आदि की जानकारी मिलती है। जिसके कारण मौसम के पूर्वानुमान के आधार पर कृषि उद्योग को मौसम की मार से भी बचा सकते है। मोबाईल ऐप के माध्यम से किसान भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों से कृषि से सम्बन्धित जानकारी भी प्राप्त कर सकते हैं। कृषि से सम्बन्धित ऐप से निम्न जानकारी प्राप्त कर सकते हैं

- मोबाइल ऐप के माध्यम से फसलों के बोने का समय।
- फसलों में सिंचाई की संख्या और समय ज्ञात कर सकते हैं।
- फसलों में रोग नियंत्रण के लिए उचित दवाओं का प्रयोग।
- मौसम की जानकारी।
- उत्पाद विशेष की बाजार में माँग की जानकारी

निष्कर्ष

आज के बदलते परिवेश के परिपेक्ष्य में भारत के किसानो को अपने पुराने तरीकों को बदलकर उसमें आधुनिक तकनीकों को स्थान देना होगा क्योंकि इसके द्वारा कम लागत व कम समय में उच्च उत्पादन के साथ उच्च गुणवत्ता प्राप्त की जा सकती है। कृषि में आधुनिक तकनीक से फसलों में सुधार, अधिक उत्पादन के साथ कीट व खरपतवारों पर सुरक्षित और प्रभावी तरीकों से नियंत्रण रख सकते हैं। कृषि में तकनीकी स्थानान्तरण से मृदा और जल संरक्षण सुधार के उपायों द्वारा कृषि की उत्पादन क्षमता बढ़ी है तथा लागत घटी है। अतः कृषि उद्योग को उन्नत बनाने के लिए किसानो को उपरोक्त तरीकों को अपनाकर अधिक लाभ प्राप्त करना चाहिए।

फसलोत्पादन में जैव उर्वरकों का महत्त्व

नरेन्द्र सिंह, सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)
कृषि विज्ञान केन्द्र, नगीना, बिजनौर,

सूक्ष्म जीवों की निर्धारित मात्रा को किसी नमी धारक पदार्थ में मिला कर जैव उर्वरक तैयार किये जाते हैं, जिन्हें प्रायः कल्चर के नाम से जाना जाता है। जैव उर्वरक एक प्राकृतिक उत्पाद हैं। इनका उपयोग विभिन्न फसलों में नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की आंशिक पूर्ति हेतु किया जा सकता हैं। इनके उपयोग का भूमि पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है बल्कि यह भूमि के भौतिक व जैविक गुणों में सुधार कर उर्वरा शक्ति को बढ़ाने में सहायक होते हैं। ये सूक्ष्मजीव वातावरणीय नत्रजन को मृदा में संचित करके पौधों को उपलब्ध कराते हैं। भूमि में विद्यमान पौधे के लिए अपर्याप्त फॉस्फोरस तत्व को सुलभ रूप में फसलों को पहुँचाते हैं, जड़ों का शीघ्र विकास करने में मदद करते हैं, पौधों में रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास करते हैं तथा फसलों में पुष्पन निर्माण क्रिया बीज एवं फल विकास में मदद करते हैं। इसके अतिरिक्त यह पादप वृद्धि नियामक, विटामिन एवं हार्मोन का भी संश्लेषण करके पौधों की वृद्धि एवं विकास में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। जैव उर्वरक नाइट्रोजन एवं पोटाष तत्वों की लीचिंग द्वारा होने वाली हानि को रोकते हैं तथा अपने गुणों के कारण कार्बनिक अम्लों को पैदा करते हैं जिसके निर्माण से मृदा में फास्फोरस स्थिरीकरण की क्रिया को 70–80 प्रतिशत तक कम करते हैं यदि इनका प्रयोग किया जाये तो कम से कम 25–30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20–25 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 15–20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर प्रति वर्ष बचाया जा सकता है। इस प्रकार उत्पादन लागत घटती है, लाभ बढ़ता है विदेशी मुद्रा की बचत होती है। जैविक खेती में इनका महत्त्व और भी अधिक है। फसलोत्पादन में प्रयोग किये जाने वाले मुख्य जैव उर्वरक इस प्रकार हैं।

राइजोबियम जैव उर्वरक

राइजोबियम नामक जीवाणु दलहनी फसलों की जड़ों पर पायी जाने वाली ग्रन्थियों का निर्माण कर, इन गाँठो में रह कर वायुमंडल की नाइट्रोजन का स्थरीकरण कर फसल को उपलब्ध कराते हैं। अलग–अलग दलहनी फसलों में अलग–अलग जाति के राइजोबियम जीवाणु जड़ों पर गांठों का निर्माण करते हैं। इसलिए फसल के अनुसार ही राइजोबियम कल्चर का प्रयोग किया जाना चाहिए। इस जैव उर्वरक का प्रयोग विभिन्न दलहनी फसलों जैसे–मसूर, मटर, चना, उड़द, मूँगफली, अरहर, राजमा एवं सोयाबीन में किया जा सकता हैं वैसे तो विभिन्न दलहनों की जड़ो पर गांठों का निर्माण करने वाला राइजोबियम जीवाणु भूमि में प्राकृतिक रूप से विद्यमान है परन्तु कई स्थानों पर मिट्टी में इनकी पर्याप्त संख्या न होने अथवा प्राकृतिक रूप में विद्यमान राइजोबियम जीवाणु की कम सक्रियता एवं नाइट्रोजन स्थरीकरण क्षमता के कारण, इस जैव उर्वरक का दलहनों में प्रयोग करने की अनुसंशा सिफारिश की जाती है। जिससे पर्याप्त मात्रा में जड़ ग्रन्थियों का निर्माण हो सके। इस कल्चर के प्रयोग से विभिन्न दलहनों की उपज में 10 से 15 प्रतिशत तक की वृद्धि पायी गई हैं। दलहनों में राइजोबियम जैव उर्वरक उपयोग का लाभ अगली बोयी जाने वाली फसल में भी देखा गया हैं।

एजोटोबैक्टर जैव उर्वरक

एजोटोबैक्टर जीवाणु भूमि में स्वतन्त्र रूप से रह कर वायुमंडल की नाइट्रोजन को भूमि में स्थिर करते हैं जिसका उपयोग पौधे कर पाते हैं। इसका प्रयोग विभिन्न धान्य फसलों जैसे–गेहूँ, मक्का, बाजरा, ज्वार, सब्जियों की फसलों जैसे टमाटर, गोभी, बैगन, आलू, अन्य फसलों जैसे कपास, एवं दलहनों में भी किया जा सकता है। इस जैव उर्वरक के प्रयोग से फसलों को 20–25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन के बराबर लाभ प्राप्त होता है एवं उनकी उपज में लगभग 10 प्रतिशत तक की वृद्धि हो जाती है।. इसके अतिरिक्त इस जैव उर्वरक से बीज की जमाव क्षमता में भी वृद्धि देखी गई है एवं पौधों में रोगों का प्रकोप कम होता हैं परन्तु यह जैव उर्वरक फसलों की सम्पूर्ण नाइट्रोजन तत्व की पूर्ति कर पाने में सक्षम नहीं हैं। अतः अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए शेष नाइट्रोजन का प्रयोग उर्वरकों द्वारा करना चाहिए।

एजोस्पिरिलम जैव उर्वरक

एजोटोबैक्टर की भांति एजोस्पिरिलम जैव उर्वरक भी भूमि

में स्वतन्त्र रूप से रहते हुए वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को यौगिकीकृत कर फसलों को लाभ पहुँचाते हैं इसका प्रयोग भी विभिन्न धान्य फसलों में किया जा सकता हैं परन्तु मक्का, बाजरा, ज्वार, आदि फसलों में इस जैव उर्वरक का लाभ अधिक देखा गया हैं क्योंकि इन फसलों के साथ इस जीवाणु की विशिष्टता पाई गई है इस जैव उर्वरक द्वारा फसलों को प्रति हैक्टर 20–30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन उर्वरक के बराबर लाभ मिलता है। इस जैव उर्वरक के प्रयोग से फसलों की उपज में 5 से 10 प्रतिशत तक की वृद्धि देखी गई है। इस जैव उर्वरक का प्रयोग धान की फसल में भी किया जा सकता हैं यह भी देखा गया है कि एजोस्पिरिलम जैव उर्वरक का प्रयोग करने से जड़ों का विकास अधिक होता है जिससे वह भूमि से पोषक तत्वों को अधिक मात्रा में ग्रहण कर सकती है पौधौं को इससे अतिरिक्त लाभ प्राप्त होता है।

फॉस्फेट विलयकारी जैव उर्वरक (पी.एस.एम.)

कुछ जीवाणु (बैसीलस, स्यूडोमोनास इत्यादि) एवं कवक (एसपरजिलस, पैनिसिलियम, इत्यादि) भूमि के अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील रूप में परिवर्तित कर इसे पौधों के उपयोग योग्य बना देते हैं। इन सूक्ष्म जीवों का प्रयोग फॉस्फेट विलयकारी जैव उर्वरक (पी.एस. एम.) के रूप मे फसलों में फॉस्फोरस तत्व प्रदान करने के लिए प्रदान किया जा सकता है। इस जैव उर्वरक का उपयोग सभी धान्य, दलहन एवं तिलहन फसलों में किया जा सकता है। भूमि में विद्यमान घुलनशील फॉस्फोरस के प्रकार के आधार पर फसलों को 20 से 25 कि.ग्रा. / हैक्टर उर्वरक, फार्स्फोरस के बराबर लाभ पहुँचाते हैं। रॉक फॉस्फेट के साथ इनके प्रयोग से 30 से 35 कि.ग्रा. फॉस्फोरस के बराबर लाभ प्राप्त किया जा सकता है। फार्स्फोरस के उर्वरक अपेक्षाकृत महंगे होते हैं एवं इन उर्वरकों की प्रयोग क्षमता भी कम होती है अतः फॉस्फोरस तत्व की उपलब्धता हेतू फॉस्फेट विलयकारी जैव उर्वरकों का प्रयोग फसलो में करना चाहिए। इनका उपयोग नाइट्रोजन प्रदान करने वाले जैव उर्वरकों (राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पिलियम) के साथ मिलाकर भी किया जा सकता है।

तरलीय रुप में उपलब्ध जैव उर्वरकों के प्रकार

आजकल जैव उर्वरक तरलीय रुप में उपलब्ध है जो ठोस (शुष्क पाउडर) रुप में उपलब्ध जैव उर्वरकों की तुलना में अधिक लाभकारी है जो निम्नलिखित है –

1. एन.पी.के.–1 = एजैटोवैक्टर + पी.एस.वी. + के.एम. वी. = रबी की सभी फसलों के लिए उपयोगी है।
2. एन.पी.के.–2 = एजोस्पाइरिलम + पी.एस.वी. + के. एम.वी. = खरीफ की सभी फसलों के लिए उपयुक्त है।
3. एन.पी.के.–3 = राइजोबियम + पी.एस.वी. + के.एम. वी. = सभी दलहनी फसलों के लिए उपयोगी है।

तरलीय रुप के लाभ

- ठोस रुप में उपलब्ध जैव उर्वरकों की तुलना दोगुने समय तक सूक्ष्म जीव सुरक्षित रह सकते हैं दो वर्ष तक सुरक्षित रख सकते हैं।
- 45 डि.ग्री. तापमान तक इनमें कोई कमी नहीं होती है।
- ठोस की तुलना में सूक्ष्म जीव लगभग दुगनी मात्रा में मिलते है (1.0 मि.ली. में 10 करोड़)।
- बीज / जड़ / मृदा / ड्रिप / सामान्य सिंचाई द्वारा सुलभता पूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।
- लाने ले जानें में कोई समस्या नहीं होती है।
- पी.एच. 5–7 के बीच।
- संदूषण की संभावना नगन्य।
- सहनशीलता लिमिट 5×10^7 जीव / मिली0।
- सभी फसलों में प्रयोग करने पर अच्छे परिणाम मिलते हैं।
- तेजी से बढ़वार करते हैं।

जैव उर्वरकों की मात्रा एवं प्रयोग करने का तरीका

राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पिलियम एवं फास्फेट विलयकारी जैव उर्वरकों के लिए बीज उपचार विधि सुविधाजनक एवं प्रचलन में है। सामान्यतः किसी भी फसल के 10 कि.ग्रा. बीज को उपचारित करने के लिये 200 ग्राम जैव उर्वरक पर्याप्त होता है। जैव उर्वरक की मात्रा को 200 से 250 मि.ली. गुड या चीनी के ठंडे घोल में मिला कर घोल बना लें। तत्पश्चात् जैव उर्वरक के इस घोल को बीजो के ऊपर उड़ेल कर बीजों के साथ इस प्रकार मिला लें कि प्रत्येक बीज के ऊपर जैव उर्वरक की एक समान परत चिपक जाये। जैव उर्वरकों से उपचार के बाद बीज काले रंग के दानें जैसे दिखते हैं। जैव उर्वरकों से उपचारित बीजों को थोड़ी देर छाया में सुखा कर बुवाई कर देनी

चाहिए। धान्य फसलों में एजोटोबैक्टर, एजोस्पिलियम, जैव उर्वरकों के साथ पी. एस. एम. जैव उर्वरक का प्रयोग भी किया जा सकता है। इसी प्रकार दलहनों में राइजोबियम जैव उर्वरक एजोटोबैक्टर, एजोस्पिलियम या पी.एस. एम. जैव उर्वरकों का प्रयोग भी किया जा सकता है। दो या अधिक जैव उर्वरकों को प्रयोग करने के लिए इनकी आवश्यक मात्रा का एक साथ घोल बना कर बीजों का उपचार करना चाहिए।

- तरलीय रुप में उपलब्ध जैव उर्वरकों की 500 मि.ली. मात्रा 1 बोरा कम्पोस्ट या गोबर की खाद में समान रुप से मिलाकर फसल की बुवाई से पूर्व सांयकाल के समय खेत में एक समान रुप से बखेर कर यथाशीघ्र जुताई करके मिट्टी में मिक्स कर देना चाहिए।
- धान/सब्जी की पौध/गन्ने के टुकड़ों/आलू की फसलों में बीज उपजार करके भी इनका प्रयोग सफलता पूर्वक किया जा सकता है संस्तुत मात्रा को 20–25 ली0 पानी (अथवा आवश्यकतानुसार) में घोलकर पौध की जड़ों/गन्ने के टुकड़ों/आलू के कन्दों को इस घोल में 15–20 मिनट तक डुबायें। उपचारित किए गये मैटेरियल को एक घण्टें तक छाया में सुखाना चाहिए तत्पश्चात यथाशीघ्र मुख्य खेत में इनको रोपित कर देना चाहिए।
- यदि उपरोक्तानुसार किसान भाई प्रयोग न कर सके हो तो इसे खड़ी फसल में सिंचाई जल के साथ प्रयोग करके भी फसलों को दे सकते है। इसके लिए किसान भाई ध्यान दें कि साफ बर्तन का प्रयोग करें जो किसी भी प्रकार के रसायन (उर्वरक/कीटनाशी) के लिए प्रयोग नहीं किया गया हो अन्यथा सूक्ष्म जीवों के मरने की सम्भावना रहेगी, संस्तुत मात्रा को पर्याप्त पानी में घोलकर मुख्य प्रवेश नाली के ऊपर इस प्रकार व्यवस्थ्ति करें ताकि बूँद–बूँद करके यह पूरे खेत में मिल जाये।
- बीज की मात्रा के अनूसार संस्तुत जैव उर्वरक की मात्रा को लेकर आवश्यकतानुसार पानी में घोल कर बीज के ऊपर छिड़क कर हाथ से अच्छी प्रकार मिला दें तत्पश्चात उपचारित बीज को छाया में सुखाकर यथाशीघ्र बुवाई में प्रयोग कर लें।

जैव उर्वरकों के प्रयोग में सावधानियाँ

जैव उर्वरक एक सजीव उत्पादन है अतः इनके प्रयोग का लाभ प्राप्त करने के लिये निम्न सावधानियों का पालन करना आवश्यक है

- जैव उर्वरकों से मिलने वाला लाभ बहुत हद तक जैव उर्वरकों की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। अतः किसी सरकारी संस्थान या विश्वसनीय स्रोत से उच्च गुणवत्ता का जैव उर्वरक ही क्रय करना चाहिए।
- जैव उर्वरकों का प्रयोग इनके लिये निर्धारित अन्तिम तिथि से पूर्व ही कर लेना चाहिए।
- जैव उर्वरकों का चयन फसल के अनुसार किया जाना चाहिए।
- जैव उर्वरकों को सीधे रासायनिक उर्वरकों एवं खेती में प्रयोग किये जाने वाले अन्य रसायनों (कीटनाशक, खरपतवारनाशक आदि) के सम्पर्क नही आने देना चाहिए।
- जैव उर्वरकों से बीज का उपचार किसी स्वच्छ फर्श, पॉलीथीन या बोरे पर करना चाहिए।
- यदि किसी रसायन बीजोपचार किया जाना आवश्यक हो बीज का पहले रसायनों से उपचारित कर उसके पश्चात् जैव उर्वरकों से उपचार करना चाहिए। ऐसी स्थिति में जैव उर्वरकों की मात्रा दोगुनी करना हितकर रहता है।
- जैव उर्वरकों से उपचार के बाद बीज को रात भर या अधिक देर तक नहीं रखना चाहिए। बीजों को छाया में सुखाकर शीघ्र ही बुवाई कर देनी चाहिए एवं कूड़ों को बन्द कर देना चाहिए ।

जैव उर्वरकों से उपचारित बीजों को धूप में सुखाना नहीं चाहिए एवं बीजों को सीधे रासायनिक उर्वरकों या अन्य कृषि रसायनों के सम्पर्क में नहीं आने देना चाहिए।

राजस्थान के लिए वरदान है जौ की खेती

प्रदीप सिंह शेखावत एवं हर्षराज कंवर
पादप रोगविज्ञान संभाग, राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान,
(श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय), दुर्गापुरा, जयपुर. 302018

जौ उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्र की एक महत्त्वपूर्ण रबी फसल है। वर्ष 2015–16 में 6.7 लाख हैक्टर भूमि में 16.0 लाख टन जौ का उत्पादन हुआ। जौ की खेती कम निवेश एवं विषम परिस्थितियों जैसे बारानी, लवणीय/क्षारीय भूमि एवं कम उपजाऊ क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। भारतवर्ष में जौ को केवल खाद्य एवं पशु आहार के रूप में प्रयोग किया जाता था, परन्तु अब यह अपने औद्योगिक प्रयोग, पोषक एवं औषधीय गुणों के कारण उच्च गुणवत्ता खाद्यान्न के रूप में प्रसिद्ध हो रहा है। बदलते सामाजिक परिपेक्षय में जौ माल्ट से निर्मित खाद्य वस्तुएं जैसे बीयर, व्हिस्की, ऊर्जा युक्त पेय आदि की मांग दिनोदिन बढ़ती जा रही है। जौ के औषधीय गुणों के कारण उच्च रक्तचाप, मूत्र रोग, मधुमेह एवं पाचन संबंधी विकारों से पीड़ित रोगियों के लिए यह उत्तम खाद्य है। क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से राजस्थान देश का सबसे बड़ा जौ उत्पादक राज्य है। राजस्थान में वर्ष 2015–16 में 3.43 लाख हैक्टर भूमि में 9. 62 लाख टन जौ का उत्पादन हुआ। अखिल भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान परियोजना के तहत राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा में जौ के आनुवंशिक सुधार, उत्पादन एवं फसल संरक्षण तकनीक पर सतत् अनुसंधान चल रहा है। इस केन्द्र ने जौ उत्पादन की सभी परिस्थितियों एवं क्षेत्र के लिए नई प्रजातियाँ विकसित की है जिसका लाभ प्रदेश के अलावा देश के अन्य जौ उत्पादक राज्यों के किसानो को भी मिल रहा है। राजस्थान में घटते भूजल स्तर एवं कम वर्षा के कारण शीतकाल में पशुओं के लिए हरे चारे का अभाव रहता है। कम पानी की आवश्यकता एवं प्रारम्भिक अवस्था में तीव्र वृद्धि जौ की विशेषताएं हैं। इन्हीं वि ोषताओं के कारण रबी में हरे चारे एवं दाने दोनों के लिए जौ की खेती राज्य के लिए वरदान साबित हो रही है। जौ उत्पादन के लिए नवीनतम उन्नत प्रौद्योगिकी को अपनाकर अच्छी गुणवत्ता के साथ अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

मिट्टी : जौ की खेती के लिए उत्तर भारत के मैदानी भागों की बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त है। वैसे जौ की खेती लवणीय, क्षारीय या हल्की मिट्टी में भी सफलता पूर्वक की जा सकती है।

किस्म का चुनाव : क्षेत्रीय उपयोग एवं संसाधन की उपलब्धता के आधार पर अधिक उत्पादन के लिए नई किस्म का चुनाव निम्न प्रकार से करना चाहिए।

सिंचित, समय से बुवाई :– आर.डी. 2786, आर.डी. 2552 एवं आर.डी. 2592

सिंचित, देरी से बुवाई :– आर.डी. 2508 एवं आर.डी. 2503

बारानी :– आर.डी. 2660 एवं आर.डी. 2624

क्षारीय एवं लवणीय भूमि :– आर.डी. 2552 एवं आर.डी. 2794

सुत्रकृमि (मोल्या) ग्रसित क्षेत्र :– आर.डी. 2035 एवं आर.डी. 2052

हरा चारा एवं दाना (दोहरी उपयोगिता) :– आर.डी. 2035, आर.डी. 2552 एवं आर.डी. 2715

माल्ट:– द्वि पंक्ति जौ आर.डी. 2668, डी. डब्ल्यूआर यू बी 52, आर.डी. 2849 एवं छः पंक्ति जौ आर.डी. 2503

खेत की तैयारी एवं भूमि उपचार

खेत की अच्छी तैयारी करें। भूमि का समतलीकरण एवं मेड़ बनाना आवश्यक हैं, ताकि सिंचाई आसानी से हो सके तथा असिंचित खेती के लिए वर्षा का पानी खेतों में जमा हो सके। मृदा की उर्वरता बनाए रखने के लिए बुवाई से लगभग एक माह पूर्व 8–10 टन अच्छी सड़ी गोबर की खाद अथवा कम्पोसट भूमि में अवश्य मिलावें। भूमिगत कीड़ों की रोकथाम के लिए प्रति हैक्टर 25 कि0ग्रा0 क्यूनोलफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण आखिरी जुताई से पूर्व भूमि में डालें ।

बीज एवं बीजोपचार

सदैव अच्छी गुणवत्ता वाला प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए। बीज से पैदा होने वाले आवृत एवं अनावृत कण्डुआ तथा पत्तीधारी रोगों से बचाव के लिए बीजोपचार टेबुकोनोजोल 2 डी.एस. 1 ग्राम अथवा कार्बोक्सिन 37.5 प्रतिशत डब्ल्यूपी + थायरम 37.5 प्रतिशत डब्ल्यूपी 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज दर से करें।

दीमक से बचाव के लिए 600 मि.ली. फिप्रोनिल 5 प्रतिशत

बीजाई का समय, बीज दर, दूरी एवं उर्वरक की मात्रा

उत्पादन स्थिति	बीज दर (कि.ग्रा./ हैक्टर)	बीजाई का समय	दूरी (से.मी.)	उर्वरक की मात्रा (कि.ग्रा. हैक्टर) नत्रजन फास्फोरस
सिंचित				
समय से बुवाई	100	15 अक्तूबर से 30 नवम्बर	20	80नः 20फा
देरी से बुवाई	125	1–20 दिसम्बर	20	80न : 40फा
बारानी	125	15 अक्तूबर से 7 नवम्बर तक	20	30न : 15फा
लवणीय एवं क्षारीय	100	15 अक्तूबर से 15 नवम्बर तक	20	30नः 15फा
मोल्या ग्रस्त भूमि	125	15 अक्तूबर से 30 नवम्बर तक	20	80नः 20फा

एस.सी. या 150 ग्राम क्लोथायानिडीन 50 डब्ल्यू डी जी दवा को आवश्यकतानुसार पानी में घोलकर 100 किलोग्राम बीज पर समान रूप से छिड़ककर उपचारित कर छाया में सुखाने के बाद तुरन्त बुवाई करें।

उर्वरकों का चुनाव एवं मात्रा का निर्धारण मृदा जाँच के आधार पर तथा उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी के प्रकार एवं बुवाई की स्थिति के अनुसार करें। सिंचित क्षेत्रों में फास्फोरस की पूरी एवं नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय डाल दें। नत्रजन की शेष आधी मात्रा को खड़ी फसल में प्रथम एवं दूसरी सिंचाई के साथ बराबर मात्रा में दें। बारानी क्षेत्र में नत्रजन एवं फॉस्फोरस की पूरी मात्रा बीजाई के समय ही देवें।

पोटाश की कमी वाले क्षेत्रों में पोटाश की आवश्यक मात्रा को बुवाई के समय ही देनी चाहिए। जस्ते की कमी वाली भूमि में 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, मैंग्नीज तत्व की कमी की स्थिति में 20 कि.ग्रा. मैंग्नीज सल्फेट तथा गन्धक की कमी वाले क्षेत्र में 250 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति हैक्टर की दर से बुवाई से पूर्व डाल दें।

सिंचाई : जौ की खेती सिंचित के साथ साथ वर्षा आधारित या कम पानी वाले क्षेत्रो में भी आसानी से की जा सकती है। सामान्यतः जौ को 2 से 3 सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है। पानी की उपलब्धता के आधार पर सिंचाई उपयुक्त अवस्था पर देनी चाहिए। यदि दो सिंचाईयाँ उपलब्ध हो तो पहली सिंचाई बीजाई के 25–30 दिन बाद कल्ले निकलते

खरपतवार	खरपतवारनाशी	दवा की मात्रा सक्रिय तत्व/ हैक्टर	प्रयोग विधि
चौड़ी पत्तीः बथूआ, कृष्णनील, जंगली गाजर	2–4 डी (एस्टर साल्ट)	500 ग्राम (हल्की मिट्टी)	बीजाई के 30–35 दिन बाद 500–700 लीटर पानी में
	2–4 डी (एमाइन साल्ट)	750 ग्राम (भारी मिट्टी)	
	मेटसल्फ्यूरॉन	4 ग्राम	
संकरी पत्तीः गुल्ली डंडा, जगली जई	आइसोप्रोटूरॉन 75 प्रतिशत	750 ग्राम (हल्की मिट्टी) 1500 ग्राम (भारी मिट्टी)	बीजाई के 30–35 दिन बाद 500–700 लीटर पानी में
	पैन्डीमिथेलीन	750 ग्राम	बीजाई के तुरन्त बाद 3 दिन के अन्दर
दोनो तरह की खरपतवारों के लिए	आइसोप्रोटूरान + मेटासल्फ्यूरान	750 ग्राम + 4 ग्राम	बीजाई के 30–35 दिन बाद 500–700 लीटर पानी में

खरपतवारनाशी का छिड़काव सदैव फ्लैट फैन नोजल द्वारा समान रूप से करना चाहिए। ध्यान रहे कि कहीं भी दोहरा छिड़काव नहीं होना चाहिए।

समय तथा दूसरी सिंचाई बीजाई के 65–70 दिन बाद बाली आने की अवस्था पर देनी चाहिए और यदि तिसरी सिंचाई भी उपलब्ध हो तो बीजाई के 90 दिन बाद दाना बनते समय देनी चाहिए। माल्ट जौ की फसल में 3 से 4 सिंचाईयाँ देनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

प्रमुख रोग

जौ की फसल में कई प्रकार के रोग लगते हैं। रोगों के कुप्रभाव से फसल उत्पादन एवं गुणवत्ता दोनो पर विपरीत असर पड़ता है। फसल को रोग से बचाने के लिए रोग की सही पहचान कर समय पर बचाव के उचित उपाय करने आवश्यक है।

पत्तीधारी रोग

लक्षण : कवक जनित यह रोग संक्रमित बीज से लगता है। रोग के प्रथम लक्षण प्रायः पोधे की फुटान अवस्था में दिखाई देते हैं। पत्तियों पर पीली धारियां बन जाती हैं। रोगी पौधे की लगभग सभी पत्तियां संक्रमित हो जाती है। पत्ती के पूर्ण विकास तक धारियों का रंग गहरा भूरा हो जाता है। इस रोग से पौधो की वृद्धि रूक जाती है, बालियां कम निकलती है एवं दाना हल्का अथवा बिल्कुल नहीं बनता है। पत्तियां सूखकर लम्बाई में फट जाती है।

आवृत कण्डुआ रोग

भारत में जौ की खेती करने वाले सभी क्षेत्रों में अनावृत कण्डुआ रोग पाया जाता है। राजस्थान के किसान भाई इसे कांग्या या कंगियारी रोग के नाम से जानते हैं।

लक्षण : रोग के लक्षण बालियाँ निकलते समय दिखाई देते हैं। संक्रमित पौधों में सामान्य बालियों के स्थान पर काले रंग की बालियां निकलती हैं। रोगी बालियों में बीज के स्थान पर कवक के काले बीजाणु पुंज बन जाते हैं। गहाई के समय कंड से प्रभावित बालियों के टूटने से कवक बीजाणु काले पाऊडर के रूप में बाहर निकल आते हैं एवं स्वस्थ दानों को संक्रमित कर देते हैं।

अनावृत कण्डुआ रोग

सामान्तया गेहूँ में लगने वाला यह रोग पिछले कुछ वर्षों से जौ में भी पाया जाने लगा है।

लक्षण : इस रोग के लक्षण भी बालियाँ निकलते समय ही प्रकट होते हैं। सामान्य बालियों के स्थान पर कंडयुक्त बालियां निकलती हैं। इन बालियों में दाने के स्थान पर कवक का काला चूर्णी बीजाणु समूह बन जाते हैं। आरम्भ में यह बीजाणु समुह एक पतली झिल्ली से ढके रहते हैं परन्तु शीघ्र ही यह झिल्ली फट जाती है और चूर्णी बीजाणु वायु के साथ उड़कर स्वस्थ बालियों को संक्रमित करती हैं।

निदान

1. प्रमाणित बीज में ही प्रयोग करें।
2 बीज से पैदा होने वाले आवृत एवं अनावृत कण्डुआ तथा पत्तीधारी रोगों से बचाव के लिए बीजोपचार टेबुकोनाजोल 2 डी.एस. 1 ग्राम अथवा कार्बोक्सिन 37.5 प्रतिशत डब्ल्यूपी + थायरम 37.5 प्रतिशत डब्ल्यूपी 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज दर से करें।
3 संक्रमित बालियों को सावधानीपूर्वक तोड़कर नष्ट करें।

चित्तीदार धब्बा रोग

कवक जनित इस रोग का प्रकोप ऊष्ण एवं नम क्षेत्र में अधिक होता है। इस रोग का प्रकोप फसल की किसी भी अवस्था में हो सकता है। यह रोग संक्रमित बीज एवं फसल अवशेष से आरम्भ होता है।

लक्षण : संक्रमित पत्ती के पटल एवं पर्णच्छद पर गहरे भूरे से काले विक्षत बन जाते हैं। ये विक्षत गोल या लम्बे सुनिश्चित किनारे वाले होते हैं, जो आपस में मिलकर बड़े धब्बे बनाते हैं। गंभीर रूप से संक्रमित पत्तियां सूख जाती हैं।

निदान

1. रोग रोधी किस्मों का चयन करें।
2. उचित फसल–चक्र अपनायें।
3. बीजोपचार कार्बोक्सिन नामक कवकनाशी से 2 ग्राम / किलोग्राम बीज दर से करें।
4. रोग की उग्रता पर टेबूकोनेजोल 25.90 प्रतिशत ई.सी. के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

पीला रतुआ रोग

पीला रतुआ जौ का एक प्रमुख रोग है। कवक जनित इस रोग को राजस्थान के किसान रोली रोग के नाम से भी जानते हैं। पक्सीनिया स्ट्राईफारमिस नामक कवक इस रोग का कारक है।

लक्षण

पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले नारंगी रंग की धारियां बन जाती हैं। कुछ दिनो पश्चात् इन धारियों से पीले रंग के कवक बीजाणु पाऊडर रूप में बाहर निकलने लगते हैं एवं हवा के साथ उड़कर रोग का प्रसार करते हैं। वातावरण में अत्यधिक नमी एवं कम तापक्रम (10–15° से.) इस रोग के फैलाव के लिए अत्यन्त अनुकूल है।

निदान

1. जौ की बुवाई के लिए सदैव नवीनतम रोली रोग रोधी उन्नत किस्मों जैसे आर.डी. 2552, आर.डी. 2592, आर.डी. 2624, आर.डी. 2660 आर.डी. 2668, आर.डी. 2592, आर.डी. 2715, आर.डी. 2786 एवं आर.डी. 2784, आदि का चयन करें।
2. इस रोग का प्रकोप प्रायः जनवरी–फरवरी माह (10–15° से. तापक्रम) में आरम्भ होता है। अतः उस समय फसल का ठीक से निरीक्षण करना चाहिये।
3. रोग के लक्षण दिखाई देने पर ट्रायडिमेफोन 25 प्रतिशत डब्ल्यू पी के 0.05 प्रतिशत अथवा टेबुकोनोजोल 25.9 प्रतिशत ई.सी. के 0.1 प्रतिशत घोल का 15 दिन के अन्तराल से दो छिड़काव करना चाहिये।

चुर्णिल आसिता

इस रोग को चूर्णी फफूंदी रोग भी कहते है। राजस्थान में जौ की फसल पर इस रोग का प्रकोप अधिक नहीं होता है।

लक्षण

रोग के प्रथम लक्षण पत्तियों की ऊपरी सतह पर रूई के समान रेशों से बने छोटे, सफेद या हल्के धूसर धब्बों के रूप में उभरते है। संक्रमित पत्तियां पीली एवं फिर भूरी पड़कर सूख जाती है। रोग के अनुकूल वातावरण में लक्षण पूरे पौधे पर प्रकट हो जाते हैं एवं पौधे की बढ़वार रूक जाती है। रोगी पौधों के कल्ले कम बनते हैं तथा दाने हल्के एवं सिकुड़े हुए बनते है। फसल की आरम्भिक अवस्था में रोग का प्रकोप हो जाने पर उत्पादन में भारी कमी होती है। वातावरण का तापक्रम 15 से 20 डिग्री से. के मध्य इस रोग के लिए अनुकूल स्थिति है। बीज एवं नत्रजन के अधिक प्रयोग से भी रोग का प्रकोप अधिक होता है।

निदान

1. सदैव रोग रोधक किस्म का ही चयन करें।
2. उचित फसल–चक्र अपनाएं।
3. रोग ग्रस्त फसल अवशेष को नष्ट करें।
4. मृदा जांच एवं फसल की आवश्यकता के अनुसार ही उर्वरक प्रयोग करें।
   बुवाई के लिए उचित बीज दर रखें एवं समय पर बुवाई करें।

मोल्या रोग

उर्वरकों का चुनाव एवं मात्रा का निर्धारण मृदा जांच के आधार पर तथा उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी के प्रकार एवं बुवाई की स्थिति के अनुसार करें। सिंचित क्षेत्रों में फास्फोरस की पूरी एवं नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय डाल दें। नत्रजन की शेष आधी मात्रा को खड़ी फसल में प्रथम एवं दूसरी सिंचाई के साथ बराबर मात्रा में दें। बारानी क्षेत्र में नत्रजन एवं फास्फोरस की पूरी मात्रा बीजाई के समय ही देवें।

प्रमुख कीट

चेपा (एफिड)

जौ की फसल में चेपा का प्रकोप होता है। प्रारंभ में चेपा खेत के किनारों पर पनपता है और वृद्धि होने पर खेत के

अंदर प्रवेश करता है अतः किनारो पर छिड़काव करने से इस कीट को खेत के अन्दर पनपने से रोका जा सकता है।

फसल को चेपा से बचाने के लिए प्रकोप दिखाई देने पर डाइमिथोएट 30 ई.सी. एक लीटर दवा प्रति हैक्टर दर से 700–800 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

दीमक

खड़ी फसल में दीमक नियंत्रण के लिए प्रति हैक्टर 4 लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. दवा को 80–100 कि.ग्रा. मिट्टी में मिलावें एवं खेत में डालकर तुरन्त सिंचाई करें।

कटाई एवं भंडारण

झड़ने की प्रकृति के कारण जौ को अधिक पकने से पूर्व ही काट लें ताकि बालियों को टूटने से बचाया जा सके। जौ का दाना हवा से नमी सोखता है अतः कीड़ो से बचाव के लिए सही स्थान पर भण्डारण करें।

जौ का हरे चारे में उपयोग

विगत कुछ वर्षों से उत्तर पश्चिमी भारत में विशेषतः राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में पशुओं के लिए हरे चारे की समस्या देखी गई है। रबी में उगाई जाने वाली चारा फसले जई एवं बरसीम को पानी की अधिक आवश्यकता पड़ती है।

इस समस्या के निदान के लिए जौ की द्विउद्देशीय किस्में जैसे आर.डी. 2052, 2035 एवं आर.डी. 2715 वरदान साबित हुई है। इन किस्मों से बुवाई के 50 से 55 दिन बाद एक कटाई लेकर प्रति हैक्टर 200–250 कुंतल हरा चारा एवं 25–30 कुंतल दाना की उपज आसानी से ली जा सकती है।

राजस्थान के पारम्परिक व्यंजन तथा उनमें कठिया गेहूँ का महत्त्व

लतिका व्यास

सह प्राध्यापक (गृह विज्ञान), प्रसार शिक्षा निदेशालय, म.प.कृ.प्रौ.वि.वि., उदयपुर

गेहूँ पूरे विश्व में उगाया एवं खाया जाने वाला अनाज है। इसकी मांग दिनो–दिन बढ़ रही है क्योंकि प्रति दिन का आहार इसके बिना अधुरा है। अनुसंधानों से पता चला है कि गेहूँ स्वस्थ जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण है। इससे काफी मात्रा में पौष्टिक तत्व मिलते हैं। गेहूँ शरीर को शक्ति प्रदान करता है क्योंकि इसके दाने का हर भाग खाने के काम में आता है जैसे ब्रान (चापड़), जर्म (अंकुर), एन्डोस्पार्म। इससे आटा व दलिया बनाने के बाद भी इसकी पौष्टिकता कम नहीं होती। भारतीय भोजन में गेहूँ को खाद्य पदार्थ के रूप में प्रयोग किया जाता है। विभिन्न दशाओं एवं भोजन की आदतों के अनुरूप भारत में तीन प्रकार के गेहूँ (चपाती, कठिया एवं खपली) की खेती की जाती है। इनमें सबसे अधिक चपाती, 88 प्रतिशत कठिया, 8 प्रतिशत तथा खपली का योगदान 2 प्रतिशत है। कठिया गेहूँ एवं ट्रीटीकम टरजीदम की उपप्रजाति ड्यूरम ही एकमात्र ऐसा टेट्राप्लॉयड गेहूँ है, जिसकी खेती विश्व में व्यापक रूप से की जाती है। कठिया गेहूँ का उत्पादन करने वाले देशों में भारत एक प्रमुख देश है तथा यहाँ कठिया गेहूँ का उत्पादन लगभग 2.0 मिलियन टन के आस–पास है। भारत में कठिया गेहूँ का उपयोग मुख्य रूप से सूजी, मेकेरोनी, नूडल इत्यादि एवं विशेष प्रकार के स्थानीय व्यंजन बनाने में किया जाता है। इन व्यंजनों में कठिया गेहूँ का प्रयोग चपाती गेहूँ कि अपेक्षा इसलिए अच्छा माना जाता है, क्योंकि इसका आटा चिपचिपा नहीं होता बल्कि दानेदार होता है।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों में कठिया गेहूँ से विभिन्न प्रकार के व्यंजन बनाए व खाए जाते हैं जैसे कि लडडू, नूडल्स, डेबरा, भाकरी, उपमा, इडली, उत्पम, दलिया, खिचड़ी, पोगल इत्यादि इसी क्रम में एक व्यंजन है, चक्की की सब्जी जो कि दक्षिण राजस्थान में बनाया एवं खाया जाता है। अनुसंधान के आधार पर यह सिद्ध हो गया है कि पास्ता, उत्पादों के लिए कठोर दाने, मजबूत ग्लूटेन, 12 प्रतिशत से अधिक प्रोटीन, 10 प्रतिशत से कम यलोबेरी दानों की संख्या तथा कम से कम 7 पी.पी.एम. बीटा केरोटिन वाली गेहूँ की आवश्यकता होती है। यह सभी विशिष्टताएँ कठिया गेहूँ में ही मिलती है (त्यागी एवं सहयोगी, 2009) यदि इसकी भरपूर फायदा लेना है तो हमें सम्पूर्ण गेहूँ का आटा काम में लेना चाहिये न की छना हुआ आटा या मैदा।

कठिया गेहूँ की उन्नत प्रजातियाँ

व्यंजनों की गुणवत्ता बड़ाने के लिए कठिया गेहूँ की नई अनुशंसित प्रजातियाँ जिनमें पोषक तत्वों की मात्रा तुलनात्मक रूप से अधिक हो को उगाना चाहिए तथा उनसे प्राप्त आटे का उपयोग करना चाहिए। इसी क्रम में कुछ प्रजातियों का उल्लेख यहां किया जा रहा है, जिनकी प्रति इकाई क्षेत्र उपज भी अधिक है, तथा पोषक तत्व भी अधिक प्रदान करती हैः–

एच.आई. 8663 (पोषण), एच.आई. 8713, यू.ए.एस. 428, यू.ए.एस. 415, जी.डी.डब्ल्यू. 1255, राज 1555, राज 6560, जी.डब्ल्यू. 1139, एच. आई. 8381, एच. आई. 8498, एच. आई.8627 (वर्षा आधारित)

स्वास्थ्य लाभ

गेहूँ की पौष्टिकता इस बात पर निर्भर करती है कि इसे किस रूप में खा रहे हैं। हम इसे सम्पूर्ण आटा, दलिया या प्रसंस्कृत उत्पाद जैसे कि मैदा, पास्ता नूडल्स, आदि खाते हैं। ब्लीच व मैदा बनाने की प्रक्रिया में 40 प्रतिशत पौष्टिकता नष्ट हो जाती है और हमें सिर्फ 60 प्रतिशत ही मिल पाती है क्योंकि इसमें से ब्रान व जर्म दोनों हटा दिये जाते हैं जिससे विटामिन बी$_1$, बी$_2$, बी$_3$, विटामिन ई, कैल्शियम, फॉस्फोरस, फॉलिक एसिड, कॉपर, जिंक, आइरन व रेशे 50 प्रतिशत तक कम हो जाते हैं। जर्म, विटामिन ई, विटामिन बी, मैंग्नीज, मैग्नीशियम, जिंक आदि का मुख्य स्रोत हैं। गेहूँ का सेवन रक्त अल्पता, खनिज लवणों की कमी, दुग्धपान अवस्था की समस्या, मोटापा, आँतों की बिमारियों, श्वास सम्बन्धी, हृदय सम्बन्धी रोगों में अत्यधिक लाभदायक है साथ ही शरीर की वसा को नियंत्रण में रखता है। यह हृदयाघात को कम करने में सहायक है क्योंकि इसमें वसा की मात्रा नहीं होती। यह मधुमेह रोगियों के खून में ग्लूकोज की मात्रा को स्थिर बनाए रखने में भी सहायक है। बचपन में होने वाले अस्थमा से बचाता है।

कठिया गेहूँ में पोषक तत्वों की तुलनात्मक उपलब्धता (प्रति 100 ग्राम में उपलब्धता)

पोषक तत्व	कठिया गेहूँ	मक्का	धान (सफेद)	धान (भूरा)	ज्वार
ऊर्जा	327 कैलोरी	365 कैलोरी	365 कैलोरी	370 कैलोरी	339 कैलोरी
वसा	1.54 ग्राम	4.74 ग्राम	0.66 ग्राम	2.92 ग्राम	3.3 ग्राम
रेशा	12.2 ग्राम	7.3 ग्राम	1.3 ग्राम	3.5 ग्राम	6.3 ग्राम
स्टार्च	0.41 ग्राम	0.64 ग्राम	0.12 ग्राम	0.85 ग्राम	–
सोडियम	2 मि.ग्रा.	35 मि.ग्रा.	5 मि.ग्रा.	7 मि.ग्रा.	6 मि.ग्रा.
पोटाशियम	363 मि.ग्रा.	287 मि.ग्रा.	115 मि.ग्रा.	223 मि.ग्रा.	350 मि.ग्रा.
कार्बोहाइड्रेट	71 मि.ग्रा.	74 मि.ग्रा.	80 मि.ग्रा.	77 मि.ग्रा.	75 मि.ग्रा.
प्रोटीन	12.6 मि.ग्रा.	9.4 मि.ग्रा.	7.1 मि.ग्रा.	7.9 मि.ग्रा.	11.3 मि.ग्रा.
कैल्शियम	29 मि.ग्रा.	7 मि.ग्रा.	28 मि.ग्रा.	23 मि.ग्रा.	28 मि.ग्रा.
विटामिन बी$_6$	60.3 मि.ग्रा.	0.62 मि.ग्रा.	0.16 मि.ग्रा.	0.51 मि.ग्रा	–
लोहा	3.19 मि.ग्रा.	2.71 मि.ग्रा.	0.8 मि.ग्रा.	1.47 मि.ग्रा.	4.4 मि.ग्रा.
मैग्नीशियम	126 मि.ग्रा.	127 मि.ग्रा	25 मि.ग्रा.	143 मि.ग्रा.	–
जिंक	2.65 मि.ग्रा.	2.21 मि.ग्रा.	1.09 मि.ग्रा.	2.02 मि.ग्रा.	–
कॉपर	0.43 मि.ग्रा.	0.31 मि.ग्रा.	0.22 मि.ग्रा.	3.74 मि.ग्रा.	–
मैंगनीज	3.99 मि.ग्रा.	0.49 मि.ग्रा.	1.09 मि.ग्रा.	–	–
नियासिन (बी$_3$)	5.46 मि.ग्रा	3.63 मि.ग्रा.	1.6 मि.ग्रा.	5.09 मि.ग्रा.	2.93 मि.ग्रा.

कठिया गेहूँ की गुणवत्ता के लक्षण मानक एवं इन मानकों के अनुरूप कुछ प्रजातियाँ

गुणवत्ता लक्षण	प्रजातियाँ
प्रोटीन की मात्रा (>12%)	राज1555, जी. डब्ल्यू. 1, एच.आई.8498
कैरोटीनॉयड्स (>6 पी.पी.एम.)	जी. डब्ल्यू.1, एच.आई. 8498, जी. डब्ल्यू.1139
टेस्ट वजन (>78 कि.ग्रा./है.ली.)	राज1555, एच.आई.8498, एम.पी.ओ.215, एच.आई.4502
सेडीमेटेशन मान (>35 मि.ली.)	पी.डी.डब्ल्यू.233, डब्ल्यू.एच.896
लोहा खनिज (>40 पी.पी.एम.)	एच.डी.4672, एच.आई.8663, एन.आई.डी.डब्ल्यू. 295
जिंक (>40 पी.पी.एम.)	पी.डी.डब्ल्यू.291, एच.डी.4672, डब्ल्यू.एच.896
तांबा (~5.5 पी.पी.एम.)	एन.आई.डी.डब्ल्यू.295, एच.डी.4672
मैंग्नीज (~35 पी.पी.एम.)	एम.ए.सी.एस.1967, ए.के.डी.डब्ल्यू.2997

पोषक तत्व

कठिया गेहूँ में केटालाइटिक तत्व, खनीज लवण– कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटाशियम, सल्फर, क्लोरीन, आर्सेनिक, सिलीकॉन, मैंग्नीज, जिंक, आयोडीन, कॉपर, विटामिन बी, ई आदि विद्यमान होते हैं। इस वजह से इसे खाद्य संस्कृति का आधार माना जाता है।

कठिया गेहूँ के प्रसंस्कृत उत्पाद

गेहूँ प्रसंस्करण द्वारा आटा, दलिया, सूजी, खुसखुस आदि उत्पाद तैयार किये जाते हैं। साथ ही इससे रोटी, पराँठा, पूड़ी, मठरी, अंकुरित गेहूँ ब्रेड, बिस्किट, कुकीज, पास्ता, नूड्ल्स, मफिन्स, केक, आदि खाने की वस्तुं घरेलू व व्यवसायिक स्तर पर तैयार किये जाते है। कठिया गेंहू को विभिन्न रूपों में खाया जा सकता है, मगर सब्जी सिर्फ दक्षिण राजस्थान में ही बनाई जाती है।

चक्की की सब्जी
एक कटोरी सब्जी के लिए आवश्यक सामग्री
चक्की तैयार करने के लिए

कठिया गेहूँ के आटे को परात में लेकर पानी से गुंथे। आटे को अच्छे से गूंथने के पश्चात् 2 घण्टे के लिए गीले कपडे

सामग्री	मात्रा
कठिया गेहूँ का आटा	2 कटोरी
घी/तेल	तलने व ग्रेवी तैयार करने के लिए आवश्यकतानुसार
राई	1/2 चाय का चम्मच
जीरा	चुटकी भर
हींग	चुटकी भर
प्याज	1 मध्यम
लहसुन	3 कली
दही	1/4 कटोरी
लाल मिर्च	1 चाय का चम्मच
हल्दी	1/2 चाय का चम्मच
धनियाँ	1/2 चाय का चम्मच
नमक	स्वादानुसार

से ढक्कर आराम दें। दो घण्टे के बाद आटे में थोड़ा लचिलापन पैदा हो जाता व फूल जाता हैं। इस गुंथे हुए आटे को एक छलनी में डाले व नल के पानी से धोना शुरू करें। धोते समय आटे को हाथ से रगड़े व रबड़ की तरह खींच कर बढाएं। करीब 15 मिनिट तक पानी में धोने के बाद आटे में उपस्थित ग्लूटीन प्रोटीन रबड़ की तरह फेल जाता है, अब इस फैले हुए आटे की छोटी–छोटी गोलियां बना ले या चैकोर चक्की के आकार में काट ले।

अब एक कढ़ाई में तलने के लिए घी या तेल डालें। घी गर्म होने पर चक्की के टुकड़ों को धीमी आंच पर गुलाबी होने तक तले। तलने के बाद चक्की स्पंज की तरह हो जाएगी, इन्हे एक प्लेट में अलग रख लें।

ग्रेवी बनाने के लिए

एक कढ़ाई में दो चम्मच घी ड़ाले। गर्म होने पर राई, जीरा व हींग डालें। राई तड़कने के बाद प्याज व लहसुन का पेस्ट भुने। एक कटोरी में दही, नमक, लाल मिर्च पाउडर, हल्दी व धनिया आदि डालकर कढ़ाई में छौकें। उपरोक्त ग्रेवी को 5 मिनट तक आंच पर अच्छी तरह पकने दें। मसाले में जाली पड़ने व लाल रंग होने के बाद चक्की के तले हुए टुकडों को इसमें मिलाये व आधी कटोरी पानी डालकर अच्छे से पकने दें। थोड़ी ही देर में चक्की के टुकडे मसाले को सोख लेगी व ग्रेवी गाढ़ी हो जायेगी। अब यह सब्जी हरे धनिये व क्रीम से सजाकर परोसने को तैयार है। इस सब्जी को रोटी व पराठे के साथ खाई जा सकती है।

पशुधन संरक्षण : नई प्रौद्योगिकियाँ

हिमानी शर्मा, अविनाश सिंह, सोनिका अहलावत एवं रेखा शर्मा
राष्ट्रीय पशु आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, करनाल

परिचय

नस्लों का विकास आनुवंशिक परिवर्तन की एक गतिशील प्रक्रिया है जो कि प्राकृतिक शर्तों तथा मनुष्यों द्वारा किए गए चयन पर निर्भर करती है। यदि क्रमागत उन्नति के विषय में चर्चा की जाए तो यह पारिस्थितिकी तंत्र तथा मनुष्यों के पशुधन चयन का परिणाम है जिसके फलस्वरूप समय के साथ–साथ पशुधन विविधता में बढ़ोत्तरी हुई है। परन्तु पिछले कुछ दशकों में पशुधन आनुवंशिकी विविधता में तेजी से गिरावट दर्ज की गई है जिसका मुख्य कारण नस्लों की मांग में बदलाव तथा खेतों में उपयोग होने वाली नस्लें हैं। केवल एक ही जाति का विलुप्त हो जाना वैश्विक पारिस्थितिक तंत्र को प्रभावित कर सकता है इसलिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय पशुधन आनुवंशिकता के संरक्षण के लिए कार्यरत है। तेजी से कम हो रही जैव विविधता, मुख्य रूप से पशु जैव विविधता पारिस्थितिक तंत्र पर प्रभावशाली दबाव डालती है जैसे कि पारिस्थितिक तंत्र का विनाश, प्रदूषण तथा पर्यावरण ह्रास इत्यादि। ऐसी समस्याएं जीव वैज्ञानिकों को पशुधन संरक्षण के लिए रणनीतियाँ बनाने तथा जैव विविधता को बरकरार रखने के लिए प्रेरित करती हैं। संरक्षण के अन्तर्गत केवल वही नस्लें नहीं आती जो कि वर्तमान में प्रयोग की जा रही हैं अपितु हर एक प्रजाति की देखभाल, निरूपण तथा उपयोग इसमें सम्मिलित हैं ।

किसको संरक्षित किया जाए?

पशुधन संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत सर्वप्रथम महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि संरक्षण किसको प्रदान करें। आणविक स्तर पर देखें तो एक प्रजाति की आनुवंशिक विविधता, उसकी अलीलिक विविधता (जोकि डी.एन.ए. के अनुक्रम में विभिन्नता पर निर्भर है) का प्रतिबिंब है। लगभग 25000 जींस (कार्यात्मक डी.एन.ए. क्षेत्र) एक पशु के विकास तथा प्रदर्शन को निर्धारित करते हैं। धारणात्मक रूप से, संरक्षण की बुनियादी इकाई ''अलील'' है। अतः संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत ऐसा लक्ष्य निर्धारित होना चाहिए जोकि वर्तमान अलीलिक प्रधानता तथा नए उत्परिवर्ती अलीलों के संचय की ओर ध्यान केन्द्रित करें चूंकि उत्परिवर्ती अलील, पशुधन की क्रमागत उन्नति एवं सुधार के लिए ईंधन का कार्य करते हैं।

सभी पशु प्रजातियों को संरक्षण दे पाना आर्थिक रूप से संभव नहीं हैं अतः यह तय किया जाना चाहिए कि वास्तविक मूल्यों के आधार पर कौन सी नस्लें संरक्षण के योग्य हैं। सबसे पहला कार्य पशुओं का निरूपण जो कि जूटेकनिकल स्तर पर तथा जन्सांस्थिकी स्तर पर किया जाता है। पशुधन संरक्षण के प्ररुपी निरूपण की प्रक्रिया में विभिन्न नस्लों की पहचान की जाती है तथा उनकी बाहरी एवं उत्पादक विशेषताओं का वर्णन किया जाता है। इसके साथ–साथ आनुवंशिक रूप से भी पशुओं का निरूपण किया जाता है। विभिन्न प्रयोगों के विश्लेषण से हजारों प्रकार की आनुवंशिक बहुरूपता का एक साथ पता लगाया जा सकता है। इंटरनेट पर तेजी से बढ़ रही जीनोमिक जानकारी वास्तव में संकेत दे सकती है कि कौन से जीनस पर संरक्षण के लिए ध्यान केन्द्रित करते हैं।

संरक्षण के उद्देश्य

सामान्य रूप से, पशुधन आनुवंशिक संसाधन संरक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य हैं;–

- घरेलु पशु विविधता के सामाजिक तथा सांस्कृतिक पहलू हैं। यदि एक नस्ल विलुप्त हो जाए तो उसका अभिप्राय होगा एक संस्कृतिक पहचान का विलुप्त हो जाना तथा उसके साथ–साथ एक सदी की मानवीय विरासत विलुप्त हो जाना।
- पशुधन विविधता उत्पादन प्रणाली की दृष्टि से भी पर्यावरण का एक अभिन्न अंग है। विविधता के विलुप्त होने से अस्थिरता में वृद्धि होगी तथा उत्पादन प्रणाली में बदलाव की योग्यता कम होगी। अनुकूलित नस्लों का रख–रखाव तथा विकास खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए महत्त्वपूर्ण है।
- कृषि पारिस्थितिक तंत्र, बाजार की मांग, रोगों से निदान आदि इन सभी तथ्यों के संयोग से पशुधन की जैव विविधता को आर्थिक क्षमता के आधार पर संरक्षित करना अति आवश्यक है ।

- अनुसंधान तथा प्रशिक्षण के लिए भी संरक्षण जरुरी है। इसमें बुनियादी जैविक अनुसंधान, आनुवंशिक प्रयोग तथा पोषण, प्रजनन, पर्यावरण बदलाव में शोध निहित है।

वर्गीकरण

संरक्षण का विशिष्ट उद्देश्य संरक्षण की रणनीति को प्रभावित करता है। संरक्षण की रणनीतियों को दो प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है।

- इन–सीटू संरक्षण
- एक्स–सीटू सरक्षण (क्रायो–संरक्षण)

एक्स–सीटू संरक्षण को आगे एक्स इन–सीटू इन विवो तथा एक्स–सीटू इन विटरो दो भागों में बांटा जाता है ।

इन–सीटू संरक्षण

जैविक विविधता सम्मलेन के अनुसार इन–सीटू संरक्षण ऐसी परिस्थितियों को सुनिश्चित करना है जहाँ आनुवंशिक संसाधनों का आवास स्थान है तथा घरेलू प्रजातियों के संदर्भ में ऐसा परिवेश जहाँ उनके विशेष गुण विकसित हुए हों। एक खेत में एक स्थानीय नस्ल का एक अधिक लाभकारी नस्ल के साथ होना यह दर्शाता है कि उस किसान का स्थानीय नस्ल के साथ एक सांस्कृतिक लगाव है जिसकी कभी उसके माता–पिता द्वारा पाला गया होगा।

चित्र 1: भारतीय बिजोनः परम्बिकुलम (केरल) वन्य जीवन अभयारण्य इन सीटू संरक्षण (सौजन्यः wiki/Parambikulam_Wildlife_Sanctuary)

जैविक विविधता के संरक्षण में आवासीय संरक्षण अत्याधिक महत्वपूर्ण विषय है। आवासीय हानि की तुरंत जाँच होनी चाहिए तथा उसकी पुनःस्थापना के लिए आवश्यक कदम उठाये जाने चाहिए। रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग को कम किया जाना चाहिए क्योंकि कीटनाशक पशुधन मृत्यु का कारण बनते हैं। इन सीटू संरक्षण के अन्तर्गत राष्ट्रीय उद्यान, वन्य जीवन अभ्यारण, जीवमंडल रक्षित स्थान, समुद्री जीव संरक्षण इत्यादि सम्मिलित हैं। संरक्षित जैविक विविधता तथा उनके शोषण की जाँच अति आवश्यक है, जिसे कानूनी एवं संस्थानिक व्यवस्था के द्वारा सुधारा जा सकता है।

घरेलु पशुधन संरक्षण के अन्तर्गत, भोजन एवं कृषि पैदावार की वृद्धि हेतु पशु संख्या का सक्रीय प्रजनन निहित है, जिससे छोटी अवधि के लिए उनका बेहतर ढंग से उपयोग हो एवं लम्बी अवधि के लिए उनका संरक्षण हो सके। इसके अलावा संरक्षण संबंधित गतिविधियों में प्रदर्शन एवं लिखित रूप से प्रमाणित योजनाएँ, प्रजनन कार्यों का विकास तथा आनुवंशिक विविधता का प्रबंधन शामिल है। प्रभावशाली इन–सीटू संरक्षण रणनीतियाँ बुनियादी रूप से एक नस्ल कि स्वयं–स्थिरता पर निर्भर है।

एक्स–सीटू संरक्षण

घरेलु पशुधन विविधता के प्रसंग में, एक्स–सीटू संरक्षण का संदर्भ ऐसे संरक्षण से है जो आवासीय व्यवस्था से परे है। इस वर्ग के अन्तर्गत जीवित पशुओं का रख–रखाव एवं कार्यों संरक्षण निहित है।

1 एक्स सीटू–इन–वीवो संरक्षण

इस संरक्षण के अन्तर्गत जीवित पशुओं के संरक्षण के रूप में जननद्रव्य को कायम रखा जाता है। एक्स सीटू–इन–वीवो संरक्षण जीवित पशुओं की चिड़ियाघरों, वन्य जीवन उद्यानो, प्रयोगात्मक खेतों एवं अन्य विशिष्ट केन्द्रों में सुरक्षा करना है।

2 एक्स–सीटू इन–विट्रो संरक्षण (क्रायो संरक्षण)

क्रायो संरक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें कोशिकाओं, उत्तकों, कोशिकाओं के विभिन्न भागों, शरीर के विभिन्न अंगो, भ्रूणों एवं ऐसी कोई भी जीवित संरचना (जो कि रासायनिक क्षति के प्रति संवेदनशील हो) का अत्यधिक कम तापमान (विशिष्ट रूप से –80 डिग्री सेल्सियस ठोस कार्बन डाईऑक्साइड) में अथवा –196 डिग्री सेल्सियस तरल नाइट्रोजन में संरक्षण हों इतने कम तापमान पर कोई भी रसायनिक गतिविधि जो कि जीवित सामग्री के लिए घातक है, नष्ट हो जाती है। आनुवंशिक विविधता का संरक्षण, चाहे वो घरेलु पशुधन के संदर्भ में हो या उसके परे हो, भविष्य के लिए एक बीमे की तरह है। भावी पर्यावरण बदलाव एवं उपभोक्ताओं की पशु उत्पाद व पशु उत्पाद प्रणाली की मांग के साथ एक व्यापक आनुवंशिकता को संभालना संकटपूर्ण है। अतः एक्स–सीटू संरक्षण पशुधन आनुवंशिक संसाधन को विभिन्न प्रकार की आपदाओं से संरक्षित करने का विकल्प है तथा एक मूल्यवान तरीका है जब एक नस्ल से जुड़े हुए सामाजिक–आर्थिक, सांस्कृतिक एवं पारिस्थितिक महत्त्व खो चुके हों या उसमें किसी की दिलचस्पी न हो।

चित्र 2: क्रायो संरक्षण में उपयोग होने वाले क्रायो–कैन (सौजन्यः एन.बी.ए.जी आर वेबसाईट)

जीन बैंकों में क्रायो संरक्षित आनुवंशिक सामग्री को विभिन्न उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जा सकता है जो कि निम्नलिखित है :–

1. एक नस्ल का पुनः निर्माण करना जो कि विलुप्त हो चुकि हो अथवा उसके अत्याधिक पशुओं कि मृत्यु हो गई हो ।
2. नई नस्लों को बनाने के लिए ।
3. चयन करने वाले कार्यक्रमों को तेजी से परिवर्तन करने हेतु एवं नई दिशा के लिए एक बैक–अप की तरह ।
4. क्रायो–सहायता प्राप्त योजनाओं के अन्तर्गत इन–वीवो संरक्षित आबादी को सहायता देने हेतु ।
5. शोध कार्यों के लिए एक आनुवंशिक संसाधन के रूप में: उदाहरणतः–जीन बैंकों का प्रयोग एक विशिष्ट बिन्दुपथ के अलील (जीन कि बुनियादी इकाई) का संचय करने के लिए किया जा सकता है जो कि कृत्रिम चयन कार्यक्रम के दौरान नष्ट हो चुके हों ।

संरक्षण के तरीके

(अ) धीरे–धीरे ठण्डा करना

(आ) विट्रीफिकेशन (अर्थात काँच में रूपांतर)

(अ) धीरे–धीरे ठण्डा करना

इस तकनीक में कम सघनता वाले क्रायो– संरक्षण का उपयोग होता है जो कि रासायनिक विषाक्तता तथा परासरणी झटकों से बचाव करते हैं परन्तु कम सघनता वाले क्रायो–संरक्षण द्रव्यों की बर्फ के क्रिस्टलों को न बनने देने की योग्यता सिमित है। धीरे–धीरे ठण्डा करते हुए यह प्रयास किया जाता है कि विभिन्न कारकों एवं घटनाओं के बीच सही संतुलन बना रहे जैसे कि बर्फ क्रिस्टल का बनना, परासरणी क्षति, क्रायो–संरक्षकों के विषैलेपन का प्रभाव, अंतः कोशिकी सघनित विद्युत अपघटन, ठंडक से होने वाली क्षति, जोना एवं भ्रूण का भंग होना इत्यादि, अन्यथा जिसका परिणाम कोशिकाओं का नुकसान है। उदाहरण के तौर पर घरेलु स्तनधारी पशुओं के शुक्राणुओं का संरक्षण धीरे–धीरे क्रायो संरक्षण से किया जाता है जिसकी हिमांक दर 0.5 डिग्री से 100 डिग्री सेल्सियस मिनट है।

(आ) विट्रीफिकेशनः इसके विपरीत, विट्रीफिकेशन कि तकनीक क्रायो संरक्षकों की अधिक सघनता के उपयोग पर आधारित है जो कि बर्फ के क्रिस्टलों के गठन को रोकती है तथा ठोस कांच जैसी संरचना को निर्मित करती है। जिससे पानी ठोस रूप में बदलता है क्रिस्टलस में नहीं। विट्रीफिकेशन के लिए गाढ़ेपन को चरम सीमा तक बढाया जाता है तथा ठंडा करने कि दर को तीव्र कर दिया जाता है अथवा क्रायो संरक्षकों का उपयोग किया जाता है। तथापि अधिक संघनता के परिणाम क्षतिपूर्ण हैं इसलिए कोशिकाओं को कम से कम समय के लिए क्रायो संरक्षक के प्रभाव में लाया जाता है तथा मात्रा को भी कम रखा जाता है।

संरक्षण की पृष्ठभूमि

अब तक पशुधन आनुवंशिक संसाधन के संरक्षण का प्रथम महत्त्व इन–सीटू संरक्षण को दिया गया है जिसके बहुत से आशावादी लक्षण भी हैं परन्तु यदि वैश्विक स्तर को दर्शाया जाए तो प्रक्रियाएँ तुलनात्मक गति से बढ़ी है। तकनीकी एवं सामाजिक–आर्थिक कारकों की संख्या पर गौर किया जाए तो परिणाम आशचर्यजनक नहीं हैं। अब तक पशुधन उत्तकों एवं जननद्रव्य की क्रायो–बैकिंग राष्ट्रीय संरक्षण कार्यक्रम में एक कम इस्तेमाल होने वाली तकनीक रही है। यह पद्धति अत्याधिक महँगी है तथा इसे अपनाने के लिए दक्षता कि आवश्यकता है जो कि विकासशील राष्ट्रों में धीरे–धीरे चलन में आ रही है। पशुधन जननद्रव्य का संरक्षण नया नहीं है। 1950 के अंतिम चरण में मवेशियों का वीर्य व्यवहार्य रूप से क्रायो संरक्षित किया जा चुका है। अंतरिम रूप से क्रायो बैंकिंग तकनीकें बढ़ी है, जिसने दूसरी प्रजातियों के वीर्य एवं दूसरे उत्तकों जैसे कि भ्रूण, रक्त कोशिकाएँ, फाइब्रोब्लास्ट कोशिकाएँ एवं प्रारम्भिक जर्म कोशिकाओं इत्यादि को संरक्षित किया जा सकता है।

एक्स–सीटू अथवा क्रायो–बैंकिंग प्रक्रिया को शुरू क्यों किया जाए ?

वास्तव में केवल कुछ एक नस्लों को ही इन–सीटू संरक्षण कार्यक्रमों में सुरक्षा प्रदान की जाती है तथा अधिकतम को आनुवंशिक क्षरण की अनियमिता को झेलने के लिए छोड़ दिया जाता है। विकसित एवं विकासशील देशों में अनुभव यह दर्शाता है कि आनुवंशिक सामग्री का संरक्षण तेजी से किया जा सकता है तथा यह आनुवंशिक संसाधनों के लिए महत्वपूर्ण रिजर्व उपलब्ध करवाता है जो कि विभिन्न प्रकार से संरक्षण एवं शोध कार्यों के लिए उपयोगी है। जीन–बैंकिग को स्थापित करने वाली लागत को प्रायः एक कमी बताया जाता है। आंकलन करने पर यह पाया गया है कि लागत पूर्णतः उस स्तर पर आधारित है जो जीन–बैंक प्रबंधक निर्धारित करते हैं। यदि लम्बे समय तक संरक्षण की बात की जाए तो कुछ देशों में क्रायो बैंकिग की लागत इन–सीटू की लागत से कम आंकी गई है। वर्ष में लगने वाली अत्यधिक कम लागत क्रायो बैंकिग का एक आकर्षक विकल्प है।

उपलब्ध तकनीकें

पशुधन कि कृषि संबंधी प्रजातियों के लिए कई तकनीकें उपलब्ध है जिसमें सोमेरिक कोशिकाएँ जैसे कि रक्त कोशिकाएँ, भ्रूण तथा प्राथमिक जर्म कोशिकाएँ (पूवर्ती अंडाणु तथा शुक्राणु) इत्यादि सम्मिलित हैं, जीन बैंक अधिकारी निश्चित करते हैं कि कौन सी तकनीक किस तरह के ऊत्तक के साथ उचित एवं वहन योग्य होगी ।

दैहिक (सोमेटिक) कोशिका संरक्षण– एक बेहतर प्रस्ताव

परंपरागत रूप से, इन विट्रो संरक्षण हेतु आनुवंशिक सामग्री जैसे कि वीर्य, अंडक भ्रूण आदि का प्रयोग होता रहा है। दैहिक कोशिकाओं (जैसे कि त्वचा फाईब्रोब्लास्ट) को तुरन्त क्रायो संरक्षित किया जा सकता है। उपयुक्त दैहिक कोशिकाओं का संग्रह करना अत्यन्त सरल है। दैहिक कोशिकाओं को कृत्रिम रूप से कल्चर में प्रयोग किया जाता है जिसमें कोशिकाओं का हिमद्रवण के पश्चात् कल्चर, कोशिका केन्द्रक रिप्रोग्रामिंग, अंडकों को इकट्ठा करना, कृत्रिम रूप से अंडकों की परिपक्वता, केन्द्रक रहित अंडकों में स्थानान्तरण और प्राप्त भ्रूणों का कल्चर एवं भ्रूणों का उसी प्रजाति के प्राप्तकर्ता में स्थानान्तर इत्यादि निहित है।

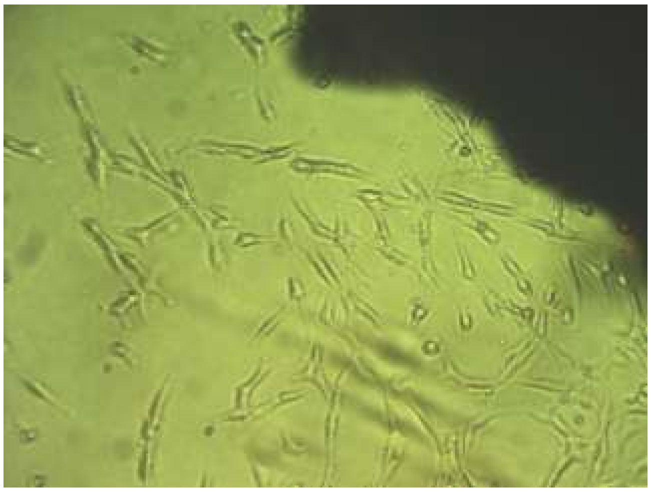

चित्र 3 : त्वचा उत्तक से निकलती हुई फाइब्रोब्लास्ट दैहिक कोशिकाएँ

दैहिक कोशिकाओं के केन्द्रक का केन्द्रक रहित अंडक में स्थानान्तरण (सोमेटिक सेल न्यूक्लियर ट्रांसफर) एवं प्रतिरूपण की तकनीक को उसी प्रजाति के पशु से अथवा जनन अक्षम पशुओं से संतान प्राप्ति के लिए विकसित किया गया है, इस तकनीक को बहुत सी प्रजातियों में

सन्तान प्राप्ति के लिए प्रयोग किया जा चुका है। प्रति रूपित भ्रूणों से जीवित सन्तानों को कई पशुधन प्रजातियों में प्राप्त किया गया है। जैसे कि भेड़, बकरी, भैंस, सुअर, घोड़े, ऊँट, खच्चर, हिरण, खरगोश, कुत्ता, बिल्ली इत्यादि। एक प्रजाति से दूसरी प्रजाति में केन्द्रक के स्थानान्तरण के लिए इंटर–स्पीशीस सेल न्यूक्लियर ट्रांस्फर एक विकल्प तकनीक है। यह तकनीक केन्द्रक एवं कोशिकाद्रव्य के पारस्परिक प्रभाव का अध्ययन करने के लिए एवं संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण के लिए लाभकारी है ।

दैहिक कोशिकाओं का क्रायो संरक्षण तुलनात्मक रूप से सरल है। इसका अभिप्राय है कि संग्रह को स्थापित करना सरल एवं सस्ता है एवं दैहिक कोशिकाओं को जीन बैंकिंग के लिए एक आकर्षित विकल्प बना सकता है, मुख्य रूप से उन देशों में जहाँ नस्लें अधिक हैं एवं संसाधन सीमित है। उदाहरण के रूप में वियतनाम ने पशुधन संरक्षण को मुख्य रूप से प्राथमिकता दी है साथ ही साथ क्लोनिंग अर्थात् प्रतिरूपण की तकनीक ने भी दैहिक कोशिकाओं को एक आकर्षित विकल्प बना दिया है। पशु प्रतिरूपण तकनीक का भावी विकसिकरण एवं दैहिक कोशिका बैंकों का संग्रह संकटग्रस्त पशुधन की संख्या को पुनः प्राप्त करने के लिए अत्यधिक आवश्यक है। हर एक पशु के ऊत्तक सैम्पल को तरल नाइट्रोजन में क्रायो संरक्षित किया जा सकता है जो कि आपातकालीन जीन बैंको की स्थापना के लिए बेहतर विकल्प है। मुख्य रूप से लुप्तप्राय प्रजातियों के लिए फाइब्रोबलास्ट बैंको की स्थापना आनुवंशिक सामग्री के संरक्षण हेतु एवं शोधकार्यो हेतु एक अति उत्कृष्ट साधन है। फाइब्रोबलास्ट कोशिकाओं को कई प्रजातियों के लिए कृत्रिम रूप से कल्चर किया गया है तथा विभिन्न तरह से उपयोग किया गया है जैसे कि प्रतिरूपण (क्लोनिंग), भ्रूणीय स्टेम कोशिकाओं से मिलने वाली परतों के लिए, जख्मों के उपचार के लिए एवं उत्तकों के पूर्णतः नवनिर्माण हेतु इत्यादि।

आनुवंशिक संसाधनों को संरक्षित करने के लिये फाइब्रोब्लास्ट बैंको को स्थापित करना एक व्यवहारिक की तरफ प्रस्तावित किया गया है जो न केवल कीमती आनुवंशिक सामग्री को संरक्षित करना है अपितु यह जीव विज्ञान शोधकार्यों के लिए भी उत्कृष्ट है। कुछ प्रजातियाँ जो कि फाइब्रोब्लास्ट कोशिका कल्चर के द्वारा क्रायो संरक्षित की गई है, निम्नलिखित हैः

डिजिटल संरक्षण

आजकल बैंकों को डेटाबेस से जोड़ा जाता है जिसमें किसी विशिष्ट पशु के ऑर्गेनिक सैम्पल से जीन अनुक्रम का संग्रह किया जाता है इस प्रकार से यह बायोबैंक जर्मप्लाज्म एवं जैव विविधता के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इन डेटाबेसिस में संरचनात्मक एवं संगठनात्मक जानकारी होनी चाहिए जिससे किसी भी प्रकार के नुकसान (चाहे आकस्मिक हो या जानबूझकर किया गया हो) से बचा जा सकता है। हर एक सैम्पल पंजीकरण किए जाते है एवं इसके अलावा सॉफ्टवेयर के बैक–अप को समय–समय पर अद्यतन किया जाता है। हर एक सैम्पल कि लेबलिंग, पंजीकरण तथा भौतिक स्थान, इसके अतिरिक्त सैम्पल की पहचान के लिए डाटा.मात्र एवं संसाधन के प्रकार इत्यादि

तालिका 1. : सोमेटिक कोशिका (फाइब्रोबलास्ट) संरक्षण

प्रजातियाँ	देश
घोड़ा	यू के एवं यू एस ए , 2008 एवं 2014
लक्जी गाय,जिनिंग काली भूरी बकरी, योर्कशायर सुअर, सिनीह घोड़ा, वैनचांग मुर्गा, जिओशेन मुर्गा	चीन, 2008,2009,2013 एवं 2014
लाबरिआ लिंक्स (बिल्ली)	स्पेन 2014
भेड़	यू एस ए 2014
चूहे	एम्सटर्डम, नीदरलैंड
दलदल भैंस	थाईलैंड, 2014
गिन्नी सूअर	इरान, 2014
परजेव लस्की घोड़ा	अर्जन्टीना, 2012

तालिका 2: उत्तक एवं जर्मप्लाज्म बैंक

बायो बैंक	वेबसाईट
लुप्तप्राय खेत में उपयोग होने वाली नस्लों के लिए ''आस्ट्रेलियन जीन बैंक ''	www.inaurnbarg&gumpenstcin.at
बनकपोर्तगुएस एनिमल जर्मप्लाज्म (बी पी जी)	http://horta.ocatch.com/bpga/bpga.htrnl
आनुवंशिक संसाधन का केंद्र, नीदरलैंड	www.wageningenur.nl
क्रियोनेट–आई टी नेटवर्क– इटली	www.genrescryonet.unimi.it
कोरियन वन्य जीवन–आनुवंशिक संसाधन संरक्षण बैंक	www.cgrb.org/indeÛ&e.htm
राष्ट्रीय क्रायो बैंक–फ्रांस	www.cryoborque.org
यूरोपीय क्षेत्रीय फोकल प्वाइंट फॉर एनीमल जेनेटिक रिसोरसिज (इ आर ई पी)	www.rfp&europe.org
एफ ए बी आई एस नेट डाटाबेस (17 साथियों के सहयोग को)	http://efabis.tzv.fal.de
इटलियन नेटवर्क ऑफ जेनेटिक रिसोर्सेज इटली	www.biogenetices.cnr.it
नोर्डजैन फार्म एनीमल–नार्वे	www.nordgem.org
वियाजेन– टैक्सास	www.viagan.com
विकिंग जेनेटिक्स–स्वीडन, डेनमार्क, फिनलैंड	www.vikinggenetics.com

इस सब जानकारियों को एक बार–कोड से लिंक कर दिया जाता है, बारकोड रीडर प्रणाली सैम्पल पर नजर रखती है। इस प्रकार पशुधन संरक्षण के लिए ''डाटा संरक्षण'' एक महत्वपूर्ण मुद्दे की तरह उभर रहा है ताकि विभिन्न पशु प्रजातियों कि उचित सुरक्षा उनकी उत्तरजीविता को भावी पीढ़ी के लिए सुनिश्चित किया जा सके। कुछ बायो बैंको को उदाहरण के तौर पर निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष

इन–वीवो एवं इन–विट्रो तरीके एक दूसरे से पूर्णतः भिन्न हैं। जीवित पशुओं को संरक्षण प्रदान करने से नस्लों की क्रमागत उन्नति, पर्यावरण के साथ–साथ होती है इसके विपरीत इन विट्रो तरीके एक महत्वपूर्ण रणनीति उपलब्ध करवाते हैं जिसके द्वारा वर्तमान आनुवंशिक पशुधन स्थिति को संरक्षित किया जाता है एवं साथ ही एक बैक–अप रखा जाता है। आपातकालीन स्थितियों में, किसी रोग प्रकोप के दौरान एवं युद्ध के दौरान ये बैक–अप आखिरी विकल्प साबित हो सकते हैं। क्रायो संरक्षण का अतीत फोकस प्रजनन गतिविधियों के लिए समर्थन मात्र था जो कि अब मुख्य पशुधन प्रजातियों को संरक्षित करने का एक निश्चित उपाय बन चुका है। फिर भी, यह अति आवश्यक है कि मानक प्रक्रियाओं को सुधारा जाए। कसी भी उत्तक को जमा देना एक आकर्षक तरीका है, चूंकि सैम्पल को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। सामान्य तौर पर, एक नस्ल को सर्जित करने में बहुत समय लग जाता है। फिर भी, यह एक वैश्विक जिम्मेदारी है कि मूल्यवान संसाधनों को संरक्षित किया जाए यह एक ऐसी जिम्मेदारी है जो खाद्य सुरक्षा एवं कृषि को सुनिश्चित करती है ।

मधुमक्खी पालन–लघु एवं सीमांत किसानों के रोजगार का साधन

अविनाश सिंह, मधु सूदन टांटिया, रेखा शर्मा एवं सोनिका अहलावत

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय पशु आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, करनाल

भारत में शहद एवं मधुमक्खी पालन का पुराना इतिहास रहा है। शहद पहाड़ की गुफाओं तथा वनों में निवास करने वाले प्राचीन लोगों द्वारा चखा गया प्रथम मीठा भोजन था। भारत प्रागैतिहासिक मानव द्वारा कंदराओं में चित्रकला में रूप में मधुमक्खी पालन का प्राचीनतम अभिलेख मिलता है। भारत में मधुमक्खी पालन मुख्यतः वन आधारित होता है। अनेकों प्राकृतिक वनस्पति प्रजातियाँ शहद हेतु नेक्टर एवं पॉलेन प्रदान करती हैं। अतः शहद उत्पादन हेतु कच्चा माल प्रकृति से मुफ्त में उपलब्ध हो जाता है। मधुमक्खी के छत्ते के लिए न तो अतिरिक्त भूमि लगती है और न ही किसी उपकरण हेतु कृषि अथवा पशुपालन से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है। अतः कृषि से जुड़े युवा या वे लोग जो कोई कम लागत में व्यवसाय करने की इच्छा रखते हैं, उनके लिए मधुमक्खी पालन का स्वरोजगार फायदेमंद साबित हो सकता है। मधुमक्खी पालन एक लघु व्यवसाय है, जो ग्रामीण क्षेत्रों के विकास का पर्याय बन सकता है। फिलहाल शहद उत्पादन में भारत विश्व में पांचवे स्थान पर है।

भारत में अधिकांश किसान खेती योग्य भूमि कम होने के कारण अधिकतर लघु एवं सीमान्त किसानों की श्रेणी में आते हैं। ये लघु एवं सीमांत किसान अपने जीवन यापन के लिए केवल खेती पर निर्भर नहीं रह सकते। उनके लिए यह आवश्यक हो जाता हैं कि खेती के साथ–साथ खेती से जुड़े हुए अन्य व्यवसायों को अपनाएं। मौनपालन एक ऐसा ही व्यवसाय है, जिसको कम धन, कम, श्रम तथा कम स्थान पर आसानी से कोई भी किसान एवं बेरोजगार युवा आसानी से अपना सकता है। मौनपालन हेतु सरसों, बरसीम, सूरजमुखी, तिल, अरहर, मक्का, साग–सब्जी फसलें, फूलों की खेती व बागवानी के आलावा नीम, जामुन, यूकेलिप्टस, साल, सागौन आदि वृक्ष उपयुक्त हैं। मौनपालन व्यवसाय शुरू करने का उचित समय अक्तूबर–नवम्बर तथा फरवरी–मार्च के महीने हैं ।

मधुमक्खी पालन का इतिहास

सर्वप्रथम सन् 1778 में स्विटजरलैंड के फ्रांसिस ह्युबर नामक व्यक्ति ने पहले पहल लकड़ी की पेटी (मौन गृह) में मधुमक्खी पालने का प्रयास किया। इसके अन्दर उसने लकड़ी के फ्रेम बनाये जो किताब के पन्नो की तरह एक–दुसरे से जुड़े थे। सन् 1815 ई. में लानाड्रप नामक अमेरिकन वैज्ञानिक ने कृत्रिम छत्तों का अविष्कार किया था। सन् 1865 में आस्ट्रिया के मेजर डी हुरस्का ने मधु निष्कासन यंत्र बनाया। अब इस मशीन में शहद से भरे फ्रेम डालकर उनकी शहद निकली जाने लगी। इससे फ्रेम में लगे छत्ते एकदम सुरक्षित रहते हैं। जिन्हें पुनः मौन पेटी में रख दिया जाता है। सन् 1882 में कोलिन ने रानी अवरोधक जेली का निर्माण किया जिससे बग छूट और घर छूट की समस्या का समाधान हो गया, क्योंकि इसके पूर्व मधुमक्खियाँ, रानी मधुमक्खी सहित भागने में सफल हो जाती थीं। लेकिन अब रानी का भागना संभव नहीं था।

भारत में मधुमक्खी पालन की शुरुआत ट्रावनकोर में 1917 ई. में एवं कर्नाटक में 1925 ई. में हुई थी। कुटीर उद्योगों के रूप में प्रांतीय स्तरों पर उसका विस्तार कृषि पर रायल कमीशन की सिफारिशों के बाद 1930 ई. में हो पाया था। वर्ष 1953 में अखिल भारतीय कहदी व ग्रामोद्योग बोर्ड की स्थापना हुई व मधुमक्खी पालन को तकनीकी व्यवसाय का स्वरूप देने के लिए बोर्ड ने पूना में केन्द्रीय मौनपालन अनुसंधान केंद्र की स्थापन की। कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ने आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत वर्ष 1994–95 में कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी के लिए मधुमक्खी पालन का विकास नामक योजना शुरू की। इस योजना के कई घटक थे, जिन्होंने मधुमक्खी पालन के क्रमिक विकास में बहुत योगदान दिया, जैसे कि अनुसंधान, उत्पादन, मधुमक्खी कालोनियों का वितरण, प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा मधुमक्खी पालन के लिए लोगों को जागरूक करना आदि।

मधुमक्खी पालन के लाभ

1. मौन कालोनियों से 40–60 कि.ग्रा. प्रति कालोनी प्रतिवर्ष की दर से शुद्ध एवं गुणकारी शहद प्राप्त होती है।
2. परंपरागित (फ्रांस पॉलिनेटेड) फसलों में परागण क्रिया द्वारा 15–30 प्रतिशत तक उपज वृद्धि होती है।
3. मौन कालोनियों के पुराने छत्तों से शुद्ध मोगा की प्राप्ति होती है।

4. फसलों के अच्छे गुणों वाले बीजों की प्राप्ति होती है।
5. मौनवंशो को विभाजित करके नई कालोनियों की प्राप्ति की जा सकती है ।
6. मौनपालन सम्बन्धी उपकरण बनाकर रोजगार के अवसर सृजित किए जा सकते हैं।
7. पुष्प रस एवं पराग का सदुपयोग होता है तथा आय व स्वरोजगार का सृजन होता है।
8. इससे शुद्ध मधु, रायल जेली, मोम, पराग व मोनी गोंद की प्राप्ति होती है।

मधुमक्खी पालन व्यवसाय हेतु उपयुक्त प्रजातियाँ

एपिस मेलीफेरा

इसे इटेलियन मधुमक्खी के नाम से जाना जाता है। अपने शांत स्वभाव, अधिक उत्पादन क्षमता, वंश वृद्धि क्षमता, रोगों व शत्रुओं से प्रतिरोध करने के गुणों के कारण यह पालन के लिए सर्वोत्तम प्रजाति मानी जाती है। मधुमक्खी के इस वंश से वर्ष भर में औसतन 50–60 कि.ग्रा. शहद प्राप्त होता है ।

एपिस सिराना इन्डिका

यह भारतीय मूल की प्रजाति है। इस प्रजाति कि मधुमक्खियों को प्रकाश नापसंद होता है तथा ये सेक ब्रुड नामक रोग के प्रति संवेदनशील होती है। इनका वार्षिक उत्पादन 10–15 कि. ग्रा. प्रति कालोनी है ।

एपिस डोरसेटा

यह पहाड़ी मधुमक्खी के नाम से जानी जाती है। यह बड़े वृक्षों, पुरानी इमारतों आदि पर छत्ता निर्मित करती हैं। अपने भयानक स्वभाव व तेज डंक के कारण इसका पालन मुश्किल होता है। इससे वर्ष भर में 30–40 कि. ग्रा. शहद का उत्पादन होता है।

एपिस फ्लोरिया

यह सबसे छोटे आकर की मधुमक्खी है। यह झाड़ियों, छत के कोनों आदि में छत्ता बनती है तथा वर्ष भर में केवल 200 ग्रा. से 2 कि.ग्रा. तक शहद एकत्रित कर पाती हैं।

मधुमक्खी कालोनी खरीदते समय ध्यान देने योग्य बातें

- मौन गृह मोती एवं गंध रहित लकड़ी के होने चाहिए।
- मौन गृह में एक स्वस्थ्य रानी, कुछ नर तथा पर्याप्त मात्रा में कमेरी होनी चाहिए।
- मौन गृह में पर्याप्त मात्रा में मकरन्द व पराग होनी चाहिए।
- मौन गृह में 5–6 फ्रेम मधुमक्खी, अंडा, लाखा व प्यूपा से भरी होनी चाहिए।

मधुमक्खी कालोनी

इटेलियन मधुमक्खी पालन में प्रयुक्त मौन कालोनी में लगभग 40–80 हजार तक मधुमक्खियाँ होती हैं, जिसमें एक रानी मक्खी, कुछ नर सौ नर व शेष श्रमिक मधुमक्खियाँ होती हैं।

रानी मक्खी

यह लम्बे उदर व सुनहरे रंग की मधुमक्खी होती है। जिसे आसानी से पहचाना जा सकता है। इसका जीवन काल लगभग तीन वर्ष का होता है। सम्पूर्ण मौन परिवार में एक ही रानी होती है जो अंडे देने का कार्य करती है, जिनकी संख्या 2500 से 3000 प्रतिदिन होती है। यह दो प्रकार के अंडे देती है, गर्भित व अगर्भित अंडे। इसके गर्भित अंड़े से मादा व अगर्भित अंडे से नर मधुमक्खी विकसित होती है।

मौन पालन में काम आने वाले उपकरण

मौन गृह	मौन गृह वर्तनी	स्टैण्ड
मुख रक्षक जाली	दस्ताने	छत्ताधार
धवाकर	गोठनी	भोजन पात्र
रानी अवरोधक गेट	रानी अवरोधक जाली	नर मौन रोक पिंजरा
रानी परिचालक पिंजरा	मौन वाहक पिंजरा	ब्रुश
बक छुट पकड़ने की थैली	मधु निष्कासन यंत्र	

नर मधुमक्खी या ड्रोंस

नर मधुमक्खी गोल, काले उदर युक्त व डंक रहित होती है। यह प्रजनन कार्य संपन्न करती है। रानी मधुमक्खी से प्रजननोपरांत नर मधु मक्खी मर जाती है। इसके तीन दिन पश्चात रानी अंडे देने का कार्य आरंभ कर देती है ।

श्रमिक या मादा मधुमक्खी

पूर्णताः विकसित डंक वाली श्रमिक मक्खी मौन गृह के समस्त कार्य संचालित करती है। इनका जीवनकाल 40–45 दिन का होता है। श्रमिक मक्खीकोष से पैदा होने के तीसरे दिन कार्य करना प्रारंभ कर देती है। मोम उत्पादित करना, रॉयल जेली श्रवित करना, छत्ता बनाना, चट्टे की सफाई करना, वातायन करना, भोजन के स्त्रोत की खोज करना, पुष्प–रस को मधु में परिवर्तित कर संचित करना, प्रवेश द्वार पर चौकीदारी करना इत्यादि कार्य मादा मधुमक्खी द्वारा किये जाते हैं।

मौन कालोनियों की देखभाल

गर्मी के मौसम में मौन कालोनियों की देखभाल के लिए मौन बक्सों को छायादार स्थान में रखन चाहिए। मौनालय के पास स्वच्छ पानी का प्रबन्ध व लू से बचाव करना आवश्यक है। बरसात के मौसम में मौन कालोनियों को ऊँचे तथा खुले स्थान में रखना चहिये तथा आस–पास की घास इत्यादि साफ करते रहें। भोजन न होने की स्थिति पर 50 प्रतिशत चीनी की चाशनी बनाकर रख दें। शरद काल में मक्खियों को सर्दी से बचाएं। कमजोर कालोनियों को मिला दें तथा स्टार्टर का प्रयोग करें ।

मौन पालन में व्याधियाँ

मोमी पतंगा

मधुमक्खियों के शत्रुओं में मोमी पतंगा प्रमुख है। अतः बर्रो के नियंत्रण हेतु ट्रैप लगाना चाहिए। मौन बक्सों के अन्दर खली मोम वाली फ्रेमों को निकाल कर अलग धूप दिखाते रहने से मोमी पतंगे से बचा जा सकता है।

माइट

यह मधुमक्खी का परजीवी कीट है। इससे बचाव के लिए संक्रमण की स्थिति में 10–15 दिन के अन्तराल पर सल्फर चूर्ण का छिडकाव चौखट व प्रवेश द्वार पर करना चाहिए ।

सेक ब्रूड वाइरस

यह एक वाइरस जनित रोग है। इटेलियन मधुमक्खी में इस व्याधि के लिए प्रतिरोधक क्षमता अन्य से अधिक होती है।

भग छूट

मधुमक्खियों को अपने आवास से बड़ा लगाव होता है परन्तु कई बार इनके सम्मुख ऐसी समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं कि इन्हें अपना आवास छोड़ना पड़ता है, इस स्थिति में भग छूट थैले में पकड़कर पुनः मौनगृह में स्थापित कर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त चीटियों से बचाव के लिए मौन बॉक्स स्टैंड के निचे कटोरियों में पानी भरकर रख सकते हैं। कुछ चीटियों जैसे किंग क्रो इत्यादि से मौन बाक्सों को बचाना आवश्यक है।

मौन पालन में ध्यान रखने वाली सावधानियाँ

- स्वार्मिंग होने से पहले ही वंश विभाजन कर देना चाहिए ।
- गृह त्याग से बचने के लिए मौन कालोनियों में बीमारी, शत्रु तथा पर्याप्त भोजन आदि का निरीक्षण करते रहना चाहिए।
- अंडे देने वाली मजदूर मक्खियों से निजात पाने के लिए कालोनी में समय पर रानी उपलब्ध करायें।
- नरो की अधिकता होने पर रानी बदल दें।
- मौन कालोनियों में अचानक रानी गायब होने पर नये रानी कोष्ठक देखें न होने पर 1–2 दिन का ताजा अंडा उपलब्ध कराएँ।
- मौन कालोनियों का 15 दिन में एक बार निरिक्षण आवश्य करें तथा रानी व रानी की अंडा देने की गति तथा मकरन्द व पराग की स्थिति जाने ।
- मौन कालोनियों को ज्यादा सर्दी तथा तेज गर्मी में न खोलें।
- मधुकाल सीजन में 15–20 दिन में शहद का निष्कासन करते रहें।

शहद में मिलावट का परीक्षण

ज्यादा मुनाफा कमाने के लालच में कुछ व्यापारी शुद्ध शहद में चीनी अथवा गुड़ का घोल या दोनों तथा पानी की मिलावट कर देते हैं। जिसकी पहचान विभिन्न भौतिक व रसायनिक परीक्षणों के माध्यम से कर सकते हैं ।

एनेलिन क्लोराइड परिक्षण

सर्वप्रथम 3 भाग एनेलिन व 1 भाग सांद्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल को मिलाकर एनेलिन क्लोराइड का निर्माण करते हैं। एक परखनली में कुछ मात्रा शहद की लेकर उसमें 5–7 बूंदे एनेलिन क्लोराइड की मिलाते हैं व इसे अच्छी तरह से मिश्रित करते हैं यदि गहरा लाल रंग उत्पन्न होता है तो शहद में चीनी की मिलावट की पुष्टि करता है।

ईथर परीक्षण

एक परखनली में 50 मि.ली. शहद तथा 50 मि.ली. जल लेकर इसे मिश्रित करते हैं, फिर इसमें 50 मि.ली. ईथर परत को अन्य परखनली में स्थानांतरित करते हैं, जो कि कुछ समय में वाष्पित हो जाती है। अब मिश्रण में कुछ बूंदे रिसासिनाल की मिलाते हैं। यदि लाल रंग प्रदर्शित होता है तो यह शहद में मिलावट की पुष्टि करता है। शहद में चीनी या गुड़ के मिश्रण का परीक्षण सामान्य परीक्षणों के द्वारा भी किया जा सकता है। शहद की एक बूंद को एक गिलास पानी में डालें यदि बूंद फैल जाए तो शहद में चीनी अथवा गुड़ का घोल है और यदि न फैले तो शहद शुद्ध है। एक रुई के टुकड़े को शहद में डुबोकर जलाने पर यदि वह जल जाता है तो यह शुद्ध शहद की पहचान है और यदि वह नहीं जलता या जलने पर छिट छिटाहट की आवाज करता है तो यह मिलावटी शहद की पहचान है। शहद में पानी की मिलावट की जाँच के लिए शहद की कुछ बूंदें ब्लॉटिंग पेपर में डालने पर पेपर गीला हो जाता है या शहद को सोख लेता है तो यह मिलावटी शहद की पहचान है और यदि वह शहद को नहीं सोखता तो यह शुद्ध शहद की पहचान है।

विपरीत परिस्थितियों में भी हर्षाता किसान

संतराम यादव

केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद

भारत कृषि प्रधान देश है, परंतु यहाँ कृषि की दशा संतोषजनक नहीं है। भारतीय किसान का जीवन सीधा–सादा होता है। वह सवेरे उठकर पशुओं को खाना देता है और खेतों में चला जाता है। अपने खेतों में वह डटकर काम करता है। वह खेतों में ही रोटी, छाछ, सलाद आदि का नाश्ता करता है। खेतों में उपजी फलियाँ उसे बहुत पसंद हैं। दूध व दही से युक्त भोजन उसे सर्वाधिक प्रिय है। ताजी व हरी सब्जियाँ उसके तन और मन को संतुष्ट करती हैं। जब भी उसे भूख लगती है तो वह रोटी, दाल, चावल, साग में से जो भी मिल जाए उसे ही बड़े चाव से खा लेता है। धोती और कुर्ता पायजामा, लुंगी, बनियान आदि पहने, पाँवों में चप्पल धारण किए, सिर पर पगड़ी बांधे और हाथों में डंडा लिए वह हरित क्रांति का अग्रदूत नजर आता है। उसका सादा जीवन ही उसके पहनावे से स्पष्ट झलकता है।

किसानों का मुख्य पेशा कृषि है। पशुपालन उनका सहायक पेशा है। ये पशु कृषि कार्य में किसानों का सहयोग करते हैं। जहाँ बैल उनकी हल और गाड़ी खींचते हैं, वहीं गाय उनके लिए दूध, गोबर और बछड़े देती है। वे भैंस, बकरी आदि भी पालते हैं जिनसे उन्हें अतिरिक्त आमदनी होती है। इन पालतू पशुओं को पालने में उन्हें विशेष कठिनाई नहीं होती क्योंकि ये कृषि उत्पादों यथा पुआल, भूसा, खली, अनाज आदि खाकर ही जीवित रह लेते हैं। पशुओं के लिए घास खेतों और बागानों से उपलब्ध हो जाती है। हमें अपने किसान से बहुत कुछ सीखने की जरूरत है। वह हमें सिखाता है कि मनुष्य को किसी से कुछ लेने की नहीं बल्कि देने की आदत डालनी चाहिए। सेवा करना मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार है। विपत्तियों से घबराएं नहीं। इससे प्रसन्नता बनी रहेगी और वह प्रसन्नता समस्याओं के समाधान की राह दिखाएगी। किसान **माटी के समृत** होते हैं। वे मिट्टी से सोना उपजाते हैं। वे अपने श्रम से संसार का पेट भरते हैं। वे अधिक पढ़े लिखे नहीं होते परंतु उन्हें खेती की बारीकियों का ज्ञान होता है। वे मौसम के बदलते मिजाज को पहचान कर तदनुसार नीति निर्धारित करने में दक्ष होते हैं। हमें यह कहते हुए बिल्कुल संकोच नहीं करना चाहिए कि वास्तव में ही हमारे किसान प्रकृति के सहचर होते हैं।

बदलता परिवेश आज बहुत कुछ सोचने पर विवश कर रहा है। आज हालात इतने बदतर हो गए हैं कि देहाती लोग शहरी जीवन की चकाचौंध से प्रेरित, आकर्षित व प्रभावित होकर इसकी सुख सुविधाओं का लाभ उठाने हेतु शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। परिणामस्वरूप छोटे छोटे गांव वीरान होने लगे हैं। यदि समय रहते इस विकराल समस्या की ओर ध्यान नहीं दिया गया और देहाती लोगों के पलायन पर रोक नहीं लगाई गई तो वह दिन दूर नहीं जब शहर शहर न होकर कुछ ओर ही नजर आने लगेंगे। हमें प्रयास करना होगा कि गांवों में भी शहरों जैसी सुख सुविधाएं प्रदान की जाएं। रोजगार के नए–नए अवसर गांवों में ही पैदा किए जाएं जिससे कि ग्रामीण लोगों का शहरों की ओर बढ़ने का प्रतिशत कम होता नजर आए। समय का चक्र सदैव आगे की ओर बढ़ता रहता है। जो समय हमारे अनुकूल होता है, वह शीघ्र बीत जाता है परंतु जो समय हमारे प्रतिकूल होता है, वह बहुत सताता है। इसीलिए कहा जाता है कि समय बड़ा बलवान होता है। वह सदैव आगे ही चलता रहता है। वह पीछे कभी नहीं मुड़ता। समय की घड़ी को हम लाख चाहने पर भी पीछे की ओर नहीं घुमा सकते। अतः हमारे हाथ से बिता हुआ एक पल भी हमें वापस नहीं मिल सकता। इसलिए हमें सदैव यह प्रयास करना चाहिए कि हमारे हाथ में जो समय है, वह बहुत ही मूल्यवान है। इसका मूल्य जानकर हमें समय को व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। किसान के लिए यही बातें लागू होती हैं।

कहते हैं कि मनुष्य प्रकृति का नायाब तोहफा है। मानव इस धरातल का सबसे समझदार प्राणी है। प्रकृति की यह एक अनमोल रचना है। इतना सब कुछ होते हुए भी यह विडंबना ही कहलाएगी कि जिस प्रकृति ने हमें यह सब कुछ उपहार में दिया है ताकि हम इसे संजोए रख सके, वही प्राणी आज प्रकृति का सर्वाधिक दोहन करने में लगा हुआ है। अब हालात इतने बदल गए हैं कि दिन–प्रतिदिन

प्रकृति का संतुलन बिगड़ता जा रहा है। इस संपूर्ण जिम्मेदार यह मनुष्य रूपी प्राणी ही है। हालांकि समय–समय पर प्रकृति हमें अहसास कराती रहती है और हम इसका खामियाजा भी भुगतते रहते हैं परंतु फिर भी सुधरने का नाम नहीं ले रहे हैं।

इसमें कोई दो राय नहीं है कि केवल भारत ही नहीं, अपितु समुचा विश्व पर्यावरण के असंतुलन से चिंतित है। इसमें सरकारी और गैर सरकारी संस्थाएं जागरुकता लाने का प्रयास अवश्य कर रही हैं परंतु इस नेक कार्य में हम सबकी सक्रिय भागीदारी भी परमावश्यक है। आज हम सभी भारतवासी पानी की समस्या से जूझ रहे हैं। जिनके पास पैसा है वे लोग जमीन में काफी गहराई तक जाकर कूप नलिका के माध्यम से पानी खींच रहे हैं। परिणामस्वरूप भूजल का स्तर निरंतर गिरता जा रहा है। आज देश में चहूँ ओर पानी के लिए लोग तरस रहे हैं।

भारतीय जनसंख्या का बढ़ता स्वरूप विकराल रूप धारण करता जा रहा है। उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जंगलों की निरंतर कटाई आवासीय सुविधाएं के लिए की जा रही हैं। नए–नए उद्योग धंधों का पदार्पण हो रहा है। इन फैक्टरियों से निकलने वाला प्रदूषण नई–नई समस्याओं को जन्म देता रहता है। दिन–प्रतिदिन घटता वन क्षेत्र वन्य प्राणियों के लिए विकराल रूप धारण करता जा रहा है। इसलिए हमें निरंतर खबर आती रहती है कि वन्य प्राणियों का मानव आबादी में प्रवेश हो गया। हाल ही में उत्तरांचल में हनीमून मनाए गए एक नव विवाहित जोड़ा जब होटल के अपने कमरे में सो रहा था तो एक तेंदुआ उनके कमरे में खिड़कियों के शीशे तोड़कर घुस गया। चूंकि वह तेंदुआ काफी डरा हुआ था इसलिए कंबल में दुबक गए उन प्राणियों पर हमला न कर वह बाथरूम में घुस गया जिसे बाहर से बंद कर दिया गया। वन्य प्राणियों से जुड़े लोगों के लिए यह अब आम बात हो गई है। अपने भोजन की तलाश में जंगली पशु ग्रामीण आबादी में प्रवेश करने से अब हिचकते नहीं है। हमारे घटते वन क्षेत्र के कारण पशु–पक्षी और वनस्पतियां बुरी तरह प्रभावित हो रही हैं। प्रकृति का संतुलन बिगड़ता जा रहा है। सूनामी, भूकंप, वातावरण में परिवर्तन आदि के लिए केवल मनुष्य प्राणी ही जिम्मेदार है। हमारी नदियाँ सूख गई हैं। जहाँ कभी नदियाँ होती थी वहाँ मलमूत्र और कारखानों की गंदगी का बोलबाला नजर आ रहा है। इन्हीं सब से वन्यप्राणी, अन्य प्राणी व मनुष्य प्रभावित हो रहे हैं। बढ़ता जन क्षेत्र और पानी के अभाव में जड़ी बूटियों की अनेकानेक प्रजातियाँ लुप्त प्राय होती जा रही हैं। पशु–पक्षियों की विभिन्न प्रजातियाँ भी खत्म होने के कगार पर हैं। लोभी व्यापारियों, अवैध शिकारियों और अधिकाधिक धन कमाने की लालसा में मनुष्य द्वारा किए गए दुष्कर्मों से वन्य प्राणियों का जीवन खतरें में पड़ता नजर आ रहा है।

इतना सब कुछ होते हुए भी आज का इंसान सदैव दूसरों में दोष ढूंढता रहता है। वह स्वयं की कमियों को न देखकर दूसरों में कमियां तलाशता रहता है। हमें भारतीय कृषकों से बहुत कुछ सीखने की जरूरत है। अपने दोषों को सुधारने का साक्षात संदर्भ भी किसान से सीखना ही है। एक कुशल चित्रकार ने अपना एक चित्र प्रदर्शनी में रखते हुए नीचे लिख दिया कि कृपया इस चित्र में जहाँ भी गलती हो, वहाँ निशान लगा दीजिए। फिर क्या था लोगों ने उस चित्र की सूरत ही बदल दी। जब चित्रकार ने उसे देखा तो वह बहुत ही व्याकुल होकर अपने गुरूजी के पास निदान हेतु गया। गुरूजी ने सलाह दी कि आप उसी चित्र में कुछ गलतियाँ रखकर प्रदर्शनी में रखिए और उसके दोष ठीक करने का अनुरोध कीजिए। अगले दिन चित्रकार ने उस चित्र को यथावत पाया क्योंकि किसी ने भी उसमें दोष नहीं निकाला। चित्रकार के आश्चर्य का ठिकाना न था क्योंकि इस बार के चित्र में उसने जानबूझकर गलती की थी, फिर भी किसी ने उसको नहीं पकड़ा। निष्कर्ष यह निकलता है कि लोग आपके दोषों को ही जल्दी पकड़ते हैं, अच्छाइयों को नहीं अर्थात् बुराई पर चर्चा सब करते हैं, पर बुराई को दूर करना कोई नहीं चाहता। यह दुनिया स्वयं बुराईयों से परिपूर्ण है।

कृषि उत्पादन में वृद्धि पूर्व में जनवृद्धि दर से भी कम रही। निम्न स्तर पर सीमित विकास के बावजूद आज भी भारतीय कृषि परंपरावादी है। अधिकांश भारतीय किसान खेती को व्यवसाय के रूप में न अपनाकर जीविकोपार्जन हेतु अपनाते हैं। कृषि की पुरानी परंपरागत विधियों, पूंजी की कमी, भूमि सुधार की अपूर्णता, विपणन एवं वित्त संबंधी कठिनाईयों आदि के कारण भारतीय कृषि की उत्पादकता अत्यंत न्यून बनी रहती है। अब नई पीढ़ी में शिक्षा एवं कृषि

को कमाई का साधन बनाने की प्रवृति से भी कृषि एवं कृषक की आर्थिक दशा में कुछ सुधार आने लगा है। आज परिस्थिति इतनी बदल गई है कि जनसंख्या वृद्धि के कारण प्रति व्यक्ति उपलब्ध भूमि का औसत कम होता जा रहा है। इसके साथ ही साथ भूमि का असंतुलित वितरण भी कई स्थानों पर किसानों को बहुत कुछ सोचने पर विवश करता रहता है। आज की परिस्थितियों के संदर्भ में देखने से पता चलता है कि हमारी प्रति व्यक्ति खेती योग्य भूमि कम होती जा रही है। कभी–कभी कृषि की न्यून उत्पादकता का बनना किसान की चिंता को ओर बढ़ाता रहता है। अतीत में देश के अधिकांश भागों में औसत उत्पादन स्तर अधिकांश विकसित व कई विकासशील देशों (इंडोनेशिया, फिलिपींस, मेक्सिको, ब्राजील, ईसीएम के देश आदि) से भी काफी कम रहा था। हरित क्रांति और निरंतर सरकारी प्रयासों ने कृषकों को लाभप्रद स्थिति में पहुँचाया है। किसानों को उचित मूल्य दिलाने की प्रवृत्ति का यह परिणाम निकला कि अब वे भी नित नवीन इजाद की गई तकनीकी को अपनाने से हिचकते नहीं हैं। रबी की फसलावधि में सरसों एवं खरीफ में सोयाबीन व मूंगफली का बढ़ता उत्पादन सरकार द्वारा ऊँची कीमतें निर्धारित करने से ही संभव हो सका है। आज राजस्थान सरसों एवं तिल, गुजरात मूंगफली एवं मध्य प्रदेश सोयाबीन उत्पादक प्रमुख प्रदेश बन चुके हैं।

देश का किसान भाग्यवादी दृष्टिकोण अपनाए हुए है। हालांकि कृषि उत्पादन संबंधी उसे पर्याप्त अनुभव है, किंतु अनेक बार शीत लहर, पाला व कभी कभार बेमौसम के ओले और सर्दी उसकी फसल को नष्ट कर देते हैं। परिणामस्वरूप उसे अपने श्रम का उचित प्रतिफल प्राप्त नहीं हो पाता। इसलिए वह कृषि को व्यवसाय के रूप में नहीं बल्कि, जीवन–यापन की प्रणाली के रूप में अपनाता है। स्वभावतः वह वांछनीय मात्रा में उत्पादन उपलब्ध नहीं कर सकता। किसान की इसी भाग्यवादी प्रवृत्ति में परिवर्तन करने की एक रीति यह है कि उसे अधिकाधिक शिक्षित करने का प्रयत्न किया जाए। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक संकटों का सामना करने के लिए वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग करने की चेष्टा करनी चाहिए। केंद्र सरकार की फसल बीमा योजना किसानों के लिए वरदान साबित हो रही है।

भारत में पशुओं की संख्या अत्यधिक है। पशुओं के गोबर और मूत्र से तथा अन्य बेकार वस्तुओं से भी अधिकाधिक खाद प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त कंपोस्ट तथा खाद उपलब्ध हो सकती है। दुर्भाग्य से गोबर का अधिकांश भाग ईंधन के रूप में जला दिया जाता है, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य सस्ते ईंधन का अभाव है। फलतः खेतों को पर्याप्त मात्रा में खाद नहीं मिल पाती, जिससे उत्पादन की स्थिति अच्छी नहीं है। वर्तमान में कृषि के विकास में रासायनिक उर्वरकों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मृदा की सीमांत उत्पादकता अभी भी चुनौती बनी हुई है परंतु मृदा विश्लेषण के आधार पर वर्णित एन पी के और उचित पोषणों के अनुप्रयोग की आवश्यकता है। कंपोस्ट खाद घरेलू गैस, सिंचाई का उपयोगी जल, अन्य उपयोगी पदार्थ व गैस विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा प्राप्त की जाती हैं। इससे खेतों की उत्पादकता बढ़ने, भूक्षरण में कमी एवं ईंधन की आपूर्ति होने से लकड़ी व वनों पर दबाव भी घटता है।

सिंचाई के साधनों के सीमित विकास ने अवश्य किसानों के लिए रुकावटें पैदा की थी परंतु अब उसने उनसे भी निबटने के तरीके खोज लिए हैं। अधिकांशतया भारतीय कृषि मानसून पर निर्भर है, क्योंकि आज भी कुल कृषि योग्य भूमि के 41 प्रतिशत में सिंचाई होती है। देश में वृहत और मध्यम सिंचाई योजनाओं के जरिए सिंचाई की पर्याप्त संभवनाओं का सृजन किया गया है। मानसून पर इतनी अधिक निर्भरता का प्रभाव यह होता है कि देश के अधिकांश भाग की कृषि प्रकृति की दया पर निर्भर है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि जब तक सिंचाई की व्यवस्था नहीं होती, तब तक भूमि में खाद देना भी संभव नहीं है, क्योंकि खाद का यथोचित प्रयोग करने के लिये काफी जल चाहिए, अन्यथा सामान्य खेती के सूखने का भी भय बना रहता है। सिंचाई की यह कमी कम वर्षा वाले पठारी भागों एवं सारे उत्तर पश्चिमी भारत में विशेष रूप से महसूस की जाती है, क्योंकि औसतन वर्षा सौ सेंटीमीटर से भी कम एवं वर्षा की अनिश्चितता 35% से भी अधिक रहती है।

कृषि यंत्रों का उत्पादन एवं उपयोग करना किसान के लिए वरदान साबित हो रहा है। कृषि में मशीनों एवं यंत्रों के उपयोग से कृषि कार्य उचित समय पर, उचित दक्षता

तथा न्यूनतम लागत पर कर पाना संभव हो गया है। कृषि क्षेत्र में मुख्यतः ट्रैक्टर, थ्रेसर, हार्वेस्टर, पावर टिलर, पंपसेट, स्प्रेयर तथा डस्टर उपयोग में लाए जाते हैं। कृषि भूमि के बढ़ते क्षेत्र को उचित गहराई तक जोतने में ट्रैक्ट्ररों की प्रमुख भूमिका होती है। पूर्व में यह कार्य पशु की शक्ति से किए जाते थे, जिससे समय और धन व्यय होता था। ट्रैक्टर भूमि को जोतने व बोने के अतिरिक्त, माल ढोने तथा अन्य मशीनों, जैसे–थ्रेसर चलाने, कुट्टी काटने, स्प्रेयर चलाने तथा सिंचाई के लिये पंपसेट चलाने आदि में भी काम आते हैं।

भारतीय किसान की एक महत्त्वपूर्ण समस्या यह रही है कि उसे अपना माल मंडियों में बेचना पड़ता है। कभी–कभी ये मंडियां उसके खेतों से बहुत दूर होती हैं, जहाँ पहुँचने के लिए यातायात के साधन पर्याप्त नहीं हैं या इनके विक्रय की व्यवस्था ठीक नहीं है। अधिकांशतया किसान को अपने माल के उचित दाम प्राप्त करने में कठिनाई होती है। इनसे बचकर वह अपना माल गाँव के साहूकार को ही ओने–पौने दाम में बेच देता है, जो परेशानी का सबब बनता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि किसान बहुत परिश्रमी होते हैं। वे खेतों में जीतोड़ श्रम करते हैं। वे मेहनत करके अनाज, फल और सब्जियाँ उगाते हैं। लहलहाती फसलों को देखकर प्रसन्न हो उठते हैं। वे फसलों की लगातार निगरानी करते हैं। फसलों को पशुओं और चोरों से सुरक्षित रखने हेतु खेतों में मचान बनाकर सोते हैं। फसल कटाई के बाद अनाज का भूसा मवेशियों के भोजन के लिए सुरक्षित रख लिया जाता है। जरूरत भर का अनाज और सब्जी घर में रखकर शेष मंडियों में बेच देते हैं। इनसे हुई आमदनी से उनका साल भर का गुजारा होता है।

किसानों को कृषि कार्य में विभिन्न प्रकार की समस्याओं से दो चार होना पड़ता है। बढ़ती कृषि लागत से वह परेशान नजर आता है। किसानों को अच्छे बीज खरीदने पड़ते हैं जो बहुत महंगे दामों में मिलते हैं। ट्रैक्टरों या हल–बैल से खेत की जुताई भी आसान नहीं होती। खेतों में सिंचाई के लिए बिजली या पंपसेट की आवश्यकता होती है। किसानों को कृषि कार्य में अन्य मजदूरों की सेवाएं लेनी पड़ती है जिसके बदले उन्हें धन व्यय करना पड़ता है। फसल कटाई से लेकर मंडियों में पहुँचाने तक काफी खर्चा आता है। इतना सब कुछ करने के बाद यदि मंडी में फसल की उचित कीमत न मिले तो वे निराश और हताश हो जाते हैं। उन्हें कर्ज लेकर अगली फसल बोने की तैयारी करनी पड़ती है। भारतीय किसानों को प्रकृति से भी लंबी लड़ाई लड़नी पड़ती है। चूंकि हमारे देश में दो तिहाई कृषि वर्षा और मानसून पर आधारित है इसलिए किसानों को कभी सूखा तो कभी सूखे के बाद की स्थिति से निपटना पड़ता है। सूखा होने पर फसल सूख जाती है तो बाद में फसल बह जाती है। यदि इंद्रदेव कृपालु भी बने रहें तो फसलों को ओला, पाला और तूफान से भी निरंतर खतरा बना रहता है। पकी फसलों पर ओले पड़ गए तो सब गुड़ गोबर हो गया। दाने खेतों में ही झड़ गए। ऐसी स्थिति में यदि समय पर धूप न निकली तो फसलों पर कीटाणुओं का प्रकोप बढ़ जाता है। फिर भी प्रकृति से लड़ते व भिड़ते किसान देश भर की आवश्यकताओं के अनुरूप खाद्यान्न उत्पादित कर ही लेते हैं। भारतीय किसान कृषि की उन्नत एवं आधुनिक वैज्ञानिक कृषि का अनुसरण करने लगे हैं जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। बीज, खाद एवं कृषि उपकरण खरीदने में उन्हें सरकार की ओर से आर्थिक सहायता भी समय–समय पर प्रदान की जाने लगी है। सरकार उनके लिए सस्ती दरों पर ऋण उपलब्ध कराती है और समय–समय पर किसान के विपरीत मौसमी परिस्थितियों के कारण ऋण माफ भी कर देती है। किसानों की स्थिति में कुछ सुधार हुआ है परंतु अब भी उसे अनेक प्रकार की सहूलियतों की आवश्यकता है। उसके लिए उचित समय पर बिजली, पानी, खाद, बीज एवं कृषि यंत्रों की व्यवस्था की जानी चाहिए। फसल बीमा को अनिवार्य बनाकर उसे प्राकृतिक विपत्तियों से सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए। यदि इन्हें किसान हित में सरकारी स्तर पर ईमानदारी से क्रियान्वित किया जाता है तो खेती किसान के लिए वरदान ही साबित होती रहेगी।

महिला आधारीय कुटीर व्यवसाय के प्रकार, प्रबंधन एवं आर्थिक विश्लेषण

शकुन्तला गुप्ता, वरिष्ठ सह प्रशिक्षक, गृह विज्ञान
कृषि विज्ञान केन्द्र, नगीना, बिजनौर, उत्तर प्रदेश

स्वतंत्रता के बाद से नारी के स्वरूप में तेजी से परिवर्तन आया है। जिस देश में नारी को घर की दहलीज से बाहर निकलने की आज्ञा नहीं थी उसी देश में आज महिलाऐं पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही है। महिलाएं 50 प्रतिशत आय तो फसलों से करती है, तथा कम से कम 50 प्रतिशत आय किसी अन्य व्यवसाय से करेंगी तभी महिलाऐं सशक्त हो पायेंगी। बहुत से ऐसे सहायक धन्धे हैं, जिनको अपनाकर महिलाएं अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकती हैं जैसे मछली पालन, मधुमक्खी पालन, मुर्गीपालन, बटेरपालन, रेशम कीट पालन, गाय–भैंस पालन, भेड़–बकरी पालन, सुअर पालन, खरगोश पालन, मशरूम उत्पादन, बागवानी, फूलों की खेती, सब्जी उत्पादन, गन्ने के रस से मूल्यवर्धक उत्पाद बनाकर, सोयाबीन व कृषि प्रसंस्करण, केंचुआ खाद कृषि आधारित उद्योग। सहायक धंधे अपनाने से पहले देख लेना चाहिए कि जो भूमि उपलब्ध है उसका उपयोग किस प्रकार हो सकता है जैसे–जमीन निचली एवं गहरी है तो उसे मछली पालन करके अधिकतम लाभ प्राप्त कर किया जा सकता है सहायक धन्धों का चुनाव करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उपलब्ध श्रम साधन एवं प्रबंध का उपयोग भली–भांति हो सके। सहायक धन्धा ऐसा होना चाहिए जिससे खेत की बेकार वस्तुएं दूसरे खेती के उपयोग आ सके।

महिला आधारीय कुटीर व्यवसाय के प्रकार–

गाय–भैंस तथा भेड़–बकरी पालन– कृषि एवं पशुपालन एक दूसरे के पूरक हैं जिसमें महिलाएं प्रमुख भूमिका निभाती हैं। पशुओं के दूध को बेचकर ग्रामीण बहनें प्रतिदिन नकद आमदनी प्राप्त कर सकती हैं, जो कि कृषि के क्षेत्र में संभव नहीं। बकरी एक छोटा एवं बहुउद्देशीय पशु है, जो कि कम जमीन वाली कृषक बहने पाल सकती है। 40–50 बकरी पालकर 4–5 सदस्यों वाले परिवार का गुजारा आसानी से कर सकती हैं। इसी प्रकार हमारी अर्थव्यवस्था में भेड़ पालन का भी महत्वपूर्ण स्थान है। भेड़ से मांस, चमड़ा तथा ऊन आदि के अतिरिक्त खाल भी प्राप्त होती है। एक वर्ष में एक भेड़ से लगभग 2 हजार रूपये कमा सकती हैं।

मुर्गीपालन– मुर्गीपालन एक बहुत ही लाभकारी सस्ता एवं सरल व्यवसाय है, जिसे कम पूंजी लगाकर एक छोटी इकाई से शुरू किया जा सकता है। इस व्यवसाय को शुरू करते समय अच्छी नस्ल की मुर्गियों का चुनाव करना चाहिए। मुर्गियों से प्राप्त बीट एक अच्छे खाद का काम करती है।

बटेर पालन– मुर्गीपालन के विकल्प के रूप में ही एक नन्हा पक्षी है बटेर। इस पक्षी के साथ महत्वपूर्ण बात यह है कि इसका 5 हफ्ते का चूजा भी बाजार में ब्रिक्री योग्य हो जाता है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि अण्डे छोटे भले ही हो लेकिन पौष्टिकता की दृष्टि से अच्छे होते हैं। बटेर पालन महिलाएं सहायक धन्धे के रूप अपना सकती हैं। बटेर के चूजे बड़े होने पर 150–200 ग्राम के हो जाते हैं, मादा बटेर 60 दिन पूर्ण उत्पादन की स्थिति में आ जाती है। एक बटेर एक वर्ष में 280 तक अण्डे देती है। बटेर पालन आदि की जानकारी प्राप्त करने के लिए पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर (बरेली) से सम्पर्क किया जा सकता है।

मधुमक्खी पालन– भारत जैसे कृषि प्रधान देश में मधुमक्खी पालन हर दृष्टि से उपयोगी तथा महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इससे 30–40 प्रतिशत उपज में वृद्धि होती हैं। महिलाएं छत्ते से शहद निकालना, उसे साफ करना, शहद शोधन एवं पैकिंग आसानी से कर सकती हैं। मधुमक्खी पालने से पूर्व कृषि विज्ञान केन्द्र, कृषि विश्वविद्यालय में प्रशिक्षण लेना आव यक है या जो कृषक मधुमक्खी पालन का कार्य कर रहे हैं उनके साथ रहकर पूरी जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। मधुमक्खी पालन की विस्तृत जानकारी आगे दी जायेगी।

रेशम कीट पालन– कृषि पर आधारित व्यवसायों में रेशम कीट पालन का कार्य महिलाएं आसानी से कर सकती हैं, इससे महिलायें आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कर

सकती हैं। रेशम के कीड़े शहतूत के पेड़ों पर पाले जाते हैं। कीड़ों की तितलियाँ पेड़ों की पत्तियों पर अण्डे देती हैं। जिससे इल्लियाँ निकलकर पत्तियाँ खाती है तथा अपनी लार को शरीर पर लपेटती हैं। यही लार सूखकर रेशम का तार बन जाता है। रेशमी धागा में लिपटी इल्ली ककून कहलाती है। ककून को उबालकर और साफ करके रेशम मिलता है। रेशम में शहतूत रेशम सबसे अच्छा माना जाता है क्योंकि रेशा पतला, लम्बा और मुलायम होता है। इसका उपयोग वस्त्र बनाने, धागों पर टांके लगाने तथा पैराशूट बनाने में किया जाता है। एक औंस कीटाण्ड से प्राप्त कीटों के पालने से औसत कोया उत्पादन 35–40 किलोग्राम मिलता है। महिलाएं कोया से धागाकरण कर लें तो 10–12 कि.ग्रा. कोया से 01 कि.ग्रा. रेशम का धागा प्राप्त कर सकती हैं। जिसका मूल्य लगभग 1800/2500 रू. तक होता है। रेशम कीट की फसल 25 से 30 दिन में तैयार हो जाती है तथा वर्ष में 4–5 फसलें आसानी से ली जा सकती हैं।

मछली पालन– मछली पालन द्वारा प्रति हैक्टर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। मछली केवल मांस के लिए ही नहीं पाली जाती है बल्कि मछली तेल, खाद, चमड़ा तथा चारकोल आदि भी प्राप्त होते हैं। कृषक बहनें मछलियों के जाल बनाने की तकनीक को सीखकर अच्छा लाभ कमा सकती हैं। व्यवसायिक स्तर पर बनाये जा सकने वाले परिरक्षित पदार्थ जैसे मछली का अचार व पाउडर बनाकर आय में ही वृद्धि कर सकती हैं।

खरगोश पालन– खरगोश पालन एक ऐसा व्यवसाय है, जिसे भूमिहीन व सीमान्त कृषक बहनें भी कम लागत में अपने घर के पिछवाड़े में कर सकती है। सरकार भी इस व्यवसाय को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न विकास कार्यक्रमों द्वारा जरूरतमन्द लोगों को आर्थिक सहायता पहुँचा रही है।

मशरूम उत्पादन– मशरूम उत्पादन से महिलाएं सशक्त हो सकती हैं। मशरूम एक प्रकार की फफूंदी है। जिसकी कुछ प्रजातियां खाने योग्य तथा पोषक तत्वों से भरपूर है। गेहूँ का भूसा, धान का पुआल, मक्का के सूखे पत्ते और दालों के छिलके, सोयाबीन, मटर, बाजरा तथा सरसों के अवशेशों का प्रयोग मशरूम उत्पादन में किया जा सकता है।

उत्पादन के बाद अवशेषों का प्रयोग– मशरूम उत्पादन से होने वाले लाभ के साथ–साथ बचे हुये अवशेषों को वर्मीकम्पोस्ट में भी परिवर्तित करके खेतों में प्रयोग किया जा सकता है।

बागवानी – कृषि उत्पादन के साथ–साथ फल–वृक्षों के अच्छे किस्म के पौधों को लगाकर अधिक आय प्राप्त की जा सकती है। उन्नत बागवानी में वैज्ञानिक तकनीक अपनाकर उत्पादकता में वृद्धि करके भी महिलाएं अपनी पारिवारिक आर्थिक स्थिति को मजबूत बना सकती हैं।

फूलों की खेती– आजकल शहरों में फूलों की बढ़ती मांग के कारण ग्रामीण महिलाएं गुलाब, गेंदा, गुलदाऊदी व रजनी गंधा जैसे पुष्पों की खेती का कार्य भी कर सकती हैं। औषधियों के रूप में प्रयोग होने वाली जड़ी बूटियों की खेती करके आय अर्जित कर सकती हैं।

सब्जी उत्पादन (गृह वाटिका)– पॉली हाउस में बेमौसमी सब्जी उत्पादन करके उसे शहरी क्षेत्रों में बेचकर महिलाएं लाभ कमा सकती है। वर्तमान में सब्जियों का बाजार भाव काफी ऊँचा है और सब्जी की आवश्यकता सभी को पड़ती है। सब्जी पौध की नर्सरी तैयार करके बेच सकती हैं। बची हुई सब्जियों का परिरक्षण करके बेच सकती है इससे अपनी आय में वृद्धि कर सकती हैं।

गन्ने का रस तथा मूल्यवर्धक उत्पादन बनाकर– एक कुंतल गन्ने से 60–65 कि.ग्रा. रस निकलता है। ग्रामीण बहने रस निष्कासन यंत्र के द्वारा रस निकालकर बेच सकती हैं तथा गुड़ को मूल्यवर्धक बनाकर जैसे रेवड़ी, गजक, चिक्की, पट्टी सेब आदि बनाकर तथा बेचकर अपनी हो सकती हैं। आर्थिक स्थिति में मजबूत कर सकती हैं।

सोयाबीन आय का है बेहतर साधन– सोयाबीन पोषण प्रदान करने के साथ आय प्राप्त करने का भी एक बेहतर साधन है। इससे कम कीमत और कम मात्रा में अधिक उत्पादन तैयार किया जा सकता है। सोयाबीन की खासियत यह है कि एक कि.ग्रा. सोयाबिन से 5–6 लीटर दूध बनाया जा सकता है जिसकी पौष्टिकता गाय के दूध के बराबर है इसके अलावा एक कि0ग्र0 सोयाबीन से डेढ़ कि0ग्रा0 पनीर बनाया जा सकता है।

कृषि प्रसंस्करण – कृषि प्रसंस्करण एक प्रक्रिया है जिसमें अन्न, तिलहन, दहलन, मसाला आदि मूल्यवर्धन (आटा बेसन, दलिया चिवड़ा कुरकुरे, तेल, चावल, मसाला) (पापड़, बड़ी) करके छोटे–छोटे पैकेटों में तैयार करके गाँव/शहरों में बहनें बेचकर आर्थिक रूप से सशक्त हो सकती हैं।

फूलों का व्यवसाय– महिलाऐं खेती का कार्य कर सकती हैं। नगरों एवं महानगरों में पूजा विवाह या विशेष अवसरों/महानगरों में फूलों के गुलदस्ते तथा फूल मालाओं की मांग अधिक है। इसके अतिरिक्त घर के भीतर रखे जाने वाले पौधों की नर्सरी लगाकर बिक्री कर सकती है। कम धन व्यय करके फूलों के बाग से पर्याप्त धन अर्जित कर सकती हैं।

केंचुआ खाद– कृषि के क्षेत्र में वर्मीकम्पोस्ट बनाने का कार्य महिलाएं कर सकती है वर्मीकम्पोस्ट हेतु आइसीनिया फोएटिडा केंचुआ सबसे उपयुक्त है। ये केंचुआ 1/–रू0 प्रति केंचुआ मिल जाता है। 100 केंचुओं को लेकर वर्मीकम्पोस्ट यूनिट शुरू की जा सकती हैं। सामान्यतया केंचुआ खाद बनने में 60 से 70 दिन का समय लगता है। तैयार खाद को हाथ से एकत्रित करके मोटे छनने से छानकर छोटे–छोटे पैकेट (1 किलोग्राम, 2 किलोग्राम, 5 किलोग्राम) तैयार करके बाजार में बेचकर आर्थिक स्थिति सुदृढ़ की जा सकती हैं।

कृषि आधारित उद्योग– कृषि आधारित उद्योग स्थापित करके कृषक बहने सशक्त हो सकती हैं। बहनें अचार, चटनी, भार्बत, मुरब्बा, जैम, जेली, पापड़ तिलौड़ी, चिप्स, मसालों के पैकिंग, विभिन्न प्रकार के सत्तु तैयार कर, मुरमुरे, गुलकन्द पैकटों में बन्द करके बेचने से अधिक बिक्री होती है। इससे महिलाएं आर्थिक रूप से सशक्त हो सकती है।

वस्त्र एवं हस्तशिल्प उद्योग– वस्त्र उद्योग में बहने रंगाई–छपाई, बांधनी, बाटिक, कशीदा, कटाई, सिलाई हस्तशिल्प उद्योग, मूर्ति निर्माण, प्लास्टिक के सामान, मोती, लाख की चूड़ियाँ, गुड़ियां, चित्रकारी आदि।

ग्रामीण वन सम्पदा– इससे सम्बन्धित सामान, सूप, ट्रे, टोकरी, फूलझाड़ू, पतंग, चटाई बनाकर धन कमा सकती हैं।

भारत की खाद्य सुरक्षा में गेहूँ की भूमिका अहम

प्रकाश चंद घासल, देवेन्द्र कुमार, देवाशीष दत्ता, ललित कृष्ण मीणा एवं अमृत लाल मीणा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम 250110 (मेरठ)

दुनिया की महत्त्वपूर्ण फसलों में गेहूँ एक मुख्य खाद्य फसल है, जो कि वैश्विक कृषि अर्थव्यवस्था और खाद्य सुरक्षा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक अनुमान के अनुसार दुनिया भर में 20 प्रतिशत कैलोरी इसी फसल की खपत से पूर्ण होती है। लेकिन बढ़ती जनसंख्या और बदलती जलवायु गेहूँ किसानों पर अधिक उत्पादन करने के लिए दबाव बना रही है। वैश्विक स्तर पर गेहूँ अधिकतम क्षेत्र में उगाई जाने वाली अनाज की फसल है। चीन के बाद भारत दूसरा सबसे बड़ा गेहूँ उत्पादक देश है। हरित क्रान्ति के फलस्वरूप देश में खाद्यान वाली दो फसलों, चावल और गेहूँ के क्षेत्रफल व उत्पादन में जबरदस्त तेजी से वृद्धि हुई है जो कि देश में खाद्य सुरक्षा के दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण है।

भारत की आजादी के समय देश में गेहूँ का उत्पादन केवल 5.6 मिलियन टन था। वर्ष 2013–14 में गेहूँ का सर्वाधिक उत्पादन 95.85 मिलियन टन हुआ था। यह अभूतपूर्व वृद्धि हरित क्रान्ति की शुरूआत के साथ ही शुरू हो गई थी। गेहूँ का उत्पादन सन् 1965–66 में पहली बार दहाई के अंक में प्रवेश किया था, और अगले चार साल के भीतर मैक्सिकन बौना गेहूँ के परिणामस्वरूप 10 मिलियन टन गेहूँ जोड़ा गया। गेहूँ का उत्पादन अगले आठ साल में 30 मिलियन टन का आंकड़ा पार कर गया था। उस समय तक गेहूँ उपादन कार्यक्रम ने दुनिया भर में मान्यता प्राप्त कर ली थी, क्योंकि यह कार्यकम अच्छी तरह से संगठित था तथा हर 5–6 साल में 10 मिलियन टन गेहूँ के उत्पादन में बढ़ोत्तरी हो रही थी। गेहूँ उत्पादन में वृद्धि 1995–99 में 70 मिलियन टन के स्तर को छूकर अटक सी गई थी तथा ऐसे संकेत दिखाई देने लगे थे कि उपज ने अपनी सर्वाधिक ऊँचाई को छू लिया है। यहाँ से मिलियन टन गेहूँ का उत्पादन बढ़ाने के लिए 10 साल और लग गए। गेहूँ की उत्पादकता 1968 में पहली बार के लिए दोहरे अंक को प्राप्त (11.0 कुंतल/हैक्टर) किया था। यह अगले बीस वर्षों में यानी 1988 में 20 कुंतल/हैक्टर के स्तर को छू लिया और 2012 तक गेहूँ की उत्पादकता 31.7 कुंतल/हैक्टर पर पहुंच गई।

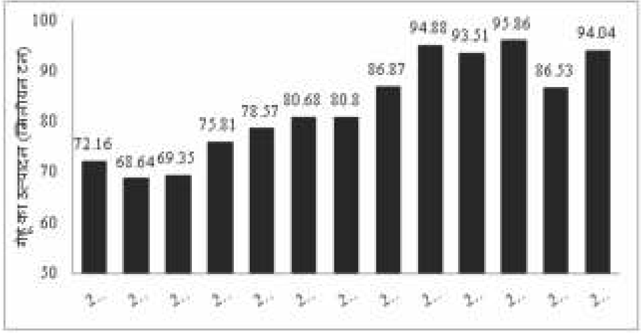

भारत में गेहूँ उत्पादन में प्रगति

उपज में स्थिरता :– एक बार जब उत्पादन अपने उच्च स्तर को पार लेता है, तो इसे बनाए रखना जरूरी हो जाता है। जलवायु परिवर्तन के दौर में उच्च उत्पादन की स्थिरता को बनाये रखना एक बड़ी चुनौती है। हालांकि गेहूँ के उत्पादन में कोई बड़ा उतार–चढ़ाव भारत में देखा नहीं गया है। उत्पादन की स्थितियाँ विभिन्न और कृषि पारिस्थितिक क्षेत्रों के लिए लिया गया था।

मूल्य/मूल्य संवर्धनः– बहुत बड़ी और बढ़ती आबादी के भोजन की मांग को पूरा करने के लिये इस मुख्य फसल के अंत उत्पादन की गुणवत्ता को बनाये रखने की आवश्यकता है। भारत में कुल गेहूँ उत्पादन का 65 प्रतिशत उत्पाद आटे के रूप में उपयोग किया जाता है जो कि मुख्यतः रोटी के रूप में प्रयोग होता है तथा 15 प्रतिशत गेहूँ प्रसंस्कृत खाद्य उत्पादों में उपयोग किया जाता है। बाकि बची उपज बफर स्टॉक, बीज, निर्यात और विभिन्न गैर–पारंपरिक स्वदेशी खाद्य उत्पादों आदि की मांग को पूरा करती है। इसलिए न केवल घरेलू खाद्य उत्पाद की आवश्यकता पूर्ति के लिए बल्कि प्रसंस्करण उद्योग और वैश्विक व्यापार में भारत की पकड़ मजबूत करने के लिए व देश के सरकारी खजाने में

तालिका 1. सिंचित गेहूँ की रोटी वाली किस्मों के दानों की गुणवत्ता

मापदंड	औसत	दायरा
चपाती स्कोर (10 में से)	7.6	6.8–8.3
ब्रेड़ लोफ वॉल्यूम (सी सी)	560	496–608
दाने में प्रोटीन की मात्रा (प्रतिशत)	11.8	10.0–13.4
सेडीमेंटेसन वैल्यू (एम एल)	44	34–60
आटा प्राप्ति (प्रतिशत)	68.9	63–72
पीले पिंगमेंट की मात्रा (पीपीएम)	3.16	2.0–5.0
लौह की मात्रा (पीपीएम)	41	26–89
जिंक की मात्रा (पीपीएम)	36	19–47

वृद्धि करने के लिये गेहूँ के दानों की गुणवत्ता की जांच करने की आवश्यकता है। आमतौर पर भारतीय गेहूँ की किस्मों की चपाती बनाने की गुणवत्ता अच्छी होती है (तालिका 1)

टेस्ट वजन, अनाज कठोरता सूचकांक और प्रोटीन भी अनाज में व्यापार के अंतर्राष्ट्रीय मानकों को पूरा करती है। हांलाकि, ग्लूटिन की कमी के कारण जिसकी वजह से भारतीय गेहूँ लोफ वॉल्यूम के आधार पर मध्यम श्रेणी का रहता हैं। स्वदेशी गेहूँ किस्मों में मुलायम दाने के कारण बिस्कुट की गुणवत्ता आमतौर पर कम होना स्वाभाविक है। भारतीय गेहूँ की मिलिंग उपज में भी सुधार की जरूरत है और प्रसंस्करण को बढ़ाने तथा उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए ठोस प्रयास की आवश्यकता है जिसके लिए गेहूँ सुधार कार्यक्रम शुरू कर दिया गया है।

गेहूँ के दानों में पोषक तत्वों की गुणवत्ता

भारत में पोषण सुरक्षा के लिए "छिपी भूखमरी" जो कि पोषक तत्वों की कमी की वजह से होती है कि जो कम करने के लिए प्रोटीन, विटामिन ए (पीला पिगमेंट), लौह और जिंक जैसे महत्त्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर किस्मों के विकास को प्राथमिकता दी गई है। गेहूँ अन्य प्रमुख अनाजों के मुकाबले मानव के बेहतर पोषण के लिए प्रमुख स्रोत के रूप में देखा जाता है, क्योंकि यह मानव की प्रोटीन और खनिज लवण की पूर्ति करता है तथा साथ–साथ इस अनाज के पोशक गुणों में और सुधार की काफी उम्मीद है। अनाज में सूक्ष्म पोशक तत्वों के महत्त्व को समझते हुए हार्वेस्ट प्लस के सहयोग से पोषण तत्वों में सघन किस्मों का विकास भारत में शुरू किया गया है। समन्वित कार्यक्रम में उन्नत आंकड़े इंगित करते हैं कि भले ही औसत प्रोटीन और पोशक तत्व सिंचित गेहूँ की किस्मों में बहुत अधिक नहीं हैं फिर भी कुछ आशाजनक किस्में जिनमें प्रोटीन 13 प्रतिशत लौह 50 पीपीएम, जस्ता 40 पीपीएम और पीले रंग पिगमेंट 3.5 पीपीएम जो कि बीटा–कैरोटीन को दर्शाता है, भारत में मौजूद हैं। भारतीय गेहूँ की रोटी वाली किस्मों में से तीन जीनोटाईप अर्थात् पीबीडब्ल्यू 596, एनआईडब्ल्यू 34 और एनआईएडब्ल्यू 1415 में उच्च प्रोटीन की मात्रा (13.2–13.3 प्रतिशत) पाई गई है। देश के गेहूँ का कटोरा कहे जाने वाले उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र में अधिक उपज देने वाली किस्में जैसे कि डीबीडब्ल्यू 71, पीबीडब्ल्यू 590, डब्ल्यूएच 1021, डीबीडब्ल्यू 621–50 और एचडी 2967 के दानों में प्रोटीन की मात्रा 12.5–12.7 प्रतिशत तक पायी गयी है। भारतीय गेहूँ की रोटी वाली तेरह किस्मों में लौह की मात्रा 50 पीपीएम मिली है और इस श्रेणी की शीर्श पाँच किस्में एचडब्ल्यू 1085, एनआइएडब्ल्यू 1014, एनआइएडब्ल्यू 34, एमएसीएस 6145 और राज 4120 हैं। इसी तरह से यूएएस 304 के 8027, जीडब्ल्यू 366, एकेएडब्ल्यू 4627 और पीबीडब्ल्यू 533 किस्मों में जिंक की मात्रा (45–50 पीपीएम) अधिक पायी गई हैं। गेहूँ के दाने में पोशक तत्वों की गुणवत्ता को बढ़ावा देने के लिए हाल ही में एक जीनोटाईप के 1006 की पहचान की गई है जिसमें लोहे के हर कोने में सूक्ष्म पोशक तत्वों में सघन किस्मों का प्रसार करना संभव हो जाएगा।

गेहूँ के सेवन के स्वास्थ्य लाभ

चपाती, ब्रेड, पास्ता, बिस्कुट, केक आदि गेहूँ के कुछ सामान्य उत्पाद हैं। गेहूँ पौष्टिक खाद्य वस्तुओं में से एक माना जाता है और यह आहार पोषक तत्वों में समृद्ध है। शोध से पहले ही सिद्ध हो चुका है कि स्वस्थ जीवन के लिए गेहूँ बेहद फायदेमंद है। गेहूँ में से अपेक्षाकृत कम वसा की मात्रा के कारण यह दिल की बहुत सी बिमारियों के खतरों को कम करता है। यह मधुमेह के रोगियों में रक्त शर्करा के स्तर को भी नियंत्रित करता है। गेहूँ अनाज दाना सहित सभी भाग (चोकर, बीज और एण्डोस्पर्म) अधिक ऊर्जा प्रदान करने वाले स्रोत हैं। प्रसंस्करण के बाद भी गेहूँ के पोषक गुण इसके आटे में बने रहते हैं।

गेहूँ के अनाज में उत्प्रेरक तत्व, खनिज लवण, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटाशियम, सल्फर, क्लोरीन, आर्सेनिक, सिलिकॉन, मैंगनीज, जस्ता, आयोडीन, तांबा, विटामिन बी और विटामिन ई भरपूर मात्रा में होता है। पोषक तत्वों की अधिकता के कारण ही गेहूँ को अकसर सांस्कृतिक आधार या पोषण की नींव के रूप में प्रयोग किया जाता है। एनीमिया, खनिज की कमी, पित्ताशय की पथरी, स्तन कैंसर, जीर्ण सूजन, मोटापा, शक्तिहीनता, तपेदिक, गर्भावस्था की समस्याओं और स्तनपान की समस्याओं जैसे गम्भीर स्थितियों में गेहूँ के सेवन से जल्दी सुधार देखा गया हैं। बाँझपन के इलाज के लिए भी गेहूँ की अनुशंसा सिफारिश की जाती है। अंकुरित गेहूँ में आम की तुलना में 2 या 3 गुणा अधिक विटामिन बी होने की वजह से गेहूँ के बीज का उपयोग जठरांत्र की स्थिति, चर्म रोग, सांस की बिमारियों और हृदय की बिमारियों के इलाज के लिए उपयोगी है। गेहूँ कोलेस्ट्रॉल के स्तर को संतुलन में रखने और दिल की रक्षा

करने में मदद करता है। गेहूँ में वजन को नियंत्रित करने की प्राकृतिक क्षमता है लेकिन यह क्षमता महिलाओं के बीच अधिक स्पष्ट रूप से देखी गई है। अनुसंधान में पाया गया कि महिलाओं को स्तन कैंसर से दूर रखने के लिए फाइबर युक्त आहार बेहद जरूरी है। एक अध्ययन के अनुसार लगभग 30 ग्राम गेहूँ की दैनिक खपत महिलाओं को स्तन कैंसर के जोखिम को कम करने के लिए पर्याप्त है। गेहूँ के सेवन से पूर्व रजोनिवृत्त महिलाओं में स्तन कैंसर का 41 प्रतिशत जोखिम कम पाया गया है। गेहूँ आधारित आहार के उपयोग से अस्थमा के विकसित होने की संभावना लगभग 50 प्रतिशत कम हो जाती है।

गेहूँ के नवांकुर (10–12 दिन आयु) का रस जो कि "गेहूँ के ज्वारे के रस" के रूप में लोकप्रिय है, मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी है। गेहूँ के ज्वारे का रस अन्य रसों की तुलना में एक बेहतर विषहर कारक/पदार्थ एजेंट है। यह मनुष्यों के समान विकास तथा पोषण को बनाए रखने के लिए पूर्ण भोजन है। गेहूँ के ज्वारे का रस एक प्रभावी आरोग्य है क्योंकि इसमें इंसान के लिए जरूरी सभी खनिज और विटामिन ए, बी–कॉम्प्लेक्स, सी, ई, एल और के समिलित हैं। यह प्रोटीन में अत्यंत समृद्ध है और इनमें 17 अमीनो एसिड पाये जाते हैं। मानव आहार में गेहूँ के ज्वारे के रस की छोटी मात्रा दाँतों में सड़न को रोकने में मदद करती है। यह बालों को पकने से रोकने के लिए मदद करता है।

गेहूँ की गुणवत्ता में स्थायीपन

दाने की गुणवत्ता काफी हद तक पर्यावरण से प्रभावित होती हैं अतः गेहूँ की उत्तम किस्मों में गुणवत्ता उच्च मानकों को बनाए रखना एक महत्त्वपूर्ण मुद्धा है। आमतौर पर सिफारिश क्षेत्र की अधिसूचित किस्मों की चपाती और रोटी बनाने की गुणवत्ता में 5 प्रतिशत के भीतर विचलन पाया गया है। इस तरह के जीनोटाईप कुछ प्रसंस्करण की गुणवत्ता के मानकों (लस सूचकांक, आटा प्राप्ति और परीक्षण वजन) के उल्लेख में भी मिले हैं। (तालिका 2)

कुछ भारतीय किस्मों में गुणवत्ता के मापदंडों में 5–10 प्रतिशत उतार–चढ़ाव के साथ मध्यम स्थिरता के स्तर पर देखा जाता है। गेहूँ के दाने में प्रोटीन और पोशक तत्वों की मात्रा मौसम की स्थिति, मृदा की उर्वरता, पोशक तत्वों की स्थिति और सिंचाई के तरीकों में से अत्याधिक प्रभावित होती है, इसलिए गेहूँ की किस्मों में पोषण के बेहतर व

तालिका 2. उच्च दाने की गुणवत्ता और मध्यम से उच्च स्थिरता वाली गेहूँ की किस्में

मापदंड	मात्रा	आनुवंशिक संसाधन
उच्च स्थिरता वाली किस्में		
चपाती की गुणवत्ता (स्कोर)	8.2–8.3	सी 306, एचडब्ल्यू 2004, पीबीडब्ल्यू 175, के 9107
ब्रेड लोफ वॉल्यूम (सीसी)	600–608	एचआई 977, एचएसीएस 6222, एकेएडब्ल्यू 4627, पीबीडब्ल्यू 533
आटे की प्राप्ति (प्रतिशत)	71.5–71.8	एनआई 5439, एचयूडब्ल्यू 468, के 9107
ग्लुटिन इंडेक्स (प्रतिशत)	82–86	एचडी 2987, के 8027, सीबीडब्ल्यू 38
टेस्ट वजन (कि.ग्रा./हे.ली.)	83–85	एचडब्ल्यू 2004, एचआई 1531, एचआई 1500
मध्यम स्थिरता वाली किस्में		
प्रोटीन की मात्रा (प्रतिशत)	13.5–14.0	एनआईएडब्ल्यू 34
सेडिमेंटेसन वैल्यु (मि.ली.)	55–59	एचआई 977, एचडी 2987, डीपीडब्ल्यू 621–50
छाने की कठोरता सूचकांक	90–94	एचआई 1531, एचआई 1500, डब्ल्यूएच 542, एमएसीएस 6145
पीला पिगमेंट (पीपीएम)	4.5	एनडब्ल्यू 2036
लौह की मात्रा (पीपीएम)	55–63	एमएसीएस 6145

उच्च मानकों को बनाए रखना कठिन कार्य है। प्रसंस्करण और अंत उत्पाद की गुणवत्ता के अलावा, मध्यम पोशक तत्वों की गुणवत्ता वाली कुछ स्थायी किस्मों को भी पहचानने की आवश्यकता है ताकि उनमें से अधिक पोशक तत्वों वाली किस्मों की पहचान कर बड़े क्षेत्रफल में उगाया जा सके।

गेहूँ जैसी मुख्य खाद्य फसल की उत्पादकता और पोशक तत्वों की गुणवत्ता को भविश्य में बनाये रखना आसान नहीं रहेगा। 2050 तक जहाँ भारतीय आबादी में 40 प्रतिशत वृद्धि होगी और जलवायु परिवर्तन, जैविक दबाव विशेश रूप से रस्ट की नई प्रजातियों से मिट्टी की स्थिति और जल संसाधन में गिरावट के युग में देश की खाद्य और पोषण सुरक्षा को बनाए रखना बड़ा कार्य हो जाएगा। नई तकनीकों, उत्पादन प्रौद्योगिकी तथा विभिन्न योजनाओं के साथ गेहूँ भविश्य में भी भारत की खाद्य और पोषण सुरक्षा का मुख्य शूत्रधार बना रहेगा।

स्वाद एवं मिठास से भरी लीची

विशाल नाथ, *स्वपनिल पाण्डेय, **अंकित कुमार पाण्डेय एवं **गिरिजा शंकर तिवारी

भाकृअनुप–राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केन्द्र, मुजफ्फरपुर, बिहार–842002

*पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना, पंजाब

** गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखंड

लीची एक उपोष्ण कटिबन्धीय, सदाबहार फल वृक्ष है जो एक विशेष जलवायु में ही अच्छी पैदावार देता है जिसके कारण यह विश्व के कुछ ही राष्ट्रों में व्यवसायिक रूप से उगाया जाता है। चीन, थाइलैण्ड, ताइवान, वियतनाम, भारत जैसे देश जो उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित हैं, वहाँ लीची अप्रैल–जुलाई माह में पककर तैयार होती है जबकि दक्षिण गोलार्द्ध वाले देशों में (आस्ट्रेलिया, मेडागास्कर, दक्षिण अफ्रीका, मारीशस) में लीची दिसम्बर–जनवरी माह में तैयार होती है। भारत एक प्रमुख लीची उत्पादक देश है जहाँ पर लगभग 0.85 लाख हैक्टर क्षेत्रफल से 6.0 लाख टन (वर्ष 2015–16) लीची फल पैदा होता है। लीची उत्पादन में भारत चीन के बाद दूसरे स्थान पर आता है परन्तु उत्पादकता की दृष्टि से भारत सर्वोच्च स्थान पर है। भारत वर्ष में मुख्य रूप से बिहार, पं. बंगाल, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, त्रिपुरा, पंजाब, असम, आदि राज्यों में लीची की बागवानी की जाती है जिसमें बिहार अग्रणी राज्य है। भारतवर्ष में लीची सबसे पहले त्रिपुरा में तैयार होती है जहाँ इसके फल अप्रैल के दूसरे सप्ताह में पककर तैयार हो जाते हैं इसके पश्चात् असम, पश्चिम बंगाल तथा बिहार की लीची तैयार होती है। बिहार में लीची के फल 20 मई से पकना आरम्भ कर देते हैं तथा 1 जून तक मिलते हैं। जैसे–जैसे पश्चिम की तरफ बढ़ते जाते हैं लीची के फल देर से पकते हैं और तथा हिमाचाल प्रदेश में जून के अंतिम सप्ताह में लीची के फल प्राप्त होते हैं।

लीची के सुगन्धित गूदे में मिठास एवं खटास का अच्छा मिश्रण होने के कारण इसे मुख्यतः ताजे फलों के रूप में पसंद किया जाता है, परन्तु इससे अन्य प्रसंस्कृत पदार्थ जैसे लीची नट, डिब्बा बन्द लीची, लीची शर्बत, लीची सोमरस, इत्यादि पदार्थ भी बनाये जा सकते हैं। लीची के फलों का औषधीय महत्त्व भी है। इसके उपयोग से कफ, गैस, ग्रन्थियों की वृद्धि, ट्यूमर इत्यादि से राहत मिलती है।

मृदा एवं जलवायु

लीची में अपेक्षित वानस्पतिक वृद्धि तथा फलन के लिए जलवायु एक मुख्य कारक माना जाता है। किसी भी स्थान की जलवायु यह निर्धारित करती है कि वहाँ पर लीची की खेती हो सकती है या नहीं। जलवायु के अन्तर्गत प्रकाश, तापमान, आर्द्रता, हवा का वेग इत्यादि की अहम भूमिका होती है। साधारणतः लीची की खेती उत्तर भारत के कम ऊँचाई वाले मैदानी क्षेत्र तथा दक्षिण भारत के अधिक ऊँचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में की जा सकती है जहाँ सर्दी तथा गर्मी वाली जलवायु पायी जाती है। ऐसे स्थान जहाँ सर्दियों में दिन छोटे और ठण्डे (20 डिग्री सेंटीग्रेड से कम) परन्तु पाला रहित तथा गर्मियों में दिन लम्बे, उष्ण (25 डिग्री सेंन्टीग्रेड से अधिक) तथा वर्षा 1200–1500 मिलीमीटर तक होती है, लीची की सफल बागवानी के लिए सर्वोत्तम पाये जाते हैं। लीची में अच्छे फूल आने के लिए कम से कम 200 घंटों तक शून्य से 13 डिग्री सेटीग्रेड तापमान तथा जमीन में नमी की कमी अत्यंत आवश्यक होती है। उत्तर भारत में यह परिस्थिति दिसम्बर–जनवरी में उपलब्ध रहती है, जबकि दक्षिणी भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में जुलाई से सितम्बर के मध्य यह परिस्थिति पैदा होने की सम्भावना रहती है। फल विकास के समय 20–35 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान वाले क्षेत्र लीची के लिए सर्वोत्तम पाये गये हैं। लीची के लिए संस्तुत मानक जलवायु की दशाएं निम्न प्रकार हैं।

1. पाला रहित उपोष्ण कटिबन्धीय जलवायु जहाँ पर तेज हवाएं न चलती हों।
2. फूल निकलने के पहले ठण्डा मौसम।
3. पौध विकास के समय मध्यम वर्षा तथा तापमान की दशाएं ।
4. फूल एवं फल लगने तथा परिपक्वता के समय सामान्य तापमान एवं आर्द्रता की दशाएं ।

सामान्य तौर पर लीची की उत्तम बागवानी के लिए अच्छे जल निकास, कार्बनिक तत्वों तथा सामान्य पी.एच. वाली जलोढ़ बलुई एवं दोमट मिट्टी सबसे अच्छी पायी गयी है। बलुई दोमट मिट्टी की परिस्थितियों में जड़ों का विकास गहरा होता है जिनमें पानी एवं पोषक तत्वों को अवशोषित

करने की क्षमता होती है जबकि भारी मिट्टी में जड़ों का विकास उथला होता है। 40 प्रतिशत से अधिक चिकनी मिट्टी, काली मिट्टी व लाल लैटेराइट मिट्टी में विशेष जल प्रबन्ध की व्यवस्था के साथ लीची की खेती की जा सकती है। 5.5–6.5 पीएच मान वाली मिट्टी लीची के लिए उपयुक्त मानी गई है परन्तु 4.5–5.5 पी.एच. मान वाली अम्लीय, 8.5 पी.एच. मान तक वाली क्षारीय मिट्टी में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

प्रमुख किस्में

भारत वर्ष में लगभग 35 किस्में हैं जिनमें केवल 5–6 किस्में ही व्यवसायिक खेती के लिए उपयुक्त पायी गयी हैं। बिहार राज्य जहाँ पर भारत वर्ष में सबसे ज्यादा उत्पादन एवं क्षेत्रफल है, में भी केवल शाही, चाइना, रोज सेंटेड, बेदाना किस्में ही व्यवसायिक बागवानी में प्रचलित हैं। राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केन्द्र ने कुछ किस्मों का विकास किया है जिसके प्रोत्साहन करने की जरूरत है। कुछ किस्मों का विवरण निम्नवत है।

शाही: यह बिहार तथा निकटवर्ती राज्यों झारखण्ड, उत्तराखण्ड तथा उत्तर प्रदेश की एक महत्त्वपूर्ण किस्म है। यह नियमित फलन एवं 80–100 कि0ग्रा0/वृक्ष उत्पादन देने वाली अगेती किस्म है। इसके फल अंडाकार से गोलाकार और गहरे लाल रंग के होते हैं जो मई के द्वितीय सप्ताह से मई के अन्तिम सप्ताह में पकते हैं। इसके फल का वजन 20–25 ग्राम तक होता है। गूदे धूसर एवं मिठास (टी.एस.एस.) 20.3° ब्रिक्स होता है। इसका बीज बड़ा तथा आकार लम्बा व रंग चमकीला होता है जिनका वजन 3–4 ग्राम/बीज होता है।

चाइना: यह एक अधिक उत्पादन देने एवं गर्म हवाओं, मृदा में नमी की असमानता एवं फल फटने की समस्या के प्रतिरोधक मध्यम पछेती व्यवसायिक किस्म है। इस किस्म के फलों की परिपक्वता का समय झारखंड एवं पश्चिम बंगाल में जून का दूसरा सप्ताह एवं बिहार में जून का तीसरा और अंतिम सप्ताह होता है। औसत उपज 80–100 किग्रा/वृक्ष होता है परन्तु इसमें एकान्तर फलन की समस्या आती है। प्रति फल वजन 22–27 ग्राम तक होता है फल हृदयाकार, पकने पर गहरे गुलाबी रंग के दिल के आकार के होते हैं जिनके सतह उभार लिए हुए होते हैं। गूदा हल्का, उजला, मुलायम, रसदार, मीठा (टी एस एस 20.2° ब्रिक्स) होता है। बीज का वजन 3.49 ग्राम/बीज होता है।

वंशदासू: यह एक मध्य समय में पकने वाली किस्में है जिसका विकास राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केन्द्र, मुजफ्फरपुर द्वारा क्लोनल चयन विधि से किया गया है। इसके फल बड़े शंक्वाकार–गोला एवं चटक रंग वाले होते हैं। फलों में बीज छोटे और गूदा की मात्रा अधिक (83%) होता है। इस किस्म की औसत उपज 70–100 किग्रा. /वृक्ष होती है।

योगदान : यह अत्यन्त देर से पकने वाली किस्म है जिसके पौधे बौने तथा फल छोटे होते हैं परन्तु फलों में बीज का आकार कम होने के कारण गूदे की मात्रा अधिक होती है। यह किस्म सघन बागवानी द्वारा व्यवसायिक स्तर पर उगाई जा सकती है। इसके फलों में फटने तथा झड़ने की समस्या नहीं होती है तथा एक पौधे से लगभग 40–60 कि.ग्रा. फल प्रतिवर्ष प्राप्त किया जा सकता है। यह किस्म भी राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केन्द्र, मुजफ्फरपुर द्वारा विकसित की गयी है।

कस्बा : यह बिहार एवं झारखंड राज्य के लिए उपयुक्त किस्म है। इसके वृक्ष मध्यम आकार के होते है। यह मई के अंतिम सप्ताह से लेकर जून के प्रथम सप्ताह तक पाया जाता है। यह मध्यम आकर से अंडाकार एवं अंडगोलाकार होता है। पकने पर यह हल्का चटख गहरा गुलाबी हो जाता है। इसका गूदा हल्का उजला एवं मुलायम रसदार होता है। यह किस्म भी राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केन्द्र, मुजफ्फरपुर द्वारा विकसित की गयी है।

पौध प्रवर्धन

गूटी अथवा एयर लेयरिंग विधि से तैयार किये जाते हैं। अतः लीची की व्यवसायिक खेती के लिए गूटी द्वारा तैयार पौधों का उपयोग किया जाना श्रेयस्कर होता है। लीची के मातृ पौधों में गूटी बांधना चाहिए, इसके पूर्व नहीं, क्योंकि इस अन्तराल में पौध अपने स्थापना व वानस्पतिक वृद्धि के अवस्था में होते हैं। चुनी हुई डालियों (6–9 माह आयु की टहनियों) पर शीर्ष से 40–50 सेटीमीटर नीचे किसी गांठ के पास गोलाई में 2–2.5 सेंटीमीटर चौड़ा छल्ला ग्राफ्टिंग चाकू के मदद से बना लेते हैं। छल्ले के ऊपरी सिरे पर सेराडेक्स पाउडर या 1000 पी.पी.एम आई.बी.ए. या आई.ए.ए. का लेप लगाकर छल्ले को नम मांस, घास अथवा मिश्रण से ढककर ऊपर से 400 गेज की पॉलीथीन का 15–20 सेंटीमीटर चौड़ी पट्टी से 2–3 बार लपेटकर सुतली से दोनों सिरों को कसकर बांध दिया जाता है। मांस घास के बदले लीची के बाग की मिट्टी (20 किलो), गोबर का सड़ा खाद (20 किलो), जूट के बोरे का सड़ा टुकड़ा (5 किलो), अरण्डी की खल्ली (2 किलो), के सड़े मिश्रण का प्रयोग किया जा सकता है। पूरे मिश्रण को अच्छी तरह मिलाकर एवं हल्का नम करके एक जगह ढेर कर देते हैं तथा उसे जूट के बोरे या पॉलीथीन से 15–20 दिनों के लिए ढक देते हैं। जब गूटी बांधना हो तब मिश्रण को अच्छी तरह गूथकर 100 ग्राम की लोई बनाकर छल्ला कटे स्थान पर लगाकर सावधानीपूर्वक गूटी बनाते हैं जिससे स्थापना बेहतर होता है। वर्मीकम्पोस्ट+वर्मीकुलाईट+परलाईट के मिश्रण को भी गूटी को बनाने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। गूटी लगभग दो माह में काटने लायक हो जाता है। गूटी काटने के पूर्व डाली की लगभग तीन चौथाई से अधिक पत्तियों एवं अवांछित टहनियों को निकाल देते हैं। गूटी तेज चाकू या सिकेटियर के मदद से छिल्के के करीब 2–3 सेंटीमीटर नीचे से काटकर अलग कर लेते हैं और इसे पॉलीथीन की थैलियों या पौधशाला की क्यारियों में प्रतिस्थापित करते हैं। नियमित तौर पर सिंचाई, कीट व्याधि नियंत्रण करने, पोषक तत्वों के पर्णीय छिड़काव करने और खरपतवार निकालते रहने से स्वस्थ पौधे शीघ्र तैयार हो जाते हैं। भारतवर्ष में गूटी बांधने का सबसे उपयुक्त समय मानसून की शुरूआत यानि कि जून–जुलाई का महीना होता है।

खेत की तैयारी

बाग लगाने से पूर्व खेत को ठीक तरीके से जुताई करके

उसमें उगे हुए बहुवर्षीय झाड़ियों को निकाल देते हैं जिससे रेखांकन, गड्ढों की खुदाई तथा पौध रोपण में सहायता मिलती है। यदि लीची के बाग को 30–40 प्रतिशत अधिक ढाल वाली जमीन पर लगाना है, तो उसमें ढाल के विपरीत कन्टूर बना कर मेड़बन्दी करके पौध रोपण करना चाहिए। समतल जमीन पर या कम ढाल वाली जमीन पर गहरी जुताई करके खेत तैयार कर लेते हैं। यदि मृदा का पीएच मान 7–8 के बीच हो, तो खेत में 50 किलोग्राम प्रति हैक्टर की दर से जिप्सम का प्रयोग करने से मृदा पीएच सामान्य स्तर पर पहुँच जाता है। यदि सम्भव हो तो बगीचा स्थापना से पहले तीव्र गति से बढ़ने वाले वायुरोधी पौधों की 2 कतारों को चारों तरफ लगा देना चाहिए ।

लीची में पौध रोपण के लिए बाग लगाने की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं परन्तु व्यवसायिक स्तर पर वर्गाकार विधि (8X8 मीटर अथवा 6X6 मीटर) या आयताकार विधि (7X5 अथवा 9X7 मीटर) से पौधा लगाने की सलाह दी जाती है ।

गड्ढे की तैयारी एवं पौध रोपण

रेखांकन के उपरान्त चिन्हित स्थान पर अप्रैल–मई माह में 90X90X90 सेमी. आकार के गड्ढे खोदकर ऊपर की आधी मिट्टी को एक तरफ तथा आधी मिट्टी दूसरी तरफ रख देते हैं। वर्षा प्रारम्भ होते ही जून के महीने में 2–3 टोकरी गोबर की सड़ी खाद (कम्पोस्ट), 2 किलोग्राम करंज अथवा नीम की खली, 1 किलोग्राम हड्डी का चूरा अथवा सिंगल सुपर फॉस्फेट एवं 50 ग्राम क्लोरोपायरीफॉस 10 प्रतिशत धूल या 20 ग्राम फ्यूराडान 3 जी को गड्ढे की ऊपरी सतह की मिट्टी में अच्छी तरह मिलाकर गड्ढे को भर देना चाहिए। गड्ढे को खेत के सामान्य सतह से 10–15 से.मी. ऊँचा भरना चाहिए। वर्षा ऋतु में गड्ढे की मिट्टी दब जाने के बाद उसके बीचो–बीच में खुरपी की सहायता से पौधों की पिंडी के आकार की जगह बनाकर पौधा लगा देते हैं। पौधा लगाने के पश्चात उसके पास की मिट्टी को ठीक ढंग से दबा देते हैं तथा पौधों के चारों तरफ एक थोला बनाकर 2–3 बाल्टी (25–26 लीटर) पानी डाल देना चाहिए। वर्षा न होने की दशा में पौधे को पूर्ण स्थापित होने तक पानी देते रहना चाहिए।

उत्तर भारत में जुलाई–अगस्त का महीना अथवा सिंचाई सुविधा के साथ फरवरी–मार्च का महीना लीची के पौध रोपण के लिए सर्वोत्तम पाया गया है। पूर्ण पौध स्थापना के लिए पौधों को 15 दिन तक प्रतिदिन पानी देने की आवश्यकता होती है। एक बार पौध स्थापना के बाद उसे टपक सिंचाई से आवश्यकतानुसार सिंचाई कर सकते हैं। पौधों के चारों तरफ सूखी घास या पॉलीथीन की पलवार बिछा देते हैं। वर्षा के मौसम में लीची की जड़ों के पास पानी रूकने से पौधों के सूखने की सम्भावना रहती है अतः पौधों में सक्रिय जड़ तन्त्र के आस–पास अधिक जल जमाव नहीं होने देना चाहिए ।

पौध रोपाई के पश्चात पौधों को सीधा बढ़ने के लिए खूंटी तथा रस्सी की सहायता से शुरूआत के 3–4 महीनों तक सहारे की आवश्यकता पड़ती है।

वायुरोधक तथा बायोफेन्स लगाना

लीची बाग की स्थापना के साथ–साथ बागीचे के चारों तरफ विशेष करके उत्तर तथा पश्चिम दिशा में तीव्र गति से बढ़ने वाले बहुवर्षीय पौधों की कम से कम दो कतारें नजदीक–नजदीक लगानी चाहिए जिससे पौधों की फलन की अवस्था में तीव्र गर्म या ठंडी वायु से होने वाले नुकसान से पौधों एवं फलों को बचाया जा सके। लीची के बगीचों में वायुरोधी पौधों के रूप में पापुलर, जामुन, सागौन, शीशम इत्यादि के पौधे लगाए जा सकते हैं। वायुरोधक पौधों के बीच में झाड़ीनुमा बढ़ने वाले कांटेदार पौधों को लगाने से बाग की सुरक्षा भी की जा सकती है क्योंकि ये पौधे बाहर से आने वाले जानवरों तथा अन्य जीव जन्तुओं को बागीचे में प्रवेश करने से रोकते हैं। झाड़ीदार पौधों में करौंदा, झरबेर, डुरंता इत्यादि को लगया जा सकता है।

पौधों को सर्दी से बचाव

लीची के पौधों में ठंड से नुकसान होने की सम्भावना रहती है। उत्तर भारत में नवम्बर से फरवरी तक नवजात पौधों को विशेष रूप से बचाने की आवश्यकता होती है क्योंकि कभी–कभी पाला पड़ने या तापमान में एकाएक कमी आने से पौधों के मरने की सम्भावना रहती है। अतः पौधों को कम से कम एक सर्दी तक अवश्य बचाना चाहिए। पौधों को ठंड से बचाने के लिए इसके चारों तरफ दलहनी फसल जैसे–अरहर की खेती करके अथवा खेत के चारों तरफ वायुरोधक पौधे लगा करके अथवा प्रत्येक पौधे के ऊपर

छप्पर बना करके पौधों को बचाया जा सकता है। इसी प्रकार से गर्मी से बचाव के लिए भी पौधों का प्रबन्ध किया जा सकता है। कम खर्च में छप्पर बनाने के लिए सूखी घास, मक्का, बाजरा के डन्ठल या धान का पुआल इत्यादि का प्रयोग किया जा सकता है परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि पौधों को पर्याप्त रोशनी मिलती रहे इसके लिए झोपड़ी का एक किनारा खुला रहना चाहिए।

अन्तरशस्य फसलें

लीची के नये पौधों में चार से छः वर्षों तक स्थानीय फलों, सब्जियों, फूल, तिलहन, दलहन, इत्यादि की खेती की जा सकती है। लीची के बगीचों में मूँगफली, आलू, चना, मूँग, मटर, शकरकन्द जैसे फसलों तथा फूल गोभी, पत्तागोभी, मिर्च, मूली, बोदी, प्याज, गाजर, भिण्डी, अरबी, आदि सब्जियों, ग्लेडियोलस, गेंदा, आदि फूल, पपीता, केला, अमरूद, अन्नास, जैसे फलों की खेती जा सकती है। पौधों की स्थापना से लेकर उनके फूलने फलने तक उत्तम बाग प्रबन्ध प्रक्रिया का अनुपालन करने से पौधों का ढांचा निर्माण, वृद्धि एवं विकास इस लायक होता है कि वे आने वाले वर्षों में ज्यादा से ज्यादा एवं उत्तम गुणवत्तापूर्ण फल पैदा कर सकें। इस अवस्था में समुचित पादप संरक्षण, क्षत्रक प्रबन्ध तथा बाग सतह प्रबन्ध से पौधों का समुचित विकास सुनिश्चित किया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग

लीची के पौधों में उनके विकास एवं वृद्धि तथा फलत की अवस्थाओं के अनुरूप ही खाद एवं उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए। लीची के पौधों में देय मात्रा का विवरण तालिका–1 में दिया जा रहा है। जिसे एक मार्गदर्शिका के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

तालिका–1: लीची में पौध उम्र के अनुसार खाद एवं उर्वरक की संस्तुति

वर्ष	गोबर की खाद (किलोग्राम)	खली की खाद (किलोग्राम)	नाइट्रोजन (ग्राम)	फॉस्फोरस (ग्राम)	पोटाश (ग्राम)	जिंक (ग्राम)	बोरान (ग्राम)
1	10	1.0	50	25	25	25	–
2	15	1.50	100	50	50	50	–
3	20	2.00	150	125	75	75	–
4	25	2.50	200	150	100	100	–
5	30	3.00	250	200	125	125	125
6	35	3.50	300	250	150	150	150
7	40	4.00	400	350	200	200	200
8	45	4.50	400	350	200	200	200
9	50	5.00	500	400	250	225	225
10 वर्ष से अधिक	60	5.00	600	600	250	250	250

खाद देने का समय

पूर्ण विकसित पौधों में यदि सम्भव हो तो कुल उर्वरक के मात्राओं को दो भाग में बांट कर एक भाग जून–जुलाई में और दूसरा भाग अक्तूबर के महीने में देना लाभदायक होता है। खाद की पूरी मात्रा वर्षा ऋतु से पहले पौधों के चारो तरफ हल्की खाई बनाकर देने से उनका अवशोषण अच्छा होता है। पर्णीय छिड़काव के लिए बोरान, कॉपर, मैंग्नीज तथा जिंक इत्यादि का प्रयोग परिपक्व पत्तियों पर करना चाहिए। 25–30 प्रतिशत नत्रजन की मात्रा फल विकास के समय देने से फल का आकार बढ़ जाता है तथा पोटाशियम की 30 प्रतिशत मात्रा का प्रयोग फल विकास के समय पर करने से गुणवत्ता में सुधार होता है। यदि मिट्टी में मैंग्नीज की कमी है तो 40 ग्राम मैंग्नीज प्रति वर्ग मीटर क्षत्रक फैलाव के अनुसार फल तोड़ाई के समय देने से लाभ होता है।

पोषक तत्वों का पर्णीय छिड़काव

हाल के वर्षों में पौधों पर पोषक तत्वों का पर्णीय छिड़काव अथवा बूंद–बूंद सिंचाई के द्वारा पानी में घुलनशील पोषक तत्वों को जड़ के पास देने से लाभदायक परिणाम मिले हैं। इस विधि से पौध विकास के समय नाइट्रोजन के प्रयोग से अधिक बढ़वार मिलती है परन्तु फलत में देरी हो सकती है साथ ही साथ यह भी ध्यान रखना होता है कि पर्णीय छिड़काव के लिए नत्रजनधारी उर्वरक की सान्द्रता 2–4 प्रतिशत से अधिक न हो।

सिंचाई

लीची उत्पादन में जल प्रबन्ध की अहम् भूमिका होती है क्योंकि लीची की पौध स्थापना से लेकर विकास तक तथा फल देने वाले पौधों में फल लगने से लेकर फल की परिपक्वता तक पौधों को पानी की आवश्यकता होती है। बहुत से लीची के बगीचे वर्षा आधारित होते हैं जिसके कारण फल विकास की अवस्था में पानी की कमी से उनका उत्पादन एवं गुणवत्ता कम हो जाती है।

लीची के पौधों में पानी की आवश्यकता

लीची के छोटे पौधों में पौधा रोपण से स्थापना तक नियमित सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है जबकि विकसित हो रहे पौधों में गर्मी के मौसम में विशेष रूप से सिंचाई की जरूरत होती है। फल देने वाले पौधों में फल विकास के समय पानी की अधिक आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि फल विकास के समय पानी की कमी होने से फलों का विकास रूक जाता है और फल फटने लगते हैं या गिरने लगते हैं। लीची के नये रोपित पौधों में जल की आवश्यकता का विवरण सारणी 2 में दिया गया है।

पुष्पन एवं फलन

लीची के पौधों में 5 वर्ष बाद फलन प्रारम्भ होता है। फरवरी–मार्च में पुष्प मंजर आते हैं जिनमें उभयलिंगी मादा पुष्पों पर ही फल लगते हैं। फल अप्रैल–मई में विकसित होकर मई के मध्य तक पककर तैयार होते हैं। फलों की परिपक्वता उनके रंग गूदे की मिठासः खटास के आधार पर निर्धारित किया जाता है। पूर्ण रूप से पके फलों में 180^{0} ब्रिक्स मिठास 0.5 प्रतिशत खटास होना आवश्यक होता है। लीची के फलों को सुबह के समय गुच्छे सहित तोड़ा जाता है। जिसे छंटाई एवं पैकिंग के बाद बाजार भेजा जाता है।

परागण

लीची एक परपरागित फसल है जिसमें परागण मुख्य रूप से मधुमक्खी द्वारा होता है। लीची का फूल स्वतः में नपुंसक होता है, परन्तु उसमें शहद होने के कारण वह कई प्रकार के कीड़ों को आकर्षित करता है, जिससे परपरागण की क्रिया सम्पन्न हो जाती है। अतः लीची के बगीचों में पर्याप्त संख्या में मधुमक्खी के बक्से (10–15 प्रति हैक्टर) रखने से

तालिका–2: लीची के नए रोपित पौधों में जल की आवश्यकता (लीटर/वृक्ष)

माह	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	तृतीय वर्ष	4–6 वर्ष	7–12 वर्ष	12 वर्ष से अधिक
मार्च–जून	9.0	30.0	175.0	900	1400	3000
जुलाई–अक्तूबर	5.4	18.0	105.0	270	450	900
नवम्बर–फरवरी	3.0	9.0	60.0	120	200	550

30–40 प्रतिशत तक उपज में बढ़ोत्तरी होती है, साथ ही साथ शहद से अतिरिक्त आमदनी भी हो सकती है। लीची के फूलों पर मधुमक्खियाँ 6–12 बजे तक सबसे ज्यादा भ्रमण करती है। दिन में तापमान में वृद्धि, बदली के मौसम में बारिस के समय तथा तेज हवा या कीटनाशी के छिड़काव की दशा में परागण कीटों का भ्रमण बहुत कम हो जाता है, और परागण की प्रक्रिया बाधित होती है। मधुमक्खी के अलावा अनेक प्रकार के कीड़ों से लीची में परागण हो सकता है, परन्तु इनका प्रतिशत लगभग नगण्य होता है।

लीची के दैहिक विकार एवं प्रबन्ध

लीची के पौधों में विशेष करके फलों में अनेक प्रकार के दैहिक विकार देखे गये हैं। जिनमें अनियमित फलन या अफलन, फलों का गिरना, फलों का फटना, फलों का अनयिमित विकास, फलों का झुलसना, इत्यादि प्रमुख हैं।

1. बागीचों में पर्याप्त संख्या (10–15 प्रति हैक्टर) में मधुमक्खी के छत्ते रखें ।
2. फूल खिलने के समय किसी दवा का छिड़काव न करें।
3. मंजर निकलने के एक महीना पहले जिंक सल्फेट (0.2%) का छिड़काव करें।
4. फल विकास के समय नैफथलीन एसिटिक एसिड 20 पी.पी.एम. या प्लैनोफिक्स 2 मिली. प्रति 5 लीटर का 25 दिनों के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।
5. फलों में रंग परिवर्तन की अवस्था में 0.4% बोरान का 2 छिड़काव करें।

तालिका 3: लीची के प्रमुख कीट, रोग एवं उनका निदान

क्र.सं.	कीट का नाम	क्षति का विवरण	निदान
1.	फल एवं बीज बेधक	सूंडियाँ फल एवं बीज को खाकर हानि पहुँचाती है।	• ग्रसित फल, मंजर एवं जमीन पर गिरे फलों को नष्ट कर दे। • आव यकतानुसार पहला छिड़काव डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. 1 मिली./लीटर की दर से या फीप्रोनील 5 एस. सी. (2 मिली./लीटर), या नोवाल्यूरॉन 10 ई.सी. (1.5 मिली./लीटर) का छिड़काव फल लगने के 10 दिन बाद करें, जबकि दूसरा छिड़काव इनमें से किसी भी रसायन का फल पकने से 15 दिन पहले करें ।
2.	पत्ती काटने वाला भृंग	ग्रब एवं वयस्क कीट कोमल पत्तियों को खाकर नुकसान पहुँचाते हैं।	• छोटे पौधे एवं टहनियों को हिला कर कीट को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। • बागान को साफ–सुथरा रखना चाहिये । • महामारी की स्थिति में क्लोरपायरिफॉस 20 ई.सी. 2 मिली./लीटर की दर से छिड़काव करें।
3.	लीची मकड़ी	ि ा ु एवं व्यस्क कोमल पत्तियों एवं टहनियों से रस चूसते हैं, परिणामस्वरूप टहनिया सुख जाती हैं।	• ग्रसित टहनियों को काट कर नष्ट कर देना चाहिये। • सितम्बर–अक्तूबर के माह में डाइकोफॉल 18.5 ई.सी. 2.5– 3 मि.ली. या प्रोपरगाईट 57 ई.सी. 2.5–3 मि.ली. की दर से प्रयोग करें। आवश्यकतानुसार किसी एक रसायन का प्रयोग फरवरी माह में भी करना चाहिए ।

4.	लीची सेमीलूपर	सूंडियाँ मूलायम पत्तियों को खाकर नुकसान पहुँचाती हैं।	• बहुतायत की स्थिति में डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई0सी0 1.0 मि0ली0/ली0 या क्लोरपायरिफॉस 20 ई.सी. 2 मि0ली0/ली0 के घोल का छिड़काव करें।
5.	लीची बग	शिशु एवं वयस्क कीट कोमल पत्तियों एवं टहनियों से रस चूसते है, परिणाम स्वरूप टहनियाँ कमजोर हो जाती है।	• नीम आधारित रसायनों या नीम बीज अर्क का प्रयोग कर इस कीट को पौधों पर आने से रोका जा सकता है। • बहुतायत की स्थिति में इमिडाक्लोप्रीड 17.8 एस. एल. 0.5 मि.ली. या डाईमेथोएट 30 ई.सी. 2 मि0ली0/ली0 के घोल का छिड़काव करें।
6.	पत्ती लपेटक कीट	कीट की सूडियां पत्तियों को लम्बवत लपेटकर अंदर से खाती है।	• नाइट्रोजन युक्त खादों का कम प्रयोग करें। • प्रकोप कम हो एवं पौधे छोटे हो तो प्रभावित पत्तियों को हाथ से तोड़कर नष्ट करें। • प्रकोप अधिक होने पर इमिडाक्लोप्रीड 17.8 एस. एल. 0.5 मि.ली./लीटर या फीप्रोनील 5 एस.सी. 2 मी.ली./लीटर की दर से छिड़काव करें ।
7.	छाल खाने वाला सूंड़ी	सूडियां प्रारम्भ में छाल को खरोच कर खाती है तथा बाद में जोड़ों से तने में प्रवेश कर अंदर ही अंदर तने को खाकर खोखला कर देती है, परिणामस्वरूप पौधा सूख जाता है।	• प्रकाश प्रपंच स्थापित कर व्यस्क कीट को इकट्ठा कर नष्ट करें। • तने एवं टहनियों पर लगे जाले को साफ कर प्रत्येक छिद्र में लम्बा तार डालकर खुरचने से कीट के पिल्लू मर जाते हैं। • नारियल झाड़ूँ से पहले जाला साफ करके प्रत्येक छिद्र के अंदर मिट्टी तेल/पेट्रोल/फिनाईल/डाईक्लोरवॉस 100 ई.सी. 2.0 मि0ली0/ली0 घोल से भीगी रूई को ठूसकर भर दें एवं छिद्रों के ऊपर गीली मिट्टी का लेप लगा दें।
8.	भयामवर्ण रोग	रोग के संक्रमण की शुरूआत फल पकने के 15–20 दिन पहले होती हैं पर कभी–कभी लक्षण फल तुड़ाई–उपरांत तक दृष्टिगोचर हो सकते हैं। फलों के छिलकों पर छोटे–छोटे (0.2–0.4 से.मी.) गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई पड़ते है जो आगे चलकर एक दूसरे मिलकर काले और बड़े आकर के (0.5–1.5 से.मी.) धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं।	• बचाव के लिए मैन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2%) 2 ग्राम/ली0 पानी के घोल का छिड़काव करें।
9.	पर्ण चित्ती रोग	पर्ण चित्ती मुख्यतः जुलाई महीने में दिखने शुरू होते हैं । पत्तों पर भूरे या गहरे चॉकलेट रंग की चित्ती सामान्यतया पुरानी पत्तियों के ऊपर प्रकट होती हैं।	• प्रभावित भाग की कटाई–छंटाई कर, जमीन पर गिरी हुई पत्तियों के साथ समय–समय पर जला देना चाहिए। • बचाव के लिए मैन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2%) 2 ग्राम/ली0 पानी के घोल का छिड़काव करें। • रोग की तीव्रता ज्यादा हो तो रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 50% डब्ल्यू पी या क्लोरोथैलोनिल 75% डब्ल्यू पी 2 ग्राम ग्राम/ली0 पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

10.	पत्ती एवं कोपल झुलसा रोग	इस रोग से पौधों की नई पत्तियाँ एवं कोपलें झुलस जाती हैं रोग की भुारूआत पत्ती के सिरे पर उत्तकों के मृत होने से भूरे धब्बे के रूप में होती है जिसका फैलाव धीरे–धीरे पूरी पत्ती पर हो जाता है। रोग की तीव्रता की स्थिति में टहनियों के ऊपरी हिस्से झुलसे दिखते हैं।	• बचाव के लिए मैन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2%) 2 ग्राम/ली0 पानी के घोल का छिड़काव करें। • रोग की तीव्रता ज्यादा हो तो रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 50% डब्ल्यू पी या क्लोरोथैलोनिल 75% डब्ल्यू पी 2 ग्राम/ली0 पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।
11.	फल विगलन रोग	इस रोग का प्रकोप फल परिपक्व होने के समय होता है, जिसके फलस्वरूप छिलका मुलायम हो जाता है और फल सड़ने लगते हैं।	• फल तुड़ाई के 15–20 दिन पहले पौधों पर कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू पी 2 ग्राम/ली0 पानी के घोल का छिड़काव करें। • फलों को तोड़ने के शीघ्र बाद पूर्वशीतलन उपचार (तापक्रम 4^{0} सेंटीग्रेड नमी, 85–90%) करें । • फलों की पैकेजिंग 10–15 प्रतिशत कार्बन डाई ऑक्साईड गैस वाले वातावरण के साथ करें ।

कीट एवं रोग

लीची के वृक्ष में नाना प्रकार के कीट एवं रोग लगते हैं जो कि स्वस्थ फल उत्पादन में सबसे बड़ी बाधा हैं। जड़ तना, टहनी, पत्ती, फूल फल, कहने का तात्पर्य वृक्ष का ऐसा कोई भी भाग नहीं है जहां कीट का प्रकोप नहीं होता है। प्रमुख कीटों, रोगों एवं उनकी रोकथाम के बारे में संक्षिप्त चर्चा सारणी एक में की गयी है।

लीची की नियमित एवं गुणवत्ता पूर्ण उत्पादन के लिए सुझाव

लीची के पौधों में नियमित तथा गुणवत्ता पूर्ण उत्पादन के लिए अनेक उपाय सुझाए गये हैं जिनका सही ढंग से अनुपालन करने से लीची किसानों को अत्यधिक लाभ प्राप्त हो सकता है, कुछ प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित हैं।

1. पोषण तत्वों का ठीक ढंग से प्रबन्ध।
2. पौधों की समय पर आवश्यकतानुसार सिंचाई ।
3. फूल आते समय परागकण कीटों की संख्या में बढ़ोत्तरी।
4. पौधे में मजबूत और फल देने वाली शाखाओं का विकास।
5. फसल तोड़ाई के तुरंत बाद कांट–छांट ।
6. गुच्छों से अतिरिक्त फलों को काट कर हटना।
7. पौधों के थालों का ठीक ढंग से प्रबन्ध ।
8. पौधों के जड़ों अथवा तनों को पर्याप्त सहारा प्रदान करना।
9. कीट एवं रोग प्रबन्ध के कार्यक्रम को पूर्णरूपेण लागू करना।
10. मंजर आने के संभावित समय से 3 माह पहले पौधों में सिंचाई न करें तथा ऐसी अन्तःशस्य फसलें न लगाएं जिनमें पानी की आवश्यकता हो ।
11. मंजर आने के 30 दिन पहले पौधों पर जिंक सल्फेट (2 ग्राम/लीटर के घोल) का पहला एवं 15 दिन बाद दूसरा छिड़काव करने से मंजर एवं फूल अच्छे आते हैं।
12. फूल आते समय पौधों पर कीटनाशी दवा का छिड़काव न करें तथा बगीचे में पर्याप्त संख्या में मुधमक्खी के छत्ते रखें।
13. फल लगने के एक सप्ताह बाद प्लैनोफिक्स (2 मि. ली/5ली.) या एन.ए.ए. (20 मि.ग्राम/ली.) का एक छिड़काव करके फलों को झड़ने से बचाया जा सकता है।
14. फल लगने के 15 दिन बाद से बोरिक अम्ल (4 ग्राम/ली.) या बोरेक्स (5 ग्राम/ली.) के घोल का 15 दिनों के अंतराल पर तीन छिड़काव करने से फलों का झड़ना कम हो जाता है, मिठास में वृद्धि होती है, तथा फल के आकार एवं रंग में सुधार के साथ–साथ फल फटने की समस्या भी कम हो जाती है।

कुपोषण दूर करने में गेहूँ की उपयोगिता

एल. आर. मीना एवं आजाद सिंह पंवार
भारतीय कृषि अनुसंधान प्रणाली, मोदीपुरम, मेरठ–250110

कुपोषण का अर्थ है सही पोषण का अभाव। कुपोषण आज अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए चिन्ता का विषय बन गया है क्योंकि यह एक ऐसा कुचक्र है जिसके चंगुल में बच्चे माँ के गर्भ में ही फंस जाते हैं। उनके जीवन की नियति दुनिया में जन्म लेने से पहले ही तय हो जाती है। यह नियति लिखी जाती है गरीबी और भूखमरी की स्याही से। जिसका रंग स्याह उदास होता है और स्थिति गम्भीर होने पर जीवन की आशा की किरणें भी नहीं पनप पाती हैं। भारत में कुपोषण की दर 42.5 प्रतिशत है जिनमें अधिकतर अल्प पोषण के कारण हैं। कुपोषित महिलायें उन बच्चों को जन्म देती हैं जो पैदा होते ही मंद बुद्धि या पतले होते हैं। इस प्रकार कुपोषण अगली पीढ़ी में एक खौफनाक उत्तराधिकार के रूप में हस्तान्तरित होता है। ये बच्चे आने वाले वर्षों में वृद्धि की भरपाई नहीं कर पाते और जल्द ही बीमार पड़ जाते हैं। ये जल्द ही बीमार पड़ने, देर से स्कूल में प्रवेश करने, सीख नहीं पाने की सम्भावना से ग्रसित होते हैं और बड़े होकर कम उत्पादक व्यस्क बन जाते हैं। इस प्रकार कुपोषण एक गम्भीर समस्या है। कुपोषण के निहित कारणों, घरों में खाद्य असुरक्षा, महिलाओं एवं बच्चों की देख–रेख में कमी और आर्थिक विकास प्रमुख कारण है। इस संबंध में भारत सरकार द्वारा योजनाएँ चलाई जा रही है।

कुपोषण को दूर करने वाली गेहूँ की किस्में

न्यूट्री फार्म योजनान्तर्गत पोषक तत्वों से भरपूर फसलों की प्रजातियों के उत्पादन में वृद्धि करने एवं उन प्रजातियों से बने भोजन को ग्रहण करने पर विशेष बल दिया गया है। फसल गेहूँ की ये प्रजातियाँः एच.डी. 2967, शताब्दी, हलना, मगहर, देवा, उजियार, राज 4037, राज 3777, राज 3077, राज 4120 जो आयरन, मैंग्नीज व जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों से समृद्ध है जो कुपोषण को कम करने में सहायक हैं। गेहूँ प्रकृति का एक अनमोल उपहार है। गेहूँ की उपयोगिता उसके खाने के तरीके पर पूरी तरह निर्भर करती है। गेहूँ यदि साबूत अनाज एवं उसके उत्पाद के रूप में खाया जाता है तो यह किसी भी अन्य रूप में खाने से ज्यादा लाभदायक होता है। गेहूँ के पौधे का रस प्रकृति के गर्भ में छिपी औषधियों के अक्षय भण्डार में से मानव को प्राप्त एक भेंट हैं गेहूँ के पौधों के रस में रोगों के अन्मूलन की शक्ति है। गेहूँ का रस हमारे रक्त से बहुत मिलता–जुतला है। गेहूँ के पौधे में मैग्नीशियम अणु होते हैं, जबकि हमारे रक्त में लोहा होता है इस विशेषता के कारण गेहूँ के पौधे का रस रक्त व नाड़ियों के शोधन में अत्यन्त उपयोगी है।

तालिका 1: अन्य अनाजों की तुलना में गेहूँ में पाये जाने वाले पोषक तत्व की (प्रति 100 ग्राम अनाज में)

पोषक तत्व	फसल			
	चावल	गेहूँ	बाजरा	मक्का
प्रोटीन (ग्राम)	7.9	11.6	11.8	9.2
वषा (ग्राम)	2.7	2.0	4.8	4.5
राख (ग्राम)	1.3	1.6	2.2	1.2
क्रूड फाइबर (ग्राम)	1.0	2.0	2.3	2.8
काबोहाईड्रेट (ग्राम)	76.0	71.0	67.0	73.0
ऊर्जा (कैलोरी)	362	348	363	358
कैल्शियम (मि.ग्राम)	33	30	42	26
लौह (मि.ग्राम)	1.8	3.5	11.0	2.7
थियामिन (मि.ग्राम)	0.41	0.41	0.38	0.38
राइब्रोफ्लाविन (मि.ग्राम)	0.04	0.10	0.21	0.20
नियासिन (मि.ग्राम)	4.3	5.1	2.8	3.6

[1]प्रधान वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान) [2]निदेशक

चित्र 1: गेहूँ के पौधों से रस तैयार करने की अवस्था

गेहूँ के साबूत दानों में पाये जाने वाले प्रमुख गुण

1 यह कम्प्लेक्स कार्बोहाइड्रेट का अच्छा स्रोत है जो मानव शरीर को ऊर्जा प्रदान करने का सबसे प्रमुख स्रोत माना गया है।
2 यह शारीरिक वजन कम करता है।
3 यह मेटाबोलिक सिन्ड्रोम के जोखिम को कम करता है।
4 यह मैग्नीशियम का अच्छा स्रोत है। मैग्नीशियम शरीर में स्फूर्ति और उचित विकास के लिए जरूरी है।
5 यह हृदय रोग, कैंसर (मुख्यतया स्तन कैंसर), टाइप–2 डायबिटीज के खतरे को कम करता है और ब्लड भुगर को नियन्त्रित करता है।
6 इसमें पाया जाने वाला बीआईन, जीर्ण (बहुकालिक या पुराना) सूजन को कम करता है।
7 गालस्टोन के खतरे को कम करता है।
8 स्वस्थ शरीर के लिए आवश्यक विटामिन्स व मिनरल का अच्छा स्रोत है।
9 यह महिला स्वास्थ्य एवं जठरांत्र स्वास्थ्य में वृद्धि करता है।
10 यह बचपन के अस्थमा के खतरे को कम करता है।

चित्र 2: गेहूँ के साबूत दाने

गेहूँ में पाये जाने वाले औषधीय गुण

खाँसी

20 ग्राम गेहूँ के दानों को नमक मिलाकर 250 ग्राम जल में उबाल लें और एक तिहाई मात्रा में रहने पर गरम–गरम पी लें। ऐसा लगभग एक सप्ताह करने से खाँसी दूर हो जाती है।

खुजली

गेहूँ के आंटे को गूथकर त्वचा की जलन, खुजली, बिना पके फोड़े फुंसी और आग में झुलस जाने पर लगा देने से ठंडक पड़ जाती है।

बालतोड़

शरीर के किसी भी अंग पर किसी प्रकार मलकर बाल टूट जाने से फोड़ा हो जाता है, जो कि अत्यन्त दाहक और कष्टकर होता है। इसमें मुख से गेहूँ के दाने चबाकर बांधने से 2–3 दिन में भी लाभ हो जाता है।

पथरी

गेहूँ और चने को उबालकर उसके पानी को कुछ दिनों तक रोगी व्यक्ति को पिलाते रहने से मूत्राशय और गुर्दा की पथरी गलकर निकल जाती है।

गेहूँ के रवा से उपमा तैयार करनी की विधि

सामाग्री – गेहूँ रवा एक कप, तेल–एक चम्मच, सरसों का बीज–आधा चम्मच, चना दाल–14 चम्मच, कढ़ी पत्ता–4 से 5, नमक आवश्यकतानुसार।

विधि– कड़ाही में तेल डालकर गर्म करें, सरसों के बीज डालें, कुछ क्षण बाद उसमें चना डालकर रंग बदलने तक भूने। लाल मिर्च और कढ़ी पत्ते को डाल दें। गेहूँ के रवे डालकर एक मिनट तक कम आँच पर भूने, दो कप पानी डालकर पानी के सूख जाने तक अच्छी तरह पकायें। सांभर, दाल या किसी भी करी के साथ परोसें। यह स्वास्थ्यप्रद व स्वादिष्ट भी है।

सब्जियों के विभिन्न तत्व

आत्मानन्द त्रिपाठी एवं जे. के. पाण्डेय*
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, उत्तर प्रदेश
*भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

देश में खाद्यान्न सुरक्षा के साथ–साथ पोषण सुरक्षा भी आवश्यक है। सब्जियाँ मानव भोजन में पोषक तत्वों की आपूर्ति हेतु सबसे ज्यादा सस्ती एवं सुलभ स्रोत के रूप में उपलब्ध होती हैं। सब्जियों से केवल पोषण सुरक्षा ही नहीं प्राप्त होती बल्कि इनकी खेती से ग्रामीण अंचलों में रोजगार एवं आय के साधन भी सृजित होते हैं। भारत का विश्व में सब्जी उत्पादन में दूसरा स्थान है, जिसका विश्व में सब्जी के कुल उत्पादन में लगभग 10.7 (165 मिलियन टन) प्रतिशत का योगदान है फिर भी अपने देश में खेती योग्य भूमि के 1.5 प्रतिशत क्षेत्र में ही सब्जियाँ लगाई जाती हैं। पिछले साठ सालों में सब्जियों के अन्तर्गत खेती के क्षेत्रफल में 3.33 गुना, उत्पादन में 9.87 गुना एवं उत्पादकता में 2.99 गुना की वृद्धि हुई है। हमारे देश में सब्जी के कुल उत्पादन का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा तुड़ाई, कटाई के उपरान्त भण्डारण की पर्याप्त सुविधा न होने के कारण नष्ट हो जाता है। अतः द्वितीयक कृषि के माध्यम से कटाई उपरान्त प्रोद्यौगिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण की तकनीकियों द्वारा सब्जियों का मूल्यवर्धन के साथ– साथ टिकाऊ भण्डारण की सहायता से वायदा बाजार में कृषक अपने उत्पादों का अधिक मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। सब्जी फसलों की खेती के उन्नत उत्पादन की तकनीकियों को कृषकों तक पहुँचाया जाना समय की माँग है जिससे अन्नदाता, अपने किसान उत्पादन लागत को कम कर अधिक उत्पादन के माध्यम से लोगों का पेट एवं अपनी जेब भी भर सकें। सब्जियों की संरक्षित एवं जैविक खेती मे किसानों के जीवनयापन हेतु अपार संभावनायें हैं। जलवायु परिवर्तन के परिदृश्य में कृषक जलवायु परिवर्तन सह–नवोन्मेषी सब्जी उत्पादन की तकनीकियों को अपनाकर सब्जी फसलों की अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं ।

हमारे देश में विभिन्न प्रकार की जलवायु परिस्थितियों एवं मृदा विविधता के कारण मौसम के अनुकूल विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ उगाई जाती हैं। हमारे देश में 42 से भी ज्यादा प्रकार की सब्जियाँ उगायी जाती हैं। जिनमें आलू वर्गीय, कद्दू वर्गीय, गोभी वर्गीय, दलहनी सब्जियों, पत्तीवर्गीय सब्जियों एवं भिण्डी का निर्यातक स्तर पर उत्पादन किया जा रहा है। वर्तमान परिदृश्य में कृषक केवल धान एवं गेहूँ की खेती से अपनी जीविका एवं आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकते। अतः सब्जियों की खेती को समन्वित कृषि जैसे धान्य फासलों दलहनों, तिलहनों, फल–फूल, मशरूम की खेती, पशुपालन एवं मत्स्य पालन में समावेशित करना अति आवश्यक है। जिससे देश की खाद्य पोषण की सुरक्षा के साथ–साथ कृषकों को आत्म सम्मान एवं आत्म सुरक्षा भी मिल सके।

फार्मर फर्स्ट, आर्या, स्टूडेण्ट रेडी, मेरा गाँव मेरा गौरव, सांसद आदर्श गाँव योजना– इन कार्यक्रमो के अन्तर्गत सब्जी फसलों की घरेलू व निर्यातक स्तर पर खेती करने वाले किसानों की माँग के अनुसार शोध कार्यों की दिशा निश्चित कर अधिक उपज वाली रोग व कीट रोधी प्रजातियों के बीज का उत्पादन कर किसानो को उपलब्ध कराया जाना चाहिये। गाँवों में कृषि प्रसार के माध्यम से उन्नत सब्जी उत्पादन की तकनीकियों को कृषकों तक प्रशिक्षण एवं प्रक्षेत्र प्रदर्शन के माध्यम से पहुँचा कर मृदा की उर्वरता को बनाये रखते हुये प्रति इकाई क्षेत्र से सब्जी फसलों की अधिक उपज प्राप्त हो सके।

सरकारी, सहकारी, वाणिज्यिक संगठनो की सहभागिता के माध्यम से सब्जी फसलों के बीज उत्पादन मे आत्मनिर्भरता प्राप्त करने हेतु प्रयास होना चाहिये जिससे कृषकों को गुणवत्ता युक्त बीज प्राप्त हो सके। कृषि उपयोगी सूक्ष्मजीवों एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों का सब्जी फसलों में प्रयोग कर कम लागात वाली टिकाऊ व जैविक सब्जी उत्पादन मे सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

वर्तमान में बदलती हुई जलवायु परिस्थितियों में सब्जी फसलों में कीटों एवं रोगों के प्रकोप अधिक होने के कारण प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक सब्जी उत्पादन के लिये कृषकों को नाशीजीव रसायनों के सुरक्षित प्रयोग की तकनीक से अवगत कराने की आवश्यकता है। सब्जी फसलों में कई प्रकार के रोगों एवं कीटों का प्रकोप होता है। इन कीटों एवं रोगों के कारण प्रतिवर्ष 30 प्रतिशत तक की आर्थिक क्षति (रूपया 1,20,000 करोड़) होती है। हमारे देश में सब्जी

फसलों में नाशीजीव रसायनों का प्रयोग 0.678 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर है। नाशीजीव रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से नये कीटों एवं रोगों का उद्भव, द्वितीयक कीटों एवं रोगों का प्रकोप एवं नाशी जीवरसायनों के प्रति अवरोधिता भी बढ़ जाती है। नाशीजीव रसायनों का हानिकारक प्रभाव परागणकर्ता कीटों एवं जैव नियंत्रकों पर भी पड़ता है। अतः नाशीजीवों के प्रबंधन हेतु अनुशंसित नाशीजीव रसायनों की आवश्यक मात्रा का सुरक्षित प्रयोग करने से सब्जी फसलों के उत्पादों में नाशीजीव रसायनों के अधिकतम संचयन में कमी व पर्यावरण प्रदूषण से बचाव, कीटों एवं रोगजनकों में नाशीजीवों के प्रति प्रतिरोधिता भी कम होगी। नाशीजीव रसायनों के सुरक्षित प्रयोग से ही गुणवत्ता युक्त सब्जियों का उत्पादन संभव है जिससे बढ़ती हुई जनसंख्या हेतु खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ पोषण सुरक्षा की चुनौती का भी समाधान संभव होगा।

इसके अलावा बेमैसमी सब्जियों की खेती, खाद्य प्रसंस्करण एवं परीक्षण के माध्यम से बहुपयोगी/पौष्णिक एवं औषधीय महत्त्व की सब्जियों को वर्श भर उत्पादन कर बाजार उपलब्ध कराया जा सकता है। द्वितीयक कृषि एवं रोजगार सृजन के दृष्टिकोण से अन्य फसलों के तुलना मे सब्जी फसल की खेती में खाद्य प्रसंस्करण तकनीकियों के प्रयोग से मूल्य वर्धन एवं रोजगार के नये अवसरों की संभावना ज्यादा होती है जिससे कृषकों को आर्थिक स्वावलंबन एवं जीवन यापन की सुरक्षा प्राप्त हो सके।

सब्जियों का स्वास्थ्यवर्धक, पोषणीय एवं औषधीय महत्त्व

सब्जियों से विभिन्न प्रकार के आवश्यक पोषक तत्वों एवं खनिज लवणों की प्रचूर मात्रा में प्राप्ति होती है। सब्जियाँ सूक्ष्म तत्व जनित कुपोषण को दूर करने में सहायक होती हैं। सब्जियों का औषधीय महत्व होने के कारण औषधीय खाद्य पदार्थ के रूप में प्रयोग की जा सकती है। इस संदर्भ में सब्जियों के उत्पादन एवं उनकी बाजार में उपलब्धता को सुनिश्चित करना अति आवश्यक हो गया है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद की अनुशंसा के अनुसार भोजन में लगभग 300 ग्राम सब्जी (जिसमें 100–125 ग्राम पत्तियों वाली, 80–120 ग्राम अन्य दूसरी सब्जियाँ तथा 85–100 ग्राम जड़ों वाली सब्जियाँ) प्रतिदिन प्रति व्यक्ति को मिलनी चाहिए परंतु इनकी उपलब्धता केवल 240 ग्राम ही हो पाती है। सब्जियों की फसलों के उत्पादन में कम समय, प्रति इकाई क्षेत्र से ज्यादा उपज व अधिक आय की प्राप्ति होने के कारण किसान एक वर्ष में सब्जियों की कई फसल ले सकते हैं।

सब्जियाँ विटामिन, प्रति ऑक्सीकारक (एंटी ऑक्सिडेंट) पदार्थों एवं खनिज लवणों का मुख्य स्रोत होती हैं। सब्जियाँ ताजे एवं प्रसंस्कृत उत्पाद के रूप में वर्ष भर बाजार में उपलब्ध होती हैं। इनका औषधीय महत्व अधिक होता है अतः स्वस्थ जीवन जीने हेतु इनका भोजन में प्रयोग अवश्य करें। सब्जियों के सेवन से आनुवंशिक एवं जीवनशैली से उत्पन्न होने वाली कई प्रकार की बिमारियों को ठीक किया जा सकता है। सब्जियाँ मनुष्यों में कई प्रकार की जीवन शैली से जुड़ी बिमारियों जैसे कैंसर, हृदयाघात, मधुमेह, ग्लूकोमा आदि को नियंत्रित करने में सहायक होती है। सोलेनेसी (आलू वर्गीय) कुल की सब्जियों में टमाटर, बैंगन, शिमला मिर्च आदि में दोनों पोषणीय एवं औषधीय गुण होता है। टमाटर में लाइकोपीन नामक वर्णक होता है जिसका कार्य प्रतिऑक्सीकारक का होता है। बैंगन में फिनालिक एवं फ्लेवोनायड की अधिकता होती है अतः इनका कार्य मानव पोषण में मधुमेह रोधी के रूप में होता है। शिमला मिर्च में कैप्सिसिन, फ्लेवोनायड एवं एस्कार्बिक अम्ल प्रतिऑक्सीकारक के रूप में कच्चे व पके फलों में उपस्थित होते हैं। जड़ वाली फसलों में लाल गाजर का प्रयोग 'हलवा' बनाने में किया जाता है जो कि विटामिन–ए का विपुल स्रोत है। इसके अलावा गाजर में अल्फा–कैरोटीन एवं बीटा–कैरोटीन, ल्यूटीन एवं लाइकोपीन पाया जाता है। कैरोटीन एवं ल्यूटीन मनुष्य में आँखों के मोतियाबिंद जबकि लाइकोपीन हृदयाघात से बचाव में सहायक होते हैं। काला गाजर फिनालिक, एन्थोसायनिन एवं अल्फा–ग्लूकोसाइडेज का प्रमुख स्रोत होने के कारण मानव में मधुमेह को नियंत्रित करने का काम करते हैं।

कद्दूवर्गीय कुल के सब्जियों का अपरिपक्व एवं परिपक्व फल सब्जी के रूप में खाया जाता है। वनस्पति जगत में कद्दूवर्गीय सब्जियों के अन्तर्गत लौकी एवं खीरा में कोलीन नामक रसायन पाया जाता है जो तंत्रिका तंत्र (नर्वस सिस्टम) के उद्दीपन का कार्य करता है। करेले के रस में यौगिक अम्ल, कैफिक अम्ल एवं कैटेकिन होता है जो मधुमेह रोग में लाभकारी होता है। खीरा खाने से पेट के विकार एवं मधुमेह में भी लाभ मिलता है। तरोई के बीजों से

प्राप्त तेल का उपयोग चमड़ी के विभिन्न रोगों को ठीक करने में किया जाता है। छप्पन कद्दू के फलों की सब्जी पाचन क्रिया को बढ़ाती है तथा पेट के विकारों को दूर करता है। काशी फल/कद्दू (कुम्हड़ा) का पका फल भी सब्जी के रूप में प्रयुक्त होता है। कद्दू एवं लौकी के फल, फूल और शाखाओं के अग्र भाग भी सब्जी की भाँति खाये जाते हैं। कद्दू में विटामिन, खनिज लवण प्रतिऑक्सीकारक और जैव सक्रिय यौगिक जैसे बीटा–कैरोटीन एवं ल्यूटिन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। कद्दू के प्रोटीन युक्त पॉलीसैकेराईड्स रक्त में कोलेस्टरॉल की मात्रा को एकत्रित होने में कमी लाते हैं। तरबूज, खरबूज व ककड़ी को फल के रूप में खाया जाता है। खीरा व ककड़ी से सलाद बनाया जाता है। लौकी से बर्फी, खीर और जूस बनाया जाता है। इन सब्जियों में बीटा कैरोटीन प्रतिऑक्सीकारक पदार्थ पाये जाने के कारण औषधीय महत्व भी होता है।

ब्रोकली, फूलगोभी एवं बंदगोभी में प्रचुर मात्रा में विटामिन, खनिज लवण के अलावा खाद्य तन्तु पाये जाते हैं। फूलगोभी से सेलेनियम एवं अल्फा टोकोफेराल की भी भोजन में पूर्ति होती है। बंदगोभी में विटामिन–सी, ग्लूकोसिनोलेट, फिनोलिक और कैरोटिनॉयड की उपस्थिति के कारण यह मानव के स्वास्थ्य के लिये लाभदायी एवं कई रोगों से बचाव में सहायक होती है। दलहन वर्गीय सब्जियाँ आवश्यक अमीनो अम्लों की प्राप्ति के लिये उपयोग में लाई जाती है।

सब्जियों में विषाक्त तत्व

गुणवत्तायुक्त सब्जी उत्पादन में सबसे बड़ी समस्या कीटों एवं रोगों के प्रकोप व उनके नियंत्रण एवं सब्जी उत्पादों में कीटनाशी एवं अन्य दवाओं के अवशेष प्रबंधन की होती है। शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में सब्जी उतपादन हेतु जगह का चयन एवं नाशीजीव रसायनों का सुरक्षित प्रयोग करना आवश्यक होता है। समस्याग्रस्त भूमियों जैसे कि कल–कारखानों से निकलने वाले गंदे पानी से सिपेज या फिर ऐसी पानी से सिंचाई से सब्जियों की खेती करने से उत्पादन कम प्राप्त होता है एवं सब्जी उत्पादों में कई प्रकार के मानव स्वास्थ के लिये हानिकारक भारी तत्वों जैसे मर्करी (पारा), कॉपर, जिंक, मैंग्नीज, कोबाल्ट, मालिब्डेनम, आर्सेनिक, क्रोमियम, कैडनियम आदि का संग्रहण होता है। यदि शहरी सीमावर्ती क्षेत्रों में संरक्षित सब्जी उत्पादन को मौसम व बेमौसम में अपनाया जाय तो सब्जी उत्पादों में हानिकारक रसायनों एवं भारी तत्वों के संचयन को कम किया जाना अति आवश्यक है। बदलती हुई जलवायवीय परिस्थितियों व बढ़ती हुई जनसंख्या के पोषण एवं रोजगार के साधन हेतु संरक्षित सब्जी उत्पादन के अन्तर्गत क्षेत्रफल बढ़ाने की आवश्यकता है।

सब्जियों से खनिज लवणों की प्राप्ति होती है परन्तु यदि लेड, कैडनियम, आर्सेनिक, मर्करी जैसे भारी तत्वों का संचयन हो तो मानव स्वास्थ्य के लिये विषाक्त एवं हानिकारक होता है। क्रोमियम, कोबाल्ट, निकिल मानव के स्वास्थ्य में अहम् भूमिका निभाते हैं परन्तु इनकी ज्यादा मात्रा शरीर में कई प्रकार के उपापचयी अनियमिततायें भी उत्पन्न करते हैं।

कैडिनियम मानव शरीर में डी एन ए को उत्परिवर्तित करता है। इससे मानव के प्रजनन तंत्र, हार्मोन, ग्रंथि तंत्र एवं शरीर की अस्थियों में कैल्शियम के संग्रहण में कमी आती है। निकल शरीर में एंजाईम के उत्प्रेरक का कार्य करता है परन्तु डी एन ए में उत्परिवर्तन का भी कार्य करता है। लेड यह मानव के यकृत, वृक्क, तिल्ली एवं फेफड़ों, तंत्रिका तंत्र में व्यवधान उत्पन्न करता है।

मानव अपने भोजन में सब्जियों का उपयोग अधिक करता है अतः तुलनात्मक रूप से शरीर में भारी तत्वों का प्रवेश सब्जियों के माध्यम से अधिक होता है। सब्जियों में भारी तत्वों के ज्यादा संचयन की मात्रा से मनुष्य के स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। भारी तत्वों के शरीर में एकत्रित होने से वृक्क, यकृत, हृदय, अस्थि एवं तंत्रिका तंत्र संबंधी समस्यायें बढ़ जाती है। कैडमियम एवं आर्सेनिक जैसे तत्व कैन्सर जैसी असाध्य बीमारी को जन्म देते हैं। मर्करी एवं लेड से बच्चों के स्वास्थ्य में हानिकारक प्रभाव पड़ता है। कुछ भारी तत्व जैसे कापर, जिंक, क्रोमियम, मैंग्नीज आदि पोषण की दृष्टि से कम मात्रा में आवश्यक होते हैं परन्तु इनकी अनुसंसित सीमा से ज्यादा मात्रा मनुष्य के लिये विषैला हो जाता है। शहरों के अवशिष्ट, कृषि रसायनों का अंधाधुंध प्रयोग, प्रदूषित जल का बहाव, भारी तत्व वाले कीट एवं रोगनाशी रसायनों के प्रयोग के कारण मृदा में प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। जब इन समस्याग्रस्त भूमियों में सब्जियों की खेती की जाती है या प्रदूषित जल

का सिंचाई में उपयोग किया जाता है। तब इनमें हानिकारक भारी तत्वों का संचयन ज्यादा होता है। इसके अलावा सब्जियों के संग्रहण एवं यातायात के दौरान भी सब्जियों में लेड जैसे भारी तत्वों का संचयन पर्यावरण प्रदूषण के कारण बढ़ जाता है। अतः सब्जियों के उत्पादन में इन बातों का विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

नाशीजीव रसायनों के अधिकतम अवशेष संचयन के आधार पर सब्जी फसलों के उत्पाद की तुड़ाई कर अवधि सुनिश्चित की जाती है। तुड़ाई की प्रतीक्षा अवधि से अभिप्राय नाशीजीव रसायनों के प्रयोग के बाद का वह कम से कम समय जिसके अंतराल के बाद ही सब्जी उत्पादों की तुड़ाई की जाती है ऐसा करने से रसायनों की विषाक्तता भी खत्म हो जाती है एवं उनका संचयन भी अधिकतम अवशेष की मात्रा से कम हो जाता है। यदि नाशीजीव रसायनों की मात्रा सब्जी उत्पादों में अधिकतम संचयन से ज्यादा होगी तो इन उत्पादों का अंतर्राष्ट्रीय बाजार में निर्यात व विपणन नहीं हो सकेगा। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 'कोडेक्स एलमेण्टेरियस' का गठन नाशीजीव रसायनों के खाद्य उत्पादों में अधिकतम अवशेष संचयन की सीमा के निर्धारण हेतु किया है। देश में 'खाद्य सुरक्षा मानक अथॉरिटी' द्वारा नाशीजीव रसायनों की खाद्य उत्पादों में अधिकतम सीमा का निर्धारण किया जाता है।

किसानों को सब्जी फसलों में कीटों एवं रोगों के प्रबंधन हेतु अनुशंसित नाशीजीव रसायनों का ही प्रयोग करना चाहिये। प्रतिबंधित रसायनों का प्रयोग नहीं करें। नाशीजीव रसायनों का चक्रीय क्रम में उपयोग करना चाहिये। संयुक्त उत्पाद वाले नाशीजीव रसायनों का अनुशंसित मात्रा में ही प्रयोग करना चाहिये। जिन नाशीजीव रसायनों की विषाक्तता एवं प्रतीक्षा समयावधि अधिक होती है उनका कम से कम प्रयोग करें। संक्षेप में, गुणवत्तायुक्त सब्जी उत्पादन में अच्छी कृषि क्रियाओं के साथ–साथ जीवनाशी रसायनों का सुरक्षित प्रयोग करें।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड – ''किसानों के लिए बेहतर हथियार''

पंकज कुमार सिंह, प्रियंका चन्द्रा, राजेन्द्र कुमार, अनुज कुमार एवं सुभाष गिल

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

"कृषि रेव महालक्ष्मी" अर्थात् कृषि ही सबसे बड़ी लक्ष्मी है। कृषि युगों–युगों से भारतीय जनसंख्या का मुख्य आधार रही है। क्योंकि कृषि करोड़ों भारतीय जनसंख्या का मुख्य आधार रही है। भारतीय कृषि की गाथा, रोजगार सृजन, आजीविका, खाद्य, पोषण और पर्यावरण सुरक्षा में अपनी बहु आयामी सफलता के लिए एक वैश्विक प्रभाव के साथ बहुत ही शानदार रही है। जैसा कि हम जानते हैं कृषि और इससे संबंधित गतिविधियाँ भारत में सकल घरेलू उत्पाद में 13 फीसदी का योगदान करती है। हरित क्रान्ति से इसमें दिशा परिवर्तन के पहले चरण का शुभारंभ हुआ था। आज भारत गेहूँ, चावल, चीनी, मूंगफली के साथ–साथ कॉफी, नारियल और चाय जैसी नकदी फसलों के मामले में दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है।

भारत की दृष्टि अब दूसरी हरित क्रान्ति के लिए पूर्वी भारत पर केन्द्रित है। प्रधानमंत्री ने उच्च गुणवत्ता युक्त उत्पादकता और किसानों के कल्याण जैसे दोहरे लक्ष्यों पर ध्यान केन्द्रित करने के साथ–साथ कृषि में निवेश बढ़ाये जाने की आवश्यकता पर समय–समय पर जोर दिया है।

सम्पूर्ण परिदृश्य में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भारत सरकार ने कृषक समुदाय के लिए जागरूकता अभियान और कृषि ज्ञान में वृद्धि पर जोर दिया है। न्यूनतम समर्थन मूल्य में सुधार और बेहतर सिंचाई एवं ग्रामीण विद्युतीकरण जैसी मूलभूत सुविधाएँ मुहैया कराने के अतिरिक्त सरकार ने फरवरी, 2015 में एक योजना का शुभारंभ पर विशेष जोर दिया वह है–"मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना" इस योजना के लिए फसल के अनुसार परामर्श दिया जाएगा। इसका उद्देश्य कृषि आगतों (इनपूट) के विवकेपूर्ण उपयोग के माध्यम से उत्पादकता में सुधार के लिए किसानों को सहायता प्रदान करना है। यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण पहल किसानों को अपनी फसलों की उत्पादकता में सुधार के साथ–साथ विविधीकरण के लिए भी एक सुनहरा मौका प्रदान करेगी। इसके माध्यम से देश की खाद्य सुरक्षा को भी सुनिश्चित करने के लिए निश्चित रूप से महत्त्वपूर्ण योगदान होगा।

मृदा स्वास्थ्य स्थिति के बारे में जागरूकता से लाभः– मृदा स्वास्थ्य स्थिति के बारे में जागरूकता और उर्वरकों की भूमिका से पूर्वी भारत में भी अधिक खाद्यान्न उत्पादन में सहायता के साथ–साथ मध्य प्रायद्वीपीय भारत में उत्पादन में हो रही गिरावट को दूर करने में भी मदद मिलेगी।

इसके अलावा पूर्वी भारत में धान और गेहूँ में उत्पादन वृद्धि से स्थानीय स्तर पर खाद्यान्न भंडार बनाने के लिए एक अवसर मिलेगा। उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र में प्रायः यह देखा गया है कि किसान खासकर नत्रजन उर्वरकों का संस्तुत मात्रा से अधिक प्रयोग करते है। जिससे मृदा का स्वास्थ्य व्यापक रूप से प्रभावित हुआ है। किसान नत्रजन और फास्फोरस का प्रयोग तो कर रहे हैं, परंतु पोटाश नगण्य है। अतः किसानों को सतुंलित मात्रा में उर्वरक डालने से फसल उत्पादन में होने वाले फायदे व मृदा स्वास्थ्य पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभाव से ज्ञात करना आज की आवश्यकता बन गई है। देश के कई हिस्सों में फसल सघनता (क्रापिंग इंटेनसीटी) लगभग 300 प्रतिशत है। उन मृदाओं का स्वास्थ्य संवर्धन देश की खाद्यान्न सुरक्षा व टिकाऊ कृषि प्रणाली के नितांत आवश्यक है। नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश के अतिरिक्त अन्य पोषक तत्वों का लगातार मृदा से दोहन हो रहा जिनकी आपूर्ति किसान आमतौर पर नहीं करता है। अतः मृदा जाँच के माध्यम से उसके प्रत्येक खेत की सेहत की वास्तविक जानकारी के चित्रण से वह समय रहते सुधारात्मक उपाय

कर खेत की उर्वराशक्ति बरकरार रख सकता है, तथा इसकी उपज भाक्ति भी बढ़ा सकता है। जो टिकाऊ खेती के लिए अति आवश्यक है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना का शुभारंभः– भारत के प्रधानमंत्री द्वारा इस योजना की शुरूआत गुजरात राज्य से अपने मुख्यमंत्री काल के दौरान एक सफल मॉडल के तौर पर सामने आने के बाद किया गया था।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड तंत्र की आवश्यकता क्योंः– सही मायनों में देखा जाए तो कृषि के अंतर्गत नई भूमियों को लाने के लिए किसी भी ठोस कदम की अनुपस्थिति के साथ कृषि में तेजी से उत्पादन के हस्तक्षेपों ने पहले से फसलों को प्रभावित किया है, और कृषि भूमियों से मूल्यवान पोषक तत्वों से वंचित किया है। कृषि विशेषज्ञ एवं वैज्ञानिकों के अनुसार यदि मृदा में आवश्यक सुधारात्मक कदम नहीं उठाए गए तो अगले 10 वर्षों में भोजन की कमी भी हो सकती है।

एम.एस. स्वामीनाथन के अनुसार "विभिन्न प्रकार की फसलों की खेती के लिए विकल्प की आवश्यकता से अत्यधिक मात्रा में अनाजों क साथ अधिक दाल और हरी सब्जियों को उगाया जा सकता है, परिणामस्वरूप ये चीजें भूमि में प्राकृतिक बदलाव ला सकती है। विभिन्न राज्यों में किए गए एक अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि दालें, सूरजमुखी, बाजरा, चारा और सब्जियों जैसी वैकल्पिक फसलों को प्रोत्साहन की अति आवश्यकता है। इस प्रकार हम यह समझ सकते हैं कि मृदा स्वास्थ्य कार्ड निश्चित रूप से देश की कृषि में क्रान्तिकारी एवं परिवर्तन लाने में सराहनीय योगदान देना।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना से कैसे जुड़ा जाएः– कुछ राज्य पहले से ही मृदा स्वास्थ्य कार्ड जारी कर रहे हैं, लेकिन यह देखा गया था कि राज्यों में मिट्टी के नमूने लेने, परीक्षण और कार्ड वितरण के मामले में समान मानक नहीं थे। इन सभी पर एक समग्र दृष्टिकोण अपनाते हुए केन्द्र सरकार ने एक "मृदा स्वास्थ्य कार्ड पोर्टल" का शुभारंभ करने जैसे सही कदम उठाए हैं। यह मृदा नमूनों के पंजीकरण, मृदा नमूनों के परीक्षण परिणामों को दर्ज करने और उर्वरक सिफारिशों के साथ मृदा स्वास्थ्य कार्ड (एस. एच.सी) को बनाने के लिए उपयोगी साबित होगा। मई 2015 में भारत सरकार के कार्यालय का एक वर्ष पूर्ण होने पर कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री ने कहा कि यह एक एकल जेनरिक, समान, बेस आधारित सॉफ्टवेयर है जिस पर www.soilhealth.dac.gov.in लिंक के माध्यम से पहुँचा जा सकता है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना से किन समस्याओं का समाधानः– सल्फर, जिंक और बोरान जैसे पोषक तत्वों की कमी खाद्य उत्पादकता बढ़ाने के एक सीमित तत्व बन चुके हैं। मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना इन समस्याओं का समाधान करेगी। साथ ही मृदा में जिन पोषक तत्वों की कमी है उसकी भी जानकारी इस कार्ड के माध्यम से मिल जाएगी। सिफारिश के अनुसार उन पोषक तत्वो की आपूर्ति कर किसान अपने मृदा का स्वास्थ्य सामान्य कर सकता है तथा टिकाऊ खेती की परिकल्पना को साकार कर सकता हैं।

जईः उत्पादकता एवं उपयोगिता

मगन सिंह, वी.के. मीणा, राजेश कुमार मीणा, सूमी काला, राकेश कुमार एवं दीपा जोशी

चारा अनुसंधान एवं प्रबंधन केन्द्र, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल–132001 (हरियाणा)

जई दाने वाली चारा फसलों में से शीत ऋतु/रबी में बोई जाने वाली एक चारा फसल है। यह देश के उत्तरी, मध्य एवं पश्चिमी क्षेत्रों में बोई जाती है। यह एक मुलायम एवं पशुओं के लिए स्वादिष्ट चारे की फसल है। यह सरसों, बरसीम या सेंजी के साथ उगाई जा सकती है या इसे अलग से भी उगाया जा सकता है। इसे अन्य फसलों के साथ उगाने से चारे की गुणवत्ता बढ़ती है। जई से 'हे', 'साईलेज' तथा सूखा भूसा भी बनाया जाता है जो कि चारे की कमी के समय पशुओं को खिलाने के काम आता है। इसका दाना घोड़े, भेड़, बकरियों एवं मुर्गियों को खिलाया जाता है।

बुवाई के समय

सामान्य रूप से इसकी बुवाई मध्य अक्तूबर से नवम्बर अंत तक देश के उत्तर पश्चिमी एवं पूर्वी क्षेत्रों में की जाती है।

अनुकूल वातावरण

जई की खेती के लिए गेहूँ की जैसी जलवायु होनी चाहिए। जई की अच्छी वृद्धि के लिए लम्बे समय तक ठंडे वातावरण की आवश्यकता होती है। यह मैदानी एवं पहाड़ी दोनों क्षेत्रों में आसानी से उगाई जा सकती है। इसकी वृद्धि के लिए ठंडे मौसम का तापमान 15–25^{0} सेंटीग्रेड उपयुक्त होता है। यह फसल काफी हद तक कोहरे को सहन करने की क्षमता रखती है।

बीज दर

चारे की फसल हेतु इसके बीज की मात्रा प्रति हैक्टर में 80–100 कि.ग्रा. की आवश्यकता होती है तथा बीज वाली फसल के लिए 70–80 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है। इसकी बुवाई के लिए कतार की दूरी 20–25 से.मी. पर उचित होती है।

उत्पादन क्षमता

चारे के लिए इसकी कटाई बुवाई के 60 दिन के बाद जब कुल पौधों की आधी संख्या में फूल आ जाये तब करनी चाहिए। बहु कटान वाली किस्म को 50 दिन के अंतराल पर काट लें। एक कटान वाली किस्म से 30–45 टन/है. हरा चारा प्राप्त होता है तथा दो कटान वाली किस्म से 40–55 टन/है. हरा चारा तथा बहु कटान वाली किस्म से 45–60 टन/है. हरे चारे का उत्पादन होता है। दाने के लिए छोड़ी जाने वाली फसल मात्र एक कटान से 25 टन/है. हरा चारा तथा 2.0–2.5टन/है. दाना एवं 2.5–3.0टन/है. भूसा प्राप्त किया जा सकता है।

उपयुक्त किस्में

जई की चारे के लिए बोई जाने वाली किस्में निम्नवत हैं

एक कटान वाली

ओ.एस.–6, बुंदेल जई–822, ओ.एस.–7,

बहु कटान वाली

एच.एफ.ओ.–114, केन्ट, ओ.एल.–9, आई.जी.एफ.आर. आई.एस.–54, यू.पी.ओ.–94, यू.पी.ओ.–212, बुंदेल जई–992, बुंदेल जई–2004, बुंदेल जई–99–1 तथा आर. ओ.–19, पालमपुर–1 आदि।

उपयोगिता

1. **पोषण गुण** :– प्रत्येक 100 ग्रा. जई के दाने में 69.8 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 11.6 ग्राम प्रोटीन, 5.2 ग्राम वसा, 10.4 ग्राम क्रूड फाइबर, 2.9 ग्राम पोषक पदार्थ तथा 372 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। जई के चारे की गुणवत्ता शुष्क पदार्थ के आधार पर इसमें 10.0–11.5 प्रतिशत प्रोटीन, 55–63 प्रतिशत उदासीन डीटरजेंट फाइबर, 30–32 प्रतिशत अम्लीय डीटरजेंट फाइबर, 22–23.5 प्रतिशत सेलुलोज तथा 17–20 प्रतिशत हेमिसेलुलोज

2. **जई उत्पादः**– जई बाजार में मुख्य उत्पादों के रूप में उपलब्ध है– जई की दलिया, सूजी, बिस्कुट (फाइबर युक्त), जई नूडल्स, कॉर्नफ्लेक्स, डोसा आदि। जई से स्लाइस ब्रेड, बन्द, केक, हलवा, लपी बनती है।

3. **भोजन के रूप में**

- जई से कम कैलोरी ऊर्जा, अधिक प्रोटीन एवं फाइबर प्राप्त होता है।
- जई से रक्त चाप नियंत्रित होता है।
- जई मोटापा को कम करने में सहायता करती है।
- जई के हरे चारे को पशुओं को खिलाया जाता है।
- इसके दाने को पीसकर करके घोड़े, भेड़, बकरियों एवं मुर्गियों को खिलाया जाता है।
- जई के दाने को अन्य फसलों के दानों के साथ मिलाकर खिलाया जाता है।
- जई के भूसे को हरे चारे के साथ मिलाकर पशुओं को खिलाया जाता है।
- इसे रोटी के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है परन्तु अच्छा स्वाद न होने के कारण प्रचलित नहीं हो सकी है।
- इसकी नूडल्स भी बनती है।
- इसकी दलिया भी बनती है।
- इससे तैयार फाइबर युक्त बिस्कुट भी खाया जाता है।
- इसे रेशे युक्त भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है।

4. **अन्य उपयोगः**– जई की भूसी ईंधन के रूप में प्रयोग की जाती है। इससे इंडस्ट्री में एक रासायनिक पदार्थ फरफुराल उत्पन्न किया जाता है जिससे नायलॉन, रबर, रेजिन गोंद तथा लुब्रिकेंट तेल आदि को बनाया जाता है तथा इसका उपयोग सौन्दर्य प्रसाधन जैसे त्वचा के लोशन बनाने आदि में किया जाता है।

5. **जई का पिछड़ापनः**– जई की खेती की लागत गेहूँ या धान के मुकाबले में काफी किफायती है और बाजार में इसकी मांग के बावजुद इसका उत्पादन निम्न कारकों से काफी पिछड़ा है।

- किसानों में जागरूकता का अभाव
- गेहूँ की अपेक्षा इसके अनाज का कम दाम निर्धारित करना।
- इसमें ग्लूटेन की मात्रा कम होने के कारण इसकी रोटी को कम पसंद करना।
- धान तथा गेहूँ की अपेक्षा जई की कम पैदावार होती है।

पूर्व प्रजनन द्वारा गेहूँ में सुधार

आशीष ओझा, भुदेव सिंह त्यागी, ज्ञानेन्द्र सिंह, सचिन देशवाल एवं मधु कुमारी

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

गेहूँ विश्व में सबसे अधिक खाया जाने वाले अनाजों में से एक है। यह एक प्रकार की घास (ट्रीटीकम) है और दुनिया भर में इसकी अनेक किस्में उगाई जाती है। चपाती/ब्रैड गेहूँ या आम गेहूँ सबसे अधिक प्रचलित प्रजाति है, इसके अतिरिक्त कई अन्य निकटतम सम्बन्धित प्रजातियाँ जैसे ड्यूरम, वर्तनी, एम्मर व खुरासान गेहूँ इसमें शामिल हैं। गेहूँ एंटीऑक्सीडेंट, विटामिन, खनिज, प्रोटीन, एमिनो एसिड और फाइबर (रेशों) का समृद्ध स्रोत है। परन्तु बढ़ती ग्लोबल वार्मिंग और जनसंख्या को देखते हुए जल्द ही वैश्विक खाद्य संकट की समस्या उत्पन्न हो सकती है जिससे निपटने के लिए हमें गेहूँ के उत्पादन को स्थिर रखते हुए उत्पादन बढ़ाने की दिशा में प्रयास करने होंगे। कृषि में बढ़ती जैविक व अजैविक कारकों और खत्म होती विविधता के कारण पूर्व प्रजनकों का इस्तेमाल एकमात्र ऐसा उपाय है जो कम लागत में हमें आने वाले समय के अनुसार गेहूँ उत्पादन को बढ़ाने में मदद कर सकता है। फसल प्रजनन एक कला और विज्ञान दोनों है जिसके द्वारा पौधों को आनुवंशिक रूप से सुधार कर उनका उपयोग मानव हित के लिए किया जाता है। यह विधि दुनिया भर के पेशेवर प्रजनकों और किसानों के बीच बहुत प्रचलित है। गेहूँ के पौधों की आनुवंशिक विविधता सतत् विकास के लिए नींव है जो गेहूँ की नई किस्मों को वर्तमान और भविष्य की चुनौतियों जैसे विभिन्न जैविक और अजैविक दबावों को सहन करने की क्षमता प्रदान करती है। जैव पादप विविधता किसानों के लिए एक विकल्प प्रदान करता है जबकि पादप प्रजनकों के लिए अधिक उत्पादन करने वाली गेहूँ की नइ किस्में जो कि कीट व रोग रोधी हो को विकसित करने में सहायक है। पादप आनुवंशिक संसाधनों के लिये कृषि और वैश्विक खाद्य सुरक्षा की आधारशिला है। वे आनुवंशिक सामग्री जिनको की विविधता की श्रेणी में शामिल कर रखा है, वे गेहूँ की पारंपरिक किस्म, आधुनिक किस्म, जंगली प्रजातियाँ तथा अन्य जंगली प्रजातियाँ हैं। कृषि विविधता तथा आनुवंशिक संसाधनों से फसलों के खाद्य उत्पादन के मौजूदा स्तर तथा भविष्य की चुनौतियों दोनों का सामना करने के लिए उपयुक्त सामग्री मिलती है।

पूर्व प्रजनन (प्री ब्रीडिंग) क्या है?

पूर्व प्रजनन के अंतर्गत वे सभी गतिविधियों सन्निहित होती है जिनके द्वारा वांछनीय विशेषताओं तथा बिना अनुकूलित सामग्री से जीन को सीधे तौर पर पौधा प्रजनन में इस्तेमाल करने के योग्य बनाया जाता है और इन तत्वों के हस्तांतरण के लिए एक मध्यवर्ती सामग्री सेट तैयार करते हैं जिसको प्रजनक व किसानों के लिए नई किस्मों के उत्पादन में आगे सरलता से उपयोग कर सकते हैं। यह "उपयोग करने के लिए आनुवंशिक परिवर्तनशीलता जोड़ने" की दिशा में एक आवश्यक पहला कदम है तथा जंगली प्रजातियों और अन्य जीनोम की स्पीशीज सामग्री से उत्पन्न होने वाली विविधता का उपयोग सरलता से कर सकते हैं। यह गतिविधि जननद्रव्य और क्यूरेटर के मध्य एक परस्पर सहयोग है। पादप प्रजनकों को एक साथ काम करते हुए इसकी सीमाओं को समझने की जरूरत है तथा जननद्रव्य संग्रह की अहमियत और इन जननद्रव्य संग्रह से ये जीन कैसे नयी पादप किस्मों में स्थानान्तरित कर सकते हैं का अवलोकन भी आवश्यक है।

पूर्व प्रजनन क्यों आवश्यक है ?

ऐसा माना जाता है कि प्रजनन में विविधता की कमी के कारण निम्न प्रभाव आने की संभावना रहती है।

क. कृषि में सीमित आनुवंशिक आधार खाद्य सुरक्षा के लिए खतरा है।

ख. जैव विविधता की कमीः आनुवंशिक रूप से वर्धित आधुनिक किस्में, अत्यधिक विविध स्थानीय किस्मों तथा लेन्डरेसिस परंपरागत कृषि पारिस्थितिक तंत्र में इनकी जगह ले रही हैं।

ग. आनुवंशिक एकरूपताः कीट और रोगों के लिये आनुवंशिक असुरक्षा बढ़ती है।

घ. जलवायु परिवर्तन के प्रभावोंः बेहतर अनुकूलन के लिए नए जीन/विशेष लक्षण की खोज।

ङ. कीट और रोगज़नक़ पॉपुलेशन की उदविकासीः पादप

प्रजनक को जीन बैंक और अन्य स्रोतो में प्रतिरोध के नए स्रोतों की तलाश करनी चाहिए ।

पूर्व प्रजनन करने का निर्णय अपेक्षित कार्यक्षमता पर आधारित है और अंतिम रूप में किसानों के लिए बनाने वाली किस्मों में वांछित लक्षणों को सही स्रोत और वांछित जीन के स्रोत में डालना। पूर्व प्रजनन एक आवश्यक प्रक्रिया हो जाती है, अगर वांछित जीन केवल निम्न में से एक में उपलब्ध हैं।

1. जीन बैंक में उपलब्ध स्रोत जो अच्छी तरह से लक्षित पर्यावरण के लिए अनुकूलित नहीं है।
2. निकटतम संबंधित जंगली प्रजातियाँ जो की आसानी से संबंधित पौधों की प्रजातियों के साथ संकरण कर पा रही हैं।
3. दूरस्थ जंगली प्रजातियाँ जिसके साथ संकरण करना बहुत मुश्किल है।

पूर्व जनन की रणनीतियाँ

सभी प्रकार की पादप सामग्री जो कि खेतों के लिए गेहूँ की प्रजातियों में सुधार के लिए उपलब्ध हैं, को हम पादप आनुवंशिक संसाधनों के रूप में परिभाषित किये जा सकता है। जीन बैंक, एक खजाने के रूप में खेती में उपयोग होने वाली प्रजातियों के लिए आनुवंशिक विविधता के साथ ही उनके जंगली रिश्तेदारों और अन्य जंगली प्रजातियों का भंडार हैं। जीन बैंक की मुख्य भूमिका, फसल जननद्रव्य की लंबी अवधि की उपलब्धता सुनिश्चित करने तथा नए आनुवंशिक विविधता के साथ पूर्व प्रजनक और प्रजनन द्वारा गुणों से युक्त भविष्य की किस्मों के लिए नए कृषि उत्पादन को बनाए रखना है। पूर्व प्रजनन एक प्रकार से एक पूल है जो जननद्रव्य संग्रह के विस्तार को समझने के लिए ऐसे लोगों को साथ लाता है जो अपनी किस्मों में नए लक्षणो के साथ बनाने में मदद करता है। पूर्व प्रजनन, पादप आनवंशिक संसाधनों (पी जी आर) और प्रजनन के बीच एक कड़ी के रूप में कार्य करता है। पादप प्रजनकों और जीन बैंक प्रबंधकों को प्रभावी तरीको से जीन बैंक और जननद्रव्य का उपयोग करने तथा नई किस्मों को नई लक्षणों के साथ जिनको दुनिया की जरुरत है, के लिए यह आसान बनाने के लिए तरीके खोजने चाहिए ।

जीन पूल संकल्पना

किसी फसल का जीन पूल, वनस्पति किस्मों, लैंड रेसिस, इनब्रेड लाईन्स, प्राचीन लैंड रेसिस, अप्रचलित और आधुनिक किस्मों से संबंधित जंगली प्रजातियों उप–प्रजाति और साथी प्रजातियों से बना होता है। गेहूँ में जीन पूल को निम्न आधार पर बांटा जा सकता है।

प्राथमिक जीन पूल: एक रूप खेती और जंगली प्रजाति
द्वितीयक जीन पूल: खेतो में विभिन्न प्रजातियों की तुलना
तृतीयक जीन पूल: दूरस्थ संबंध से संबंधित
चतुर्थ जीन पूल: असंबंधित पौधों की प्रजातियों/अन्य जीव

गेहूँ फसल सुधार में पादप आनुवंशिक संसाधनों (पी जी आर) का उपयोग करने के तरीके

फसल सुधार में पादप आनुवंशिक संसाधनों का उपयोग करने का उत्कर्ष और प्राचीनतम दृष्टिकोण निम्न प्रकार हैं:
1. अनुक्रमण 2. समावेश या आनुवंशिक आधार का विस्तार 3. जंगलीय संकरण
जीनोमीक रिसर्च के साधन आखिर में हमें हमारे जंगली और खेती में उपयोगी जननद्रव्य संसाधनों जो कि हमारे समाज के लिए लाभकारी है, संभावित आनुवंशिक लाभ दिलवा सकते हैं। अणुसूचक और जीनोमिक तकनीक द्वारा पादप फसल में निम्न का उपयोग कर के सुधार करते हैं: 1. विविधता मूल्यांकन, 2. कायिक संकरण, 3. परागकोष कल्चर, 4. एम्ब्रायो रेस्क्यू, 5. मार्कर सहायता द्वारा प्रजनन (मार्कर असिस्टेड ब्रीडिंग), 6. क्वांटिटेटिव ट्रेट लोसाई (क्यू टी एल) का मानचित्रण, 7. अनुक्रमण लाइब्रेरी, संधि अभ्यास क्रम और आनुवंशिक परिवर्तन।

गेहूँ के सुधार में पूर्व प्रजनन के प्रमुख अनुप्रयोग

पूर्व प्रजनन के फसल सुधार में प्रमुख चार उपयोग इस प्रकार हैं
1. आनुवंशिक आधार का विस्तार फसल के जोखिम को कम करने के लिए।
2. अन्य स्थानीय (विदेशी) सामग्री में लक्षण की पहचान तथा उन जीनो को अपनी सामग्री में स्थानान्तरण करना जिससे अधिक आसानी से वह सामग्री प्रजनको तक पहुँच जाय।
3. जंगली प्रजातियों से जीनो को स्थानान्तरित करना जब यह सबसे प्रभावी प्रतीत होता है।

4. महत्त्वपूर्ण व नए जीनो की असबंधित प्रजातियों में पहचान करते हुए आनुवंशिक परिवर्तन तकनीकी का उपयोग कर इनका स्थानांतरण करना।

नये गेहूँ का प्राचीन जंगली रिश्तेदारों के साथ प्रजनन करने पर गेहूँ में जो भिन्नता के कुछ लक्षण जो लुप्त हो गए थे उन्हें फिर से विकसित किया गया है। ड्यूरम/पास्ता गेहूँ को जंगली गेहूँ घास के साथ ग्लास हाउस में परंपरागत तकनीक से क्रॉस करते हुए सिंथेटिक गेहूँ कार्यक्रम में शामिल किया गया है और इसके साथ ही टिशू कल्चर तकनीकी बीज के अंकुरण की गारंटी देती है। परिणामस्वरूप संकर गेहूँ के पौधों से बीज का उत्पादन होता है और तब उनका वर्तमान फसल के साथ संकरण करते हुए उनको स्थाई किया जाता है। सिंथेटिक गेहूँ और आधुनिक गेहूँ का क्रॉस आनुवंशिक विविधता के स्त्रोतों (जीन) को स्थानांतरित करने का एक शानदार तरीका है और इससे बनी किस्मों को भारत और दुनिया के कई देशो में किसानों द्वारा उगाई जा रही है। भारत में पूर्व प्रजनकों के प्रयोग से विकसित गेहूँ की किस्में जैसेः–एच डी 2888, एम पी 1203, के आर एल 213, जय राज आदि प्रमुख हैं।

चुनौतियाँ

1. लक्षण वर्णन और मूल्यांकन विवरण की कमी
2. आनुवंशिक विविधता का ज्ञान न होना
3. अन्तर प्रजातीय नातेदारी तय करना
4. प्रबल प्रजनन कार्यक्रम की कमी

जीन बैंक परिग्रहण का उपयोग प्रजनन के कार्यक्रम में कठिनाई के उच्च स्तर तक सीमित है और इसमें वांछनीय जीन को अलग करने के लिए अकसर लोग लम्बे समय तक जुड़े रहते हैं।

भविष्य की संभावनाएँ

लक्षण के आधार पर और जंगली फसल प्रजातियों सहित असंबंधित प्रजातियों के दस्तावेज और विलुप्त होने की वृद्धि के कारण कठिनाई से अनुकूलित और स्थानिक प्रजातियों के संग्रह करने की तत्काल जरूरत है। जीनोम मैपिंग से गेहूँ और जौ में अजैव तनाव सहिष्णुता जीन अनुक्रम के कूट लेखन स्थान नियत किये जा सकते हैं और फसल सुधार के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है। आनुवंशिक परिवर्तन तकनीक की क्षमता का तृतीयक जीन पूल से वांछित जीन को हस्तांतरण करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। नयी प्रजनन रणनीतियों तथा बायो इन्फार्मेटिक्स उपकरण आनुवंशिक जानकारी को इकट्ठा करने की जरुरत है तथा जटिल लक्षण को अधिक प्रभावी ढंग से निपटने के लिए जीनोम विश्लेषण तकनीकी का इस्तेमाल किया जा सकता है।

किसानों के लिए मददगार ड्रोन तकनीक

अनिता मीणा, अजय वर्मा, सत्यवीर सिंह, सेंधिल आर एवं प्रियंका चन्द्रा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

ड्रोन, मानव रहित हवाई यान के रूप में जाना जाता है। यह वाहन बिना पायलट के हवा में उड़ सकता है। इसे उड़ान रोबोट भी कहा जाता है। इसे दूर से ही नियंत्रित किया जा सकता है। ड्रोन सॉफ्टवेयर के माध्यम से सेंसर और जी पी एस के साथ संयोजक के रूप में काम करता है। ड्रोन सबसे पहले सेना में इस्तेमाल किया गया था। सेना के अतिरिक्त ड्रोन का उपयोग यातायात की निगरानी, मौसम की जानकारी व्यवसायिक फोटोग्राफी, वीडियोग्राफी, कृषि कार्य आदि सेवाओं किया जा रहा है।

भारत की 56 प्रतिशत आबादी खेती–बाड़ी पर आश्रित है। भारतीय कृषि की विशेषता छोटे–छोटे आकार वाले खेत हैं। भारत में औसत जोत का आकार 1.5 हैक्टर से भी कम क्षेत्रफल का है। ऐसे में जब कृषि जोत कम है और उनमें बहु फसल–चक्र अपनाया जा रहा है तो इस स्थिति में ड्रोन की मदद से फसल की स्थिति पर नजर रखी जा सकती है व फार्म का नियंत्रण व नाशीजीवों का पता लगाया जा सकता है। फसल पर पोषणिक एवं जल दबाव की निगरानी की जा सकती है और यहाँ तक की ऊपर से ही फसल पर उर्वरकों और कीटनाशकों का छिड़काव भी किया जा सकता है। कृषि की बेहतरी के लिए इस 21 वीं सदी की प्रौद्योगिकी का उपयोग सराहनीय कदम है और इससे किसानों को लंबे समय तक सीधी मदद मिलेगी। ड्रोन द्वारा संकलित किए गए आंकड़ों से कृषि बीमा कम्पनियों को किसानों को उनके बीमा दावों का निष्पादन करने में मदद मिल सकेगी।

'ड्रोन तकनीक' में आजकल व्यापक विस्तार देखा जा रहा है। 1980 के दशक के बाद से ड्रोन का व्यावसायिक रूप से इस्तेमाल किया जा रहा है। सरकारी स्तर पर भी ड्रोन का कृषि क्षेत्र में उपयोग सामने आये हैं। 'ड्रोन तकनीक' कम कीमत पर उपलब्ध है और यह हल्का उड़ान यन्त्र है जो की कम ऊँचाई से फसल एवं खेतों की तस्वीर ले सकता है, जिससे नुकसान का सटीक एवं तीव्र अनुमान लगाया जा सकता है। यह तकनीक रिमोट सेंसिंग और सैटेलाइट से भी बेहतर है, क्योंकि बादल होने पर और ऊँचाई के लिहाज से यह तकनीकें विफल मानी जाती है तब ड्रोन तकनीक कामयाब रहती है। आजकल ड्रोन तकनीक का इस्तेमाल कृषि के लिए तेजी से हो रहा है।

ड्रोन का कृषि में इस्तेमाल

- **मृदा एवं प्रक्षेत्र विश्लेषण**

ड्रोन फसल–चक्र के शुरू से ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। 3 डी नक्शे की सहायता से बीज बोने के प्रतिरूप (पैटर्न) में सहायता प्रदान करता है। रोपण के बाद ड्रोन मिट्टी विश्लेषण, सिंचाई और नाइट्रोजन स्तर के प्रबंधन लिए डाटा उपलब्ध कराता है जिससे आगे की जाने वाली सस्य क्रियाओं पर निर्णय लिए जा सकते हैं।

- **फसलों में छिड़काव**

कृषि में ड्रोन की मदद से दूरी मापने वाले उपकरण-अल्ट्रासोनिक गूंज, लेजर द्वारा प्रकाश का पता लगा कर अलग–अलग रूप में स्थलाकृति और भूगोल का समायोजन कृषि के लिए सक्षम हो रहा है। नतीजतन, ड्रोन जमीन को स्कैन कर जमीन से दूरी नियमन और भी कवरेज करके तरल (कीटनाशक, फफुंदीनाशक आदि) की सही मात्रा का वास्तविक समय में छिड़काव कर सकते हैं। विशेषज्ञों का अनुमान है कि हवाई छिड़काव पारंपरिक मशीनरी की तुलना में ड्रोन के साथ तेजी से पांच गुना तक पूरा किया जा सकता हैं।

- **फसलों की निगरानी व सर्वेक्षण**

विशाल क्षेत्रों में फैले फसलों की निगरानी और सर्वेक्षण बिना किसी बाधा के किया जा सकता है। ड्रोन द्वारा निगरानी करके अप्रत्याशित मौसम की स्थिति, जोखिम और खेत के रखरखाव के अन्य खर्च को कम किया जा सकता है एवं एनिमेशन द्वारा फसल की सटीक विकास और उत्पादन अक्षमताओं का पता लगाकर बेहतर फसल प्रबंधन कर सकते हैं।

- **सिंचाई प्रबंधन**

ड्रोन थर्मल सेंसर के साथ सूखा क्षेत्र या सुधार की जरूरत

वाले क्षेत्रों की पहचान कर बेहतर सिंचाई एवं भूमि सुधार प्रबंधन किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त बढ़ रही फसल का सापेक्ष घनत्व और फसल के स्वास्थ्य की गणना कर ड्रोन वानस्पतिक सूचकांक देता है जो फसल के स्वास्थ्य, ऊर्जा की मात्रा तथा फसल की गुण को बताता है।

- **स्वास्थ्य आंकलन**

फसल पर बैक्टीरियल या फंगल संक्रमण का आकलन ड्रोन करता है जो स्वस्थ्य फसल के लिए आवश्यक है। यह अवरक्त प्रकाश का उपयोग कर फसल की स्कैनिंग करता है जो कि पौधे की हरी और एन आई आर, प्रकाश के विभिन्न राशियों को दर्शाते हैं तथा पौधे में हो रहे परिवर्तन को देख जा सकता है। इस प्रकार बड़े स्तर पर फसल को बीमारी से बचाया जा सकता है। साथ ही सही समय पर किसान बीमारी का उचित समय पर इलाज कर सकता है

कृषि में ड्रोन के लाभ

- इस तकनीक से खेती—बाड़ी की निगरानी करना सरल और किफायती हो गया है।
- ड्रोन सभी फसलों पर छिड़काव करने में सक्षम हैं। विशेषतौर पर ऊँची वाली फसलों जैसे गन्ना, ज्वार, बाजरा, अरहर आदि में ड्रोन से स्प्रे करने में सहुलियत होती है।
- ड्रोन से फसलों पर छिड़काव करने में कम समय लगता है। एक एकड़ खेत में स्प्रे करने में दो मजदूर दिनभर का समय लेते हैं, वहीं काम ड्रोन केवल आधे घंटे में कर देता है। एक बार में तकरीबन पांच से सात लीटर कीटनाशक के साथ ये ड्रोन उड़ान भर सकता है।
- आमतौर पर मानसून के सीजन में मजदूर नहीं मिलते और मिलते भी हैं तो उनकी मजदूरी बहुत अधिक होता है। लिहाजा अगर आपके पास ड्रोन हो तो इस तरह की समस्या से भी आपको राहत मिलती है अर्थात् मजदूरों की कमी से निपटने में ड्रोन तकनीक काफी कारगत एवं प्रभावी है।
- सही समय पर बीमारी का पता लगाकर उसके समुचित उपचार के बारे में बताता है।
- ड्रोन समय—समय पर फसल के स्वास्थ्य की जानकारी देता है।
- फसल के नुकसान के मामले में किसान बीमा दावों के लिए अहम् इस तकनीक द्वारा पूरे क्षेत्र का सर्वेक्षण कर घाटा दस्तावेज जारी करने में यह तकनीक सक्षम है।
- ड्रोन से सुखे के सर्वेक्षण के लिए प्रयोग किये जाते हैं।
- फसल की उत्पादकता को बढ़ाने और इसकी उपज को अधिकतम करने हेतु उचित समय पर जल, उर्वरकों, कीटनाशकों जैसे आदानों की मात्रा का अनुप्रयोग हेतु यह एक प्रौद्योगिकी है।
- ड्रोन की सहायता से पूरे खेत में फसल को कहाँ नुकसान हो रहा है, ड्रोन से लिए गए चित्रों का अध्ययन करके और उस आधार पर उसका उपचार किया जा सकता है।

कृषि व्यवसाय से जुड़े ड्रोन के प्रकार

- **वाइन रेंजर ड्रोन**: यह शराब उत्पादकों के लिए महत्त्वपूर्ण है।
- **एरो हार्वेस्ट ड्रोन**: बारिस के पानी के रिसाव का पता लगाने और सिंचाई के काम के अनुकूल कार्य करता है।
- **एग्री वर्क्स ड्रोन** : यह यथार्थ परक खेती में विशेषता वाला ड्रोन हो जो बिजाई से कटाई तक को संभालता है।
- **डिजिटल हार्वेस्ट ड्रोन**:यह कृषि में छवियों का संग्रह, डेटा प्रोसेसिंग और कृषि सूचना देने में सहायक होता है।
- **लीडिंग प्रोधोगिकी** : यह ड्रोन टेक्नोलोजी खेत के डेटा, अनाज प्रबन्धन और अन्य सटीक कृषि में समाधान के लिए उपयोगी होता है ।
- **ट्रिम्बल नेविगेशन** : यह बड़े पैमाने पर जी पी एस की सहायता से पानी के प्रबंधन के लिए व फसल उपज की निगरानी करता है ।
- **विल्बर एल्लिस** : अपने सॉफ्टवेयर मंच निर्माण के लिए करने के लिए गबन और उपग्रह लाने के लिए काम कर रहा है।
- **मेजर 32** : यह कृषि के बारे कई विस्तृत स्तर पर जानकारी देता है। यह छवि सर्वेक्षण और प्रसंस्करण उद्योगों के व्यवसायिक उद्देश्यों के लिए कार्य करते हैं।

ड्रोन तकनीक का भारत में भविष्य

कृषि में वैज्ञानिक तरीके से हो रहे क्रांतिकारी बदलाव की यह झलक अमेरिका और जापान के साथ ही देश के कुछ हिस्सो में भी देखने को मिल रही है। पंजाब और मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में ड्रोन के जरिए खेतों की निगरानी का काम शुरू भी हो चुका है। यूपी सरकार भी जापान के साथ मिलकर इसके इस्तेमाल के लिए विचार कर रही है। खेतों में काम करने वाले कुशल लोगों की कमी और कृषि में बढ़ती टेक्नोलाजी की दखल ने खेती–किसानी को अब रोबोट और ड्रोन तक पहुँचा दिया है। लंदन बेस्ड आईडी टेक एक्स रिसर्च इंस्टीट्यूट ने हाल में जारी अपनी नई रिपोर्ट में बताया है कि पूरी दुनिया में कृषि क्षेत्र में उपयोग किए जाने वाले कृषि एग्रीकल्चरल रोबोट्स और ड्रोन्स का बाजार तेजी से बढ़ रहा है। मौजूदा समय में यह बाजार तीन बिलियन डालर का है जो साल 2022 तक 10 बिलियन डालर होने की संभावना है।

विश्व में ड्रोन का प्रयोग

- अमेरिका में मीडिया रिपोर्टिंग भी ड्रोन से की जाती है।
- ब्रिटेन के किसान ड्रोन से ही पशुओं पर नजर रख रहे हैं।
- जापान में लोग बीस साल से यामाहा आरमैक्स उड़ा रहे हैं। पहाड़ी इलाकों पर कई सारे खेत हैं और ड्रोन पांच मिनट में एक एकड़ का दौरा कर लेते हैं जो कि एक ट्रैक्टर के लिए बहुत मुश्किल है।
- ड्रोन का एक और बेहतरीन इस्तेमाल महाराष्ट्र में तब देखने को मिला जब सूखा राहत के लिए सूखे का सर्वेक्षण कराने की जिम्मेदारी राज्य सरकार ने ड्रोन के हवाले की। राज्य के उस्मानाबाद जिले में दो ड्रोन की मदद से राज्य सरकार ने ये काम किया और उनके जुटाए आंकड़ों के आधार पर ही किसानों को दिए जाने वाले मुआवजे का निर्धारण किया गया।

अतः ड्रोन की सफलता को देखते हुए मेक इन इंडिया और डिजिटल इंडिया के तहत कृषि मंत्रालय भी इस तकनीक का कृषि में उपयोग पर जोर दे रहे हैं।

मत्स्य पालनः कृषि के संदर्भ में

चंदन कुमार[1], सुनीता मीणा[1], राज कुमार[3] एवं अरविंद[4]
[1]सहायक प्राध्यापक, माधव विश्वविद्यालय, आबु रोड, राजस्थान
[2]वैज्ञानिक, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
[3]शोध सहयोगी, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
[4]सहायक प्राध्यापक, काशी हिंदु विश्वविद्यालय, बनारस

हरियाणा राज्य भारत देश का छठा राज्य है जहाँ मिली–जुली अर्थव्यवस्था है जिसमें उद्योगों के साथ–साथ कृषि का भी विशेष योगदान है। इस राज्य के कुल आबादी का एक बड़ा भाग गाँवों मे निवास करता हैं। यहां आजीविका का मुख्य श्रोत कृषि, बागवानी, पशुपालन एवं मत्स्यपालन है। इस राज्य के लिए मत्स्य पालन एक महत्त्वपूर्ण रोजगार दायक एवं धन अर्जन का श्रोत है। मत्स्य पालन एवं मात्स्यिकी के लिए यहां प्रचुर संसाधन उपलब्ध है। यहां की प्रमुख नदियों मे यमुना, सतलुज एवं घाघर मुख्य हैं। हरियाणा, भारत देश का दुसरा सबसे बडा मछली उत्पादक राज्य है। वर्तमान में हरियाणा लगभग 1.21 लाख टन/वर्ष (आंकड़ा वर्ष 2015–16) मछली उत्पादन कर रहा है परन्तु लगभग 1.45 लाख टन मत्स्य की आवश्यकता है। राज्य की लगभग 40–45 प्रतिशत आबादी मछली एवं उससे निर्मित पदार्थों का उपभोग करती है। इस राज्य में पर्याप्त वर्षा होती है एवं 70 प्रतिशत से अधिक तालाब, पोखर व नहरों में पानी 12 महीने जलाशयों में रहता है। राज्य का कुल 19000 हे. जल क्षेत्र मत्स्य पालन हेतु उपयोग किया जाता है जिसमें पोखर, तालाब, जलाशय एवं नहर सम्मिलित है। वर्तमान में राज्य लगभग 7000 कि.ग्रा./हे./वर्ष मत्स्य उत्पादन कर रहा है।

मत्स्य पालन एक तरह की जलीय खेती है जो मुख्यतः तालाब में की जाती है। इस जलीय खेती में तालाब खेत होता है, मछली का जीरा बीज एवं मछली फसल होती है। जिस तरह खेत में अच्छी फसल उगाने के लिए उन्नत बीज उपजाऊ मिट्टी, उचित मात्रा में जल, खाद एवं देख–रेख की जरूरत पड़ती है। इस तरह मछली पालन में कृषि एवं पशुपालन दोनों का ही समायोजन है। एक एकड़ के सदाबहार तालाब में एक वर्ष में 1000 कि.ग्रा. मछली उत्पादित कर एक मत्स्यपालक लगभग 40–50 हजार रूपये की आमदनी कर सकता है वहीं एक एकड़ के मौसमी तालाब में भी मत्स्य बीज उत्पादन कर एक किसान दो माह में ही 50–60 हजार रूपये अर्जित कर सकता है। शेष माह में उस तालाब में मत्स्य अंगुलिकाओं या मत्स्य उत्पादन कर 40–60 हजार रूपये अतिरक्त आमदनी कर सकता है। इस तरह मछली पालन एवं मत्स्य बीज उत्पादन कम समय व कम लागत में अधिक लाभ का रोजगारेन्मुख व्यवसाय है। मिश्रित मत्स्यपालन आज के समय के अनुसार कम लागत में अधिक लाभ देने वाला खोज साबित हुआ है जिसमें तालाब से उपलब्ध सभी भोज्य पदार्थ एवं सम्पूर्ण जल क्षेत्र का उपयोग कर अधिक से अधिक मत्स्य उत्पादन किया जाता है। मिश्रित मत्स्य पालन हेतु कतला, रोहू, मृगल, कॉमन कार्प 30:40:15:15 या कतला, रोहू, मृगल 30:40:30 के अनुपात में प्रति एकड़ जलक्षेत्र में संचित किया जाता है। अधिक उपज एवं धन अर्जन के लिए मछली के साथ–साथ बागवानी, पशुपालन, बतख, मुर्गी व सूकर पालन भी किया जा सकता है।

मत्स्य बीज उत्पादन

मत्स्य बीज उत्पादन की तीन अवस्थाएं है– जीरा उत्पादन, फ्राई उत्पादन एवं अंगुलिकाओं का उत्पादन। एक वर्ष में उचित नर्सरी व्यवस्था द्वारा मत्स्य बीज की 3–5 फसल प्राप्त की जा सकती है।

हैचरी प्रबन्धन

भारतीय मेजर कार्प, सामान्यतः नदी (प्राकृतिक आवास) में ही मानसून के दौरान प्रजनन करती है जिसमें वांछनीय एवं अवांछनीय दोनों ही प्रकार के बीज होते हैं जिन्हें छांटना

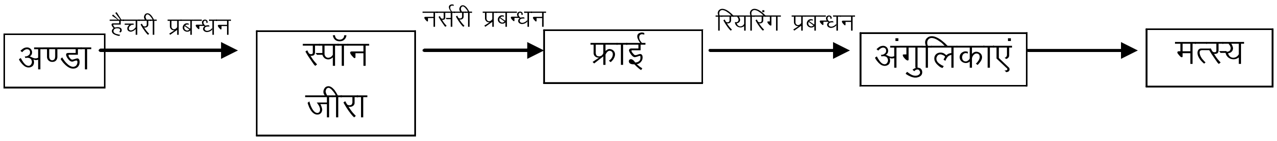

संभव नहीं है। अतः वर्तमान समय में प्रेरित प्रजनन या हाइपोफाइजेभान पद्धति अपनाई जाती है ताकि किसान वांछित मत्स्य ही प्राप्त कर सकें। इस पद्धति में मछलियों को पियुष ग्रन्थियों के सार या सिंथेटिक हारमोन जैसे ओभाप्रिय, ओबाटाईड का इंजेक्शन देकर प्रजनन के लिए प्रेरित किया जाता है। परिपक्व नर व मादा मछलियों को अलग–अलग तौलकर रख लिया जाता है। पियुष ग्रन्थि के सार से प्रेरित प्रजनन के लिए वर्षा के दिनों में मादा मछली को प्राथमिक टीका 2–3 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शारीरिक भार के दर से सुई मछली के पुँछ वृत क्षेत्र में या पृष्ठ पंख के नीचे लगाया जाता है। दूसरे टीके के वक्त ही नर मछली को एक ही टीका 2–3 मि.ग्रा./1 कि.ग्रा. शारीरिक भार के दर से दिया जाता है। सिंथेटिक हार्मोन जैसे ओशाप्रिम द्वारा प्रेरित प्रजनन हेतु मादा एवं नर मछली को क्रमशः 0.5 मि. ली./कि. ग्रा. एवं 0.3 मि.ली./कि.ग्रा. शारीरिक भार की दर से एक ही टीका दिया जाता है। कार्प मछलियाँ 24–33 डिग्री से.ग्रे. तापमान के बीच प्रजनन करती है। छोटे पैमाने पर मत्स्य स्पान का उत्पादन हप्पा तकनीकी द्वारा किया जाता है। टीका देने के बाद नर व मादा मछली को एक साथ हैचरी में डाल दिया जाता है। एक स्वस्थ मादा मछली (वजन 1 कि.ग्रा.) एक समय में 1–3 लाख अण्डे देती है। निषेचित अण्डों के स्फुटन से स्पॉन प्राप्त होता है जिसे आम भाषा में जीरा कहते हैं। सामान्यतः 16–22 घंटो के अंदर अंडों का स्फुटन हो जाता है। छोटे मत्स्य पालक कम लागत में बहुत आसानी से 20–25 लाख मत्स्य स्पॉन हप्पा तकनीक से पैदा कर सकते है।

मत्स्य पालन के लिए तालाब निर्माण एवं तैयारी

मत्स्य पालन हेतु एक उपजाऊ सदाबहार तालाब की जरूरत होती है। तालाब का निर्माण एवं देख–रेख मत्स्य उत्पादन को बढ़ाने के लिए जरूरी होता है। मत्स्य पालन हेतु तालाब निर्माण के लिए निम्नांकित कार्य उपयोगी है–

(क) तालाब निर्माण के लिए दलदली या दोज जमीन होनी चाहिए जहाँ की मिट्टी चिकनी/दोमट हो।

(ख) तालाब कम से कम आधा एकड़ (50 डिसमिल) की होनी चाहिए जो सदाबहार हो अर्थात् गर्मी के दिनों में भी 4 फीट तक पानी रहे।

(ग) तालाब का आकार आयाताकर अर्थात् तालाब की लम्बाई इसकी चौड़ाई से तीन गुणी (3:1)होनी चाहिए।

(घ) तालाब की तलहटी में पत्थर या पेड़ की जड़े इत्यादि अवांछनीय वस्तु नहीं होनी चाहिए।

(ड़) तालाब को एक तरफ से थोड़ा ढालू बनाना चाहिए ताकि जरूरत पड़ने पर आसानी से सम्पूर्ण पानी निकाला जा सके।

(च) तालाब का बांध चौड़ा एवं मजबूत रखना चाहिए ताकि बरसात के दिनों में बांध टूट न जाए तथा बांध के दोनों तरफ अच्छी मात्रा में घास होनी चाहिए।

(छ) तालाब की गहराई 5–6 फीट (सदाबहार तालाब के लिए) एवं 10–11 फीट (बरसाती तालाब के लिए) होनी चाहिए ताकि गर्मी के दिनों में भी 3–4 फीट पानी रह सके।

(ज) तालाब के पानी आने–जाने के रास्ते में पाइप लगा होना चाहिए एवं दोनों पाइपों में तार या कपड़े की महीन जाली बांधनी चाहिए ताकि पानी छनकर आये एवं मछली तालाब के अंदर बाहर न जा सके।

(झ) मछली पालन के पूर्व पुराने तालाब में जमें कीचड़ की सफाई, बांध की मरम्मत एवं पानी के आने–जाने के रास्ते की सुधार कर लेनी चाहिए एवं तालाब को उपजाऊ बनाए रखने के लिए चुना एवं गोबर खाद डालना चाहिए।

(ण) पुराने तालाब में अवांछित जलीय पौधों की सफाई मजदूरों या रसायनों द्वारा कर लेनी चाहिए।

(ट) मछली पालन के पूर्व तालाब से भक्षी या बेकार मछलियों के उन्मूलन के लिए तालाब को पूर्ण रूपेण सुखा देना चाहिए या मछली मारने के लिए महुआ की खल्ली (100 कि.ग्रा./एकड़) या ब्लीचिंग पाउडर (140 कि.ग्रा./एकड़) को तालाब के पानी में मिलाना चाहिए।

नर्सरी तालाब प्रबंधन

उन्नत मत्स्य उत्पादन के लिए उन्नत नस्ल के स्वस्थ मत्स्य बीज का समय पर तालाबों में संचयन सबसे महत्वपूर्ण है। मत्स्य हैचरी या नदी से प्राप्त स्पॉन को 15–20 दिनो तक नियंत्रित एवं अनुकूल वातावरण में पोषण कर उसे बड़े तालाबों में संचय योग्य तैयार करने की व्यवस्था ही नर्सरी प्रबंधन है। भारतीय मुख्य कार्य एवं विदेशी कार्य मछलियों का प्रजनन मानसून के आने के साथ ही शुरू हो जाता है।

(क) तालाब की सफाई एवं मरम्मतः– अप्रैल/मई माह में नर्सरी कार्य में व्यवहार होने वाले तालाब को सुखा कर

उसके तल की जुताई या खुदाई कर लेनी चाहिए। तालाब के तल से ऊपर के बॉध को चारों तरफ 3–4 फीट ऊपर तक छीलकर घास/पौधों की सफाई कर देनी चाहिए।

(ख) परभक्षी एवं जंगली मछलियों का उन्मूलन– सदाबहार तालाब में परभक्षी मछलियों के उन्मूलन हेतु 1000 कि.ग्रा. प्रति मीटर गहराई (100 कि.ग्रा./एकड़) की दर से महुआ की खल्ली या रासायनिक विष के रूप में ब्लीचिंग पाउडर 140 कि.ग्रा./एकड़/मीटर की दर से अथवा यूरिया 40 कि.ग्रा. गोबर के साथ मिलाकर एवं एक दिन बाद ब्लीचिंग पाउडर 75 कि.ग्रा./एकड़ प्रति मीटर की दर से डालना चाहिए। रासायनिक तत्वों का प्रभाव 5–7 दिनों तक रहता है एवं मछलियाँ खाने योग्य होती है। महुआ की खली ज्यादा सुरक्षित एवं उत्पादन बढ़ाने वाला होता है क्योंकि तालाब में खली सड़कर खाद बन जाता है जो मछली के स्पॅान के भोजन अर्थात् पलवक (प्लैंकटन) के उत्पादन को बढ़ा देता है।

(ग) चूना का प्रयोगः– नर्सरी तालाब में 2–2.5 फीट पानी जमा होने पर उसमें भखरा चूना 200 कि.ग्रा. /एकड़/मीटर जलक्षेत्र की दर से छिड़कना चाहिए। जिस तालाब में महुआ की खली का प्रयोग किया जाता है वहां खली का प्रयोग के 5–6 दिनों बाद ही चूना का प्रयोग करना चाहिए। नर्सरी तालाब की पानी एवं मिट्टी के अम्लीयता (पी.एच.) की जाँच के अनूरूप चुना की मात्रा घटाई या बढ़ाई जाती है।

(घ) खाद का प्रयोगः स्पॉन संचयन की तिथि से 5–6 दिनों पूर्व तालाब में 2000 कि.ग्रा. ताजा गोबर प्रति एकड़ की दर से प्रयोग करना चाहिए। तालाब में पूर्व से महुआ खली का प्रयोग होने पर तालाब में मूंगफली/सरसों की खली का 100 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से प्रयोग करना काफी अच्छा परिणाम देता है। रासायनिक खाद के रूप में युरिया 10–12 कि.ग्रा., सिंगल सुपर फॉस्फेट 10–12 कि.ग्रा. एवं म्यूरेट ऑफ पोटाश 2 कि.ग्रा./एकड़ की दर से डाला जाता है। इससे वनस्पति प्लवक का उत्पादन बढ़ जाता है। नए तालाब के लिए रासायनिक खाद का प्रयोग ज्यादा उपयोगी होता है।

(ड़) जलीय कीटों का उन्मुलनः स्पॉन संचयन से एक दिन पूर्व नर्सरी तालाब में फ्राई कैचिंग नेट जाल को 2–3 बार चलाकर जलीय कीट, मेढ़क के बच्चों, केकड़ा या कीड़ा–मकौड़ा का निकाल देना चाहिए। उसके पश्चात् तालाब में 25–30 लीटर डीजल के साथ 30 मि.ली. नुआन मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। इसके प्रयोग से पानी में डीजल की एक पतली परत बन जाती है जिससे हवा से श्वास लेने वाले जलीय कीट नष्ट हो जाते हैं। डीजल के स्थान पर किरासन तेल का भी प्रयोग किया जा सकता है।

(च) स्पॉन का संचयनः एक नर्सरी में 16–20 लाख स्पॉन/एकड़ की दर से संचयन किया जा सकता है। स्पॉन संचयन सुबह या शाम में करना चाहिए। स्पॉन का परिवहन रात में या ठंडे समय में करना उचित होता है। संचयन के पूर्व स्पॉन को अनुकूलन हेतु पैकेट सहित तालाब के पानी में 10–15 मिनट स्थिर छोड़ने के बाद पैकेट का मुँह खोलकर धीरे से स्पॉन को पानी में छोड़ना चाहिए।

(छ) पूरक आहारः अच्छी बढ़त और उत्पादन के लिए नर्सरी तालाब मे उपलब्ध प्राकृतिक भोजन के अलावा मछलियों को पूरक आहार के रूप में बारीक पीसा हुआ सरसों का खल्ली और चावल के कूड़ा का मिश्रण बारीक कपड़े से छानकर एवं सुखाकर दिया जाता है। पूरक आहार को सप्ताह में एक दिन छोड़ सुबह में या सुबह और शाम को दो किस्तों में दिया जाता है। एक लाख स्पॉन के लिए संचय की तिथि से सात दिनों तक 600 ग्राम, दूसरे सप्ताह में 1200 ग्राम एवं तीसरे सप्ताह में 1800 ग्राम पूरक आहार देना चाहिए। पूरक आहार में कुल मात्रा का 1 प्रतिशत खनिज लवण (एग्रीमीन, फीभामीन) का प्रयोग लाभदायक होता है। 20वें दिन मत्स्य बीज का आकार 1–1.5 इंच हो जाता है और ये बड़े तालाब (संचयन तालाब) में या अंगुलिकाओं को तैयार करने के तालाब में (रियरिंग तालाब) छोड़ने योग्य हो जाते हैं। यदि मत्स्य बीज निष्कासन में विलम्ब हो तो नर्सरी में उपलब्ध बीज की अनुमानित वजन का 2 प्रतिशत वजन के बराबर (2–2.5 कि.ग्रा.) पूरक आहार देते रहना चाहिए जब तक बीज का उठाव न हो जाए।

(ज) मत्स्य बीज निष्कासन एवं परिवहनः फ्राई के निष्कासन के लिए सुबह या शाम का ठंडा समय उपयुक्त होता है। मत्स्य बीज निष्कासन के एक दिन पूर्व पूरक आहार बंद कर दिया जाता है। मत्स्य बीज को तालाब में ही

एक हप्पा (4मी. X 2मी. X 1मी) में 2–4 घण्टों के लिए रखने के पश्चात् परिवहन हेतु पैकिंग किया जाता है ताकि मछलियों की मृत्यु दर कम हो। एक स्वस्थ नर्सरी से मत्स्य बीज की 3–5 फसल ली जा सकती है। एक एकड़ नंसरी जलक्षेत्र से एक मत्स्यपालक मत्स्यबीज उत्पादन कर 50–60 हजार की आमदनी कर सकता है।

रियरिंग तालाब प्रबंधन

नर्सरी तालाबों में पाली गई फ्राई मछलियाँ बड़े तालाबों में पालने के लिए काफी छोटी होती हैं। क्योंकि बड़े तालाबों में बड़ी परभक्षी मछलियाँ भी होती हैं। इन फ्राई को रियरिंग तालाबों में अंगुलिकाओं के आकार (4–6इंच) तक पाला जाता है। रियरिंग तालाब का क्षेत्रफल 0.25–3 एकड़ तक हो सकता है। रियरिंग तालाबों का प्रबंधन नर्सरी तालाब प्रबंधन जैसा ही है। प्राथमिक तौर पर जलीय वनस्पतियों का नियंत्रण, अवांछित मछलियों का उन्मूलन और खाद देना जैसे कार्य हैं। नर्सरी तालाबों के विपरीत रियरिंग तालाब में मत्स्य बीजों का पालन विभिन्न प्रजातियों को एक साथ वैज्ञानिक अनुपात में किया जाता है।

(क) तालाब की सफाई एवं मरम्मतः– बरसात के मौसम प्रारम्भ होने के पहले तालाब के बांध को मजबूत एवं पानी आने–जाने के रास्ते को ठीक कर लेना चाहिए। समय पर तालाब से जलीय खरपतवार की सफाई भी अति आवश्यक होता है।

(ख) जलीय खरपतवार एवं नियंत्रण– तालाबों में खरपतवारों का जमाव मत्स्य पालन के लिए काफी नुकसानदायक है क्योंकि खरपतवार तालाब के पोषक तत्वों का उपभाग कर जल निकाय की उत्पादन क्षमता को घटा देते हैं। इसके अलावा ये जंगली मछलियों को आश्रय देते हैं, मत्स्य बीज पालन में अवरोध उत्पन्न करते हैं एवं सूर्य की किरणों को निचली सतह तक पहुँचने में बाधा उत्पन्न करते हैं जिससे पारिस्थितिकीय संतुलन प्रभावित होता है एवं उत्पादन कम होता है। खरपतवार को रसायन द्वारा या मजदूरों की सहायता से साफ कर नियंत्रित किया जा सकता है। शैवाल के नियंत्रण के लिए 1 एकड़ जलक्षेत्र में 3–4 कि.ग्रा. सीमाजीन का उपयोग करना चाहिए।

(ग) परभक्षी एवं जंगली मछलियों का निंयत्रण– परभक्षी मछलियाँ जैसे बोआरी, टेंगरा, मांगुर, पोठीया व गरई आदि एवं जंगली मछलियाँ जैसे पोठही, धनेरी आदि आहार एवं स्थान के लिए स्पर्धा करती हैं एवं संग्रहित छोटी मछलियों को खा जाती हैं। फ्राई संग्रहण से पूर्व इन परभक्षी एवं जंगली मछलियों का नियंत्रण या उन्मूलन नर्सरी तालाब प्रबंधन में अपनाई गई विधि के अनुरूप किया जा सकता है।

(घ) तालाबों में खाद का प्रयोगः– तालाब में उर्वरक का मुख्य कार्य पोषकतत्वों में वृद्धि करना एवं प्राकृतिक मत्स्य आहार को बढ़ाना है। तालाब में पर्याप्त मात्रा में मत्स्य आहार के रूप में सूक्ष्मजीवों अर्थात् पलवक को बनाए रखना आवश्यक होता है। कार्बनिक खाद के रूप में गोबर 5000 कि.ग्रा./एकड़ वर्ष के दर से डाला जाता है क्योंकि इसमें कार्बनिक कार्बन, सूक्ष्म जीव, नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाशियम उपलब्ध होता है। फ्राई संचयन की तिथि से 7–10 दिन पूर्व तालाब में 500–1000 कि.ग्रा. ताजा गोबर प्रति एकड़ की दर से डालने पर प्लवकों का उत्पादन बढ़ जाता है। तालाब में पूर्व में महुआ खली का प्रयोग होने पर उस तालाब में कच्चा (ताजा) गोबर की आधी मात्रा ही देनी होती है। अकार्बनिक खाद के रूप में यूरिया (10–12 कि. ग्रा.), सिंगल सुपर फॉस्फेट (10–12 कि.ग्रा.) एवं म्यूरेट ऑफ पोटाश 2 कि.ग्रा./एकड़/माह की दर से डाला जाता है।

(ड़) तालाब में चुना का प्रयोगः– तालाब में चुना मिट्टी एवं जल की अम्लीयता को दूर कर एक स्वस्थ पी.एच. पद्धति को स्थापित करता है तथा कार्बनिक पदार्थों के अपघटन में तेजी लाता है। तालाबों में ग्राउण्ड लाइम स्टोन, स्केल लाइम (भखरा चुना) एवं कली चूना (क्विक लाइम) का उपयोग किया जाता है। चूने की मात्रा का निर्धारण तालाब की मिट्टी एवं जल के पी.एच. के जाँच के अनुसार किया जाता है। यदि तालाब का पी. एच. 7 से कम हो तो 200 कि.ग्रा./एकड़/मी. चूना का प्रयोग किया जाता है।

(च) फ्राई का संग्रहणः– तालाब में कार्बनिक उर्वरक देने के 7–10 दिन पश्चात् फ्राई को संग्रहित किया जाता है। मिश्रित कार्प मत्स्य पालन सर्वप्रथम रियरिंग तालाबों से ही प्रारम्भ होता है। रियरिंग तालाब में 80 हजार से 1 लाख फ्राई/एकड़/मी. की दर से संचय किया जा सकता है।

संग्रहित फ्राई 3 महीने की अवधि में वांछित अंगुलिकाओं के आकार तक बढ़ जाती है। अच्छी तरह प्रबंधन किए गए तालाब में इनकी मृत्युदर केवल 10–20 प्रतिशत होती है।

(छ) संग्रहण के पश्चात् प्रबंधन कार्य: संग्रहित मत्स्य बीजों की कुल शारीरिक भार का 2–3 प्रतिशत संपूर्ण आहार (जैसा कि नर्सरी प्रबंधन में किया जाता है) दिया जाता है। संग्रहण के 15 दिनों पश्चात् तालाब में अकार्बनिक उर्वरक जैसे यूरिया, सुपर फॉस्फेट और पोटाश 20–25 कि.ग्रा./एकड़ की दर से देना चाहिए। एक महीने के पश्चात् तालाब में दोबारा कार्बनिक खाद (गोबर खाद) 500–1000 कि.ग्रा./एकड़ की दर से दिया जाता है। तदोपरान्त प्रत्येक 15 दिनों में बारी–बारी से कार्बनिक व अकार्बनिक खाद देते रहना चाहिए।

तीन महीने की पालन अवधि के उपरान्त संग्रहित फ्राई मछलियाँ अंगुलिकाओं की अवस्था तक पहुँच जाती हैं। जिन्हें तालाबों से निकाल कर बड़े मत्स्य पालन तालाबों एवं जलाशयों में बिक्री होने तक संचित किया जाता है।

मछलियों की सामान्य बीमारियों एवं उपचार

पूरे विश्व में मत्स्य पालन के दौरान मछलियों का रोगग्रस्त होना एक बड़ी समस्या है जिससे इस मत्स्य उद्योग पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जल कृषि के गहन पालन में जहाँ संग्रहण दर अधिक होती है, वहां मछलियों में बीमारी फैलने की संभावना भी अधिक होती है। मछलियों मे बीमारियाँ जीवाणु, विषाणु, प्रोटोजोआ तथा मेटाजोआ जैसे परजीवियों के कारण होती है। मछलियों में बेचैनी, असामान्य तरीके से विचरण, कूदना, जल की ऊपरी सतह पर तैरना, हॅफनी, किसी कठोर तल पर शरीर को घिसना, समूह में ना रहना, त्वचा का अति चिकना होना, त्वचा या फिन या गिल पर कोई घाव, विकास में कमी तथा बड़े पैमाने पर मृत्यु मत्स्य रोग के सामान्य लक्षण है। मछलियों मे बीमार होने के दो प्रमुख कारकः पर्यावरण कारक एवं संक्रमण ग्रसन संबंधी कारक हैं:–

अ) पर्यावरणीय कारक– पर्यावरणीय कारक मे ऑक्सीजन की कमी या हाइपोक्सिया महत्वपूर्ण है। मछलियों को स्वस्थ रहने के लिए जल में खुली ऑक्सीजन की मात्रा 4–5 पी.पी.एम. होनी चाहिए। पोधे, जैव पदार्थों की अधिकता, बहिर्स्त्राव, अत्यधिक भोज्य पदार्थों का जमाव तथा संग्रहण धनत्व अधिक होने से ऑक्सीजन की मात्रा तालाब में कम हो जाती है। यह समस्या ग्रीष्म एवं वर्षा ऋृतु तथा सुबह के समय अधिक होती है। इसका उपचार जल में ऑक्सीजन की घुलनशीलता बढ़ाकर किया जा सकता है। जिसमें मुख्य है– जल में बॉस फिराना, जल को पंप करना, मछलियों के संग्रहण दर को घटाना, अधिक भोजन न देना, बहिर्स्राव को रोकना, जैव व रसायनिक खाद न देना, स्वच्छ जल का प्रवाह करना तथा गाद की ऊपरी सतह को हटाना आदि।

ब) संक्रमण एवं परजीवियों के कारण होने वाले रोग

(क) विषाणु रोग
लक्षण– जल निकासी के पास मछलियों का जमाव, शरीर पर कालापन, धीमी गति, संतुलन खोना, शरीर एवं गलफड़ों पर छोटे–छोटे अनेक रक्त रंजित धब्बे का होना।
प्रभावित मछलियाँ– कॉमन एवं ग्रास कार्प।
उपचार– रोगी मछलियों को तालाब से निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।

(ख) जीवाणु रोग
लक्षण– शरीर एवं गलफड़ों पर छोटे–छोटे धब्बेदार जख्म, पूँछ एवं पंखों के किनारे का सफेद होना एवं सड़ना, शरीर से खून रिसना, पिछले भाग पर लाल धब्बे, आँखों का लाल होना, बाद में आँख का सड़कर गिर जाना।
प्रभावित मछलियाँ– कार्प मछलियाँ
उपचार–मछलियों को सात दिनों तक 100 मि.ग्रा. टेरामाइसिन तथा 100 मि.ग्रा. सल्फाइडाइजीन नामक दवा को प्रति कि.ग्रा. पूरक आहार के साथ खिलाना चाहिए। प्रभावित मछलियों को पोटाशियम परमैगनेट के 20 पी.पी.एम. घोल में 20–30 मिनट तक डुबाना चाहिए।

(ग) फफूंदियों से उत्पन्न रोग
लक्षण– घाव व चोट के आस–पास या शरीर के अन्य भागों में रूई के गोले की भांति सफेदी लिए भूरे रंग का धब्बा होना। बाद में सुजन का रूप ले लेना एवं मछलियों की मृत्यु हो जाना। रोज मछलियों का ऊपरी सतह पर आकर हवा में सांस लने का प्रयास करना।
उपचार– प्रभावित मछलियों को 3–5 प्रतिशत नमक के घोल में 5–10 मिनट तक डुबोकर पुनः तालाब में छोड़ देना चाहिए एवं मछलियों को पोटाशियम परमैगनेट के 20 पी.पी.

एम. घोल में 5 मिनटों तक डुबाना चाहिए।

(घ) क्रस्टेशियन परजीवियों से उत्पन्न रोग

लक्षण– मछलियों का कमजोर, रूग्न एवं विकृत दिखाई देना, शरीर पर जख्म, छोटे–छोटे धब्बे का होना।

उपचार– 3–5ः सामान्य नमक या 100 पी.पी.एम. पोटाशियम परमैगनेट के घोल में मछली को 5 मिनट तक डुबाना चाहिए।

(ड) इपिजोटिक अल्सेरिटिव सिंड्रोम

लक्षण– जाड़े के मौसम में शरीर पर बहुत सारे लाल दाग, बाद में अल्सर का रूप धारण कर लेना। अल्सर मछली के सिर, पेट या पूँछ के हिस्सों में होना। अल्सर धीरे–धीरे गहरा होता जाता है और अन्ततः मछली मर जाती है। यह तेजी से फैलने वाली महामारी है।

उपचार–

1) 600 कि.ग्रा. चुना/है. की दर से तालाब में डालना चाहिए।
3) सिफेक्स का प्रयोगः 1 लीटर सिफेक्स को 100 लीटर पानी मे मिलाकर प्रति हैक्टर की दर से तालाब में छिड़काव करना चाहिए।
3) 50 कि.ग्रा. कली चूना/है. एवं हल्दी का चुर्ण 5 कि. ग्रा./है. के दर से तालाब में डालना चाहिए। पुनः 5–7 दिन बाद इतनी मात्रा में ही कली चूना एवं हल्दी चूर्ण मिलाकर डालना चाहिए।

राजभाषा खण्ड

ज्ञान-विज्ञान के किसी भी विषय की सक्षम अभिव्यक्ति हिन्दी में सर्वथा संभव है और अंग्रेजी पर आश्रित रहने की धारणा एकदम निरर्थक है।

डॉ. फादर कामिल बुल्के

हिन्दी कार्यक्रम पर रिपोर्ट

वर्ष 2016–17 के दौरान भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल के हिन्दी अनुभाग द्वारा अनेकों कार्यक्रम आयोजित किये गए जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

1 राजभाषा कार्यान्वयन समिति की चार तिमाही बैठकें : इस संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की चार तिमाही बैठकें (23.3.2016, 17.06.2016, 23.7.2016 तथा 27.12.2016) आयोजित की गई, जिनमें संस्थान द्वारा राजभाषा हिन्दी की प्रगति पर चर्चा की गई। संस्थान की कार्यान्वयन समिति द्वारा सुझाये गये अधिकतम मुद्दों पर प्रगति सराहनीय रही।

2 राजभाषा उत्सव एवं हिन्दी पखवाड़ा : संस्थान में राजभाषा उत्सव एवं हिन्दी पखवाड़ा (01–15 सितंबर, 2016) का आयोजन किया गया। इस दौरान विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिसमें संस्थान के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया। विजेताओं को ''हिन्दी दिवस'' के अवसर पर दिनांक 14.9.2016 को मुख्य अतिथि के रुप में आए डॉ. आर्जव शर्मा, निदेशक, रा ट्रीय पशु आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, करनाल द्वारा सम्मानित किया गया। इस अवसर पर विशेष अतिथि के रूप में श्री पवन पबाना ने वीर रस की कविता पाठ द्वारा सभी को मुग्ध किया। दिनांक 09.09.2016 को नराकास स्तर पर ''निंबध लेखन'' प्रतियोगिता को आयोजन किया गया जिसमें सभी केन्द्र सरकार के कार्यालय, राष्ट्रीयकृत बैंक, उपक्रम, निगम, विश्वविद्यालय एवं संस्थान के अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया।

श्रेणी/वर्ग	प्रतियोगिता का नाम	दिनांक	विजेता
वैज्ञानिक	आशुभाषण	प्रथम पुरस्कार	डॉ. रतन तिवारी
		द्वितीय पुरस्कार	डॉ. विष्णु कुमार
		तृतीय पुरस्कार	डॉ. डी मोहन
		प्रोत्साहन पुरस्कार	डॉ. डी पी सिंह
		प्रोत्साहन पुरस्कार	डॉ. कर्णम वेंकटेश
कुशल सहायक कर्मचारी	श्रुत लेख	प्रथम पुरस्कार	श्री अमन कुमार
		द्वितीय पुरस्कार	श्री हरिन्द्र कुमार
		तृतीय पुरस्कार	श्री रामू शाह
प्रशासनिक	हिन्दी अनुवाद	प्रथम पुरस्कार	श्री सुनील कुमार (सहायक)
		द्वितीय पुरस्कार	श्री रमेश चन्द
		तृतीय पुरस्कार	श्रीमती ज्ञान अनेजा
		प्रोत्साहन पुरस्कार	श्री सुनील कुमार
तकनीकी	कविता पाठ	प्रथम पुरस्कार	श्री रामकुमार
		द्वितीय पुरस्कार	श्री जे.के. पाण्डेय
		तृतीय पुरस्कार	श्री सुरेन्द्र सिंह
		प्रोत्साहन पुरस्कार	श्री पी सी बाबू
सभी	गीत गायन	प्रथम पुरस्कार	डॉ. रतन तिवारी
		द्वितीय पुरस्कार	डॉ. सत्यवीर सिंह
		तृतीय पुरस्कार	श्रीमती गरिमा सिंगरोहा

		प्रोत्साहन पुरस्कार	श्री सुरेन्द्र पाल, श्री राम कुमार सिंह, श्री रमेश चन्द
शोध सहायक	वाद–विवाद **विषय : क्या मनुष्य डिजिटल तकनीकों का गुलाम होता जा रहा है?**	प्रथम पुरस्कार	श्री पंकज कुमार
		द्वितीय पुरस्कार	सुश्री चारुलता
		तृतीय पुरस्कार	सुश्री भारती
		प्रोत्साहन पुरस्कार	श्रीमती सरोज, श्री सुरेन्द्र पाल
सभी	पोस्टर प्रदर्शनी **विषय : बदलते जलवायु के परिपेक्ष्य में खेती की चुनौतियाँ**	प्रथम पुरस्कार	डॉ. अंकिता झा, डॉ. राज पाल मीना, डॉ आर के शर्मा
		द्वितीय पुरस्कार	श्री सुरेन्द्र पाल
		तृतीय पुरस्कार	दीपेन्द्र कुमार, स्वाति वर्मा, स्वाति कुंडु
		प्रोत्साहन पुरस्कार	श्री जे.के. पाण्डेय, डॉ. अनुज कुमार, डॉ अनिता मीणा
नराकास स्तर पर	निबंध लेखन **विषय : मेरे सपनो का भारत**	प्रथम पुरस्कार	डॉ. रविन्द्र कुमार, भा.कृ.अनु.सं, क्षेत्रीय केन्द्र, करनाल
		द्वितीय पुरस्कार	श्रीमती पूनम सलूजा, एम.एस.एम.ई. विकास संस्थान, कंजपुरा रोड, करनाल
		तृतीय पुरस्कार	श्री वाजिद अली, जवाहर लाल नवोदय विद्यालय, सग्गा, करनाल
		प्रोत्साहन पुरस्कार	श्रीमती रुचि, भारतीय डाक विभाग, करनाल
सभी	खुला मंच **विषय : असहिष्णुता का सच**	प्रथम पुरस्कार	श्री जे.के. पाण्डेय
		द्वितीय पुरस्कार	श्री ओमप्रकाश
		तृतीय पुरस्कार	श्री पकंज कुमार
		प्रोत्साहन पुरस्कार	श्री सुरेन्द्र पाल

उत्कृष्ट कर्मचारी पुरस्कार 2016 : प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी राजभाषा हिन्दी में अधिकतम कार्य करने वाले कर्मचारियों को उत्कृष्ट कर्मचारी पुरस्कार से नवाजा गया। सभी वर्गों के लिए इस प्रतियोगिता के आयोजन का मुख्य उद्देश्य हिन्दी में काम–काज को बढावा देना है।

वर्ग	विजेता का नाम
वैज्ञानिक	डॉ. अनिल खिप्पल, डॉ. राज पाल मीना
तकनीकी	श्री जे.के. पाण्डेय
प्रशासनिक	श्री सुनील कुमार (सहायक)
कुशल सहायक कर्मचारी	श्री रामू शाह

3. गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा के सातवें अंक में प्रकाशित **"गेहूँ में उद्यमता विकास"** (अनुज कुमार, स्नेह नरवाल, बी एस त्यागी, आर के गुप्ता एवं जे के पाण्डेय) तथा **"आधुनिक युग में जैव उर्वरक व कार्बनिक खेती की आवश्यकता व उपयोगिता"** (विकास जून, आर एस छोकर, एस सी गिल, आर के सिंह, सचिन मलिक, ममता काजला, अंकुर चौधरी एवं आर के शर्मा) को उत्कृष्ट लेख पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

किसानों के लिए एक छःमाही पत्रिका गेहूँ एवं जौ संदेश का समयबद्ध प्रकाशन किया जा रहा है। साथ ही संस्थान द्वारा हिन्दी में विस्तार बुलेटिन, विस्तार कार्ड व अन्य प्रकाशन समय–समय पर किए जा रहे हैं।

कार्यशालाएं

- **''गेहूँ का अवशेष प्रबंधन''** विषय पर दिनांक 25.04.2016 को कार्यशाला का आयोजन किया गया।
- ''भूजल संरक्षण दिवस'' के अवसर पर **''बदलते पर्यावरण समय में मानव व्यवहार''** विषय पर दिनांक 10 जून, 2016 को हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। जिसमें संस्थान के कर्मचारियों के अतिरिक्त स्कूल के बच्चों ने भी भाग लिया।
- भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा दिनांक 30.09.2016 को 11:00 बजे आंगतुक कक्ष में **''हिन्दी पुस्तकों की प्रदर्शनी व हिन्दी साहित्य के प्रति जागरुकता''** विषय पर एक दिवसीय कार्यशाला आयोजन किया गया।
- **"कृषि शिक्षा"** पर एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन 3.12.2016 को संस्थान के सभागार में किया गया जिसमें स्कूल के बच्चों में कृषि शिक्षा के प्रति रूझान बढ़ाने व भविष्य में इस व्यवसाय के रूप में अपनाने के लिए प्रेरित किया गया।

नराकास बैठकों में भागीदारी व सम्मान

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल ने वर्ष 2014–15 के दौरान भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान को राजभाषा (हिन्दी) में उल्लेखनीय कार्य हेतु तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

- नराकास, करनाल की समीक्षा बैठकें 17.06.2016 तथा 29.11.2016 को राष्ट्रीय डेरी अुनसंधान संस्थान, करनाल आयोजित हुई जिसमें संस्थान का प्रतिनिधित्व डॉ. आर.के. गुप्ता, डॉ. जी. पी. सिंह, डॉ. अनुज कुमार एवं श्री जे. के. पाण्डेय ने किया।

"गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी कृषि पत्रिका पुरस्कार"

गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा को **"गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी कृषि पत्रिका पुरस्कार"** परिषद के अधिनस्थ संस्थानों द्वारा प्रकाशित गृह पत्रिकाओं में वर्ष 2015–16 के दौरान प्रकाशित पत्रिकाओं में **गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा** को तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। इस पुरस्कार के संस्थान के निदेशक डॉ. आर. के. गुप्ता एवं प्रधान वैज्ञानिक व राजभाषा अधिकारी, डॉ. अनुज कुमार ने 16 जुलाई, 2016 को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की 88 वीं स्थापना दिवस पर आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में ग्रहण किया।

उत्कृष्ट लेख प्रथम पुरस्कार

"मेरे सपनों का भारत"

डॉ. रविन्द्र कुमार
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र करनाल

हमारा देश भारत, हिन्दुस्तान, आर्यावर्त या फिर अंग्रेजी भाषा में कहूँ तो इंडिया ने विश्व पटल पर हमेशा ही एक विशिष्ट पहचान बनाये रखी है। चाहे वह प्राचीन भारत की बात हो जब भारत "विश्व गुरू" व सोने की चिड़िया" कहलाता था अथवा नवीन भारत की बात हो जिसके प्रतिभाशाली बेटे–बेटियों का लोहा पूरा संसार मानता है, हमने काफी कुछ हासिल किया है। मेरे सपनों का भारत कैसा हो यह भविष्य में किस प्रकार अपना आकार हों, हम यह निम्न बिन्दुओं में समझ सकते हैं–

1. **आर्थिक मोर्चे पर भविष्य का भारत** :– चाहे वह अधिकांश यूरोपीय देशों की आर्थिक सम्मपन्नता की बात हो अथवा जापान जैसे छोटे से देश का विश्व आर्थिक पटल पर अपनी छाप छोड़ना ये बातें सिद्ध करती है कि यदि नागरिक चाहे तो कोई भी देश आर्थिक उन्नति के नये कीर्तिमान गढ़ सकता है। हम सवा सौ करोड़ भारतीय यदि दृढ़ संकल्प करें तो भारत फिर से "सोने की चिड़िया" बन सकता है। हमें इतनी मेहनत करनी चाहिए कि भारत भविष्य की कम से कम 5 महाशक्तियों में से एक हो।

2. **धार्मिक एवं सामाजिक सद्भावः**– यदि हमें एक मजबूत भविष्य का भारत बनाना है तो धार्मिक एवं सामाजिक सौहार्द बनाकर रखना होगा। मेरे सपनों के भारत में केवल सन्देह होने पर उन्मादी भीड़ किसी अखलाख को पीट–पीट कर नहीं मार सकती है ना ही उस भारत में कैराना, आलीगढ़ में कम रह गये लोगों को मजबूतीवश अपने घर छोड़ने की बाध्यता होगी।

3. **महिला सुरक्षा–सम्मान और सपनों का भारतः**– मेरे सपनों के भारत में किसी भी गली–सड़क में जाते हुए किसी भी लड़की–महिला को डर नहीं लगना चाहिए। सपनों का भारत "दामिनी" के लिए बेबस खड़ा आंसू बहाता नहीं दिखना चाहिए, ना ही इसमें बुलन्द भाहर हाइवे गैंगरेप जैसी विभत्स घटनाएँ होनी चाहिए। मेरे सपनों के भारत में लिंग निर्धारण करने वाली मशीन न हो न ही इन्हें प्रयोग करने वाले हत्यारें।

4. **देश की आन्तरिक व बाह्य सुरक्षा मोर्चे पर भविष्यः**– कोई भी देश तब तक तरक्की नहीं कर सकता जब तक हर देशवासी उसकी प्रगति से खुश नहीं होगा। करोड़ों अरबों की सम्पत्ति को एक सिरफिरा व्यक्ति ही काफी है बम विस्फोट आदि से नष्ट करने के लिए। देश में आज आतंकवाद, नक्सलवाद एवं माओवाद आदि अनेक प्रकार के आतंक का सर्प फन उठाये हुए हैं। ये एक तरफ देश की सम्पत्ति को तो नष्ट करते ही है दूसरी जोर भारत माता अपने वीर बेटे–बेटियाँ इनके द्वारा किये गये हमलों में खो रही है। इन तत्वों से शत्रु देशों जैसे– पाकिस्तान, चीन को बल मिलता रहता है। मेरे सपनों के भारत में देश विरोधी तत्वों के लिए कोई स्थान नहीं होगा। सरकार विरोध, राजनैतिक दल का विरोध ठीक है परंतु जब कोई भारत के टुकड़े का नारा लगाता है तो यह किसी भी मूल्य पर अक्षम्य अपराध होना चाहिए।

5. **युवाओं को योग्यता आधारित रोजगार एवं समृद्ध किसानः**– हमारे देश में बेरोजगारी एक बड़ी विकराल समस्या है। यह बहुत बड़ी समस्या है। वास्तव में बेरोजगारी कई अन्य समस्याओं की जननी है। पढ़े–लिखे युवाओं को एचित रोजगार मिलना चाहिए एवं कम पढ़े लिखे युवाओं में कौशल का विकास करके उन्हें भी रोजगार के अवसर उपलब्ध होने चाहिए। किसी भी देश का इससे बड़ा दुर्भाग्य कोई और नहीं हो सकता कि उसका अन्नदाता "किसान" आत्महत्या करें। बीते दशकों में किसानों द्वारा की जा रही आत्म हत्याओं की देश में एक बाढ़ सी आ गयी है। मेरे सपनों का भारत ऐसा हो जिसमें कृषि का ऐसा बनाया जाये कि वह किसानों के बड़ी आर्थिक मजबूती दें। केवल किसानों के ऋण माफ करना काफी नहीं है। मेरे सपनों के भारत में कुछ ऐसा हो जिससे किसान भी अपनी उपजों का उचित मूल्य रख सके। किसानों में शिक्षा का अभाव है उन्हें शिक्षित बनाने के लिए प्रयास करने होंगे। पढ़े–लिखे युवाओं को कृषि क्षेत्र में लाना होगा। किसान सरकारों द्वारा बनाये गये विभिन्न अनुप्रयोग तभी प्रयोग कर पायेगें व उनसे लाभ ले पायेगें जब व शिक्षित होगें। मेरे सपनों के भारत में शिक्षित एवं समृद्ध किसान एक नितांत आवश्यक घटक होना चाहिए।

6. **मेरे सपनों का भारत एवं मानव मूल्यः**– जिंदगी की आपाधापी एवं पैसे की चमक में हम अपने मानवता एवं मानव मूल्यों को खोते जा रहें हैं। हम ऐसा देश नागरिक "अधमरे" हो गये हैं। हाल में ही हुई घटना जिसमें "दानामांझी" नामक व्यक्ति को अपनी पत्नी का भाव अपने कन्धे पर लेकर अस्पताल से अपने 60 कि.मी. दूर घर के लिए पैदल निकलने मजबूर होना पड़ता है। वह व्यक्ति पैदल अपनी पत्नी का भाव लेकर 16 कि. मी. तक चलने पर विवश हुआ तब कहीं जाकर उसे सहायता मिली। यह घटना पूरे देश को शर्मशार करने वाली थी। यह कोई अकेली घटना नहीं है। दिन–प्रतिदिन ऐसी घटनाऐं सुनने पढ़ने में आती रहती है। कुछ घटनाएं सामने आयी हैं जिनमें कोई व्यक्ति मरता रहा व लोग विडियो बनाते रहे। यह तब और भी शर्मनाक हो जाता है जब इन लोगो में नैतिकता का पाठ पढ़ाने वाले पत्रकार भी शामिल होते हैं। मेरे सपनों के भारत में ऐसी घटनाएं नहीं होनी चाहिए। बेबसी के वक्त लोग आगे बढ़कर सहायता करें। मेरे सपनों के भारत में माननीय मूल्यों की रक्षा करने वाले जिम्मेदार नागरिक हों।

7. **जातिवाद से छुटकारा पाये मेरे सपनों का भारतः**– आज हमारे देश में जातिवाद व परिवारवाद का बेहद प्रकोप है। यह देश के लिए अत्यन्त घातक है। मेरे सपनों के भारत में जहरीले कंटक नहीं होने चाहिए।

मेरे विचार में अगर हम ऊपर दिये गये बिन्दुओं पर गौर करते हैं एवं उन्हें प्राप्त कर लेते हैं तो सपनों का भारत बनने से कोई नहीं रोक सकता।

उत्कृष्ट लेख द्वितीय पुरस्कार

"मेरे सपनों का भारत"

पूनम सलूजा
एम.एस.एम.ई विकास संस्थान, कुंजपुरा रोड़, करनाल

"घर–घर में कामधेनु गैया हो, बहती निर्मल गंगा मैया हो,
जिस पावन धरा की नींव में, इमान की स्वर्णिमा इमारत हो।
ऐसा मेरे सपनों का भारत हो, मेरे सपनों का भारत हो,

प्रस्तावनाः– स्वप्न लेना एक जागृत–चेतना प्रवृति है। दीन हीन, दुर्बल व्यक्ति स्वप्न नहीं ले सकता। पराक्रमी, साहसी, संकल्पशील लोगों ने सदैव अपने सपनों से काल देवता का श्रृंगार किया है।

राष्ट्र के प्रति समझदार व्यक्ति का अलग ही दृष्टिकोण होता है। जिस व्यक्ति को राष्ट्र से प्यार होता है और जितना प्यार होता है उसी अनुपात में उसके निजी हित गौण हो जाते हैं। राष्ट्र हित सर्वोपरि हो जाता है। निजी हित गौण होते ही वह व्यक्ति राष्ट्र के भविष्य को संवारने और राष्ट्र को विकास की राह पर आगे ले जाने के लिए स्वप्न लेने लगता है। वह समाज के और राष्ट्र के बारे में चिंतन करने लगता है। समाज की व्यवस्था कैसी हो इसके बारे में चर्चा करने लगता है। राष्ट्र निर्माण एक जटिल प्रक्रिया है लेकिन असंभव कुछ भी नहीं है। जापान जैसा छोटा देश आर्थिक क्षितिज में उभरा है जिससे पता चलता है कि यदि राष्ट्र के सभी लोग एक लक्ष्य के प्रति समर्पित हो तो उस देश के सभी सपने साकार होते हैं। मैनें भी अपने भारत के लिए कुछ सपने बुने हैं। उनमें विचारों की बीजारोपण किया है। मेरी दृष्टि से मेरे सपने की झांकी प्रस्तुत है।

1. सांस्कृतिक दृष्टि से भारत
2. आर्थिक दृष्टि से भारत
3. राजनीतिक दृष्टि से भारत

1. सांस्कृतिक भारतः– मेरे सपनों में सांस्कृतिक भारत का दर्शन बहुत ही आकर्षक और मनोरम है। वैसे तो सांस्कृतिक भारत की छवि पहले से ही बहुत मनोरम है। आरंभ से ही भारत को अपनी सांस्कृतिक विरासत पर अभिमान है लेकिन मेरे सपनों का सांस्कृतिक भारत और भी भव्य है। प्रत्येक नगर, उपनगरों में सांस्कृतिक केन्द्र खुलने चाहिए जहाँ विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों का आयोजन होना चाहिए जिससे आपसी सद्भावना में आशातीत वृद्धि होगी। प्रान्तीय स्तर पर भी सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन होना चाहिए जिससे राष्ट्रीय एकता और आपसी प्रेम की भावना बढ़ेगी।

2. आर्थिक भारतः– आर्थिक रूप से भारत आज भी विषम दौर से गुजर रहा है लेकिन समस्याग्रस्त तो सभी है उन समस्याओं को सुलझाने का सबका अलग–अलग नजरिया होता है। मेरे सपनों का भारत उद्यमशील होना चाहिए। गांधी जी ने भी कहा था कि श्रम का महत्त्व समझे बिना यह आजादी बेकार है। हम उन लोगों के भाग्य को सराहते हैं जो श्रम किये बिना मुफ्त की रोटी तोड़ते हैं। हमारे यहाँ साधु संतों का सम्मान किया जाता है लेकिन किसान और मजदूर लोग जो अपना खून पसीना बहाते हैं। उनका आदर नहीं किया जाता। मेरे सपनों के भारत में किसान और मजदूरों को उचित सम्मान मिलना चाहिए। सिंचाई की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि किसान केवल वर्षा पर निर्भर न रहे। मेरे सपनों का भारत ऐसा हो जिससे प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं को भारतीय कहने में गर्व हो। प्रत्येक गांव में बिजली, पानी की उचित व्यवस्था हो सड़कों का जाल बिछा हो। स्वच्छता की ओर भी उचित ध्यान हो ताकि माननीय प्रधानमंत्री का 'स्वच्छ भारत–स्वस्थ भारत' का सपना भी पूरा हो। शहरों में औद्योगिक विकास हो। गाँव–गाँव में विद्यालय हो ताकि प्रत्येक नागरिक अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति आश्वस्त हो। "हर बच्चा शिक्षा लेता हो, हर शिक्षक शिक्षा देता हो, हर गाँव में एक विद्यालय हो, हर घरा में एक शौचालय हो, नारी निर्भय हो रहे जहाँ, ऐसा मेरे सपनों का भारत हो।" मेरे सपनों के भारत में चारों तरफ हरियाली और खुशहाली हो सभी को रोजगार मिले। इस प्रकार भारत आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हो जाएगा।

धार्मिक (दृष्टि से) भारतः– आदिकाल से ही भारत ने समस्त विश्व को धार्मिक दृष्टि दी है। आज भी लंका, चीन और कई देशों पर भी भारत के धर्म का प्रभाव विद्यमान है। लेकिन समय के क्रूर आघातों ने, पराधीनता की बेड़ियों ने भारत से धार्मिक नेतृत्व छीनने का असफल प्रयास किया है लेकिन संभव नहीं हुआ। आज भारत ने जिस प्रकार शांति, व्यापार और ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में अन्य देशों से सहयोग को बढ़ावा दिया है। उससे भारत एक बार फिर विश्व का धार्मिक नेतृत्व करेगा और जगत गुरू कहलाएगा। मेरे सपनों के भारत में सिख, हिन्दू, मुस्लमान सभी मिलजुलकर रहेंगें। सांप्रदायिक दंगे नहीं होगें।

राजनीतिक भारतः– भारत का राजनीतिक क्षितिज विरोधी रंगों से मटमैला हो गया है। छोटी से छोटी समस्या का भी समाधान नहीं होता क्योंकि लोगों में निजी हित की भावना आ गई है। आज लोगों में फिर से स्वतंत्रता की भावना जागृत करने का समय आ गया है।

"सियासत को मारो गोली, जिसने सबमें जहर घोली,
राजनीति की छोड़ो बात, सोचो सबके हित की बात"

मेरे सपनों के भारत में नेताओं को निजीहित छोड़कर राष्ट्र के कल्यण के बारे में सोचना होगा।

निष्कर्षः– मेरा यह स्वप्न कोरी कल्पनाओं पर आधारित नहीं है। आज जिस प्रकार माननीय प्रधानमंत्री और कुछ लोग देश को उन्नति के पथ पर ले जाने को अग्रसर हो रहे हैं उससे लगता है मेरा यह स्वप्न जरूर पूरा होगा। कुल मिलाकर मेरे सपनों का भारत सुखी, शिक्षित, संपन्न और आत्मनिर्भर हो। जहाँ लोग मर्यादाओं का पालन करें। एक दूसरे का शोषण न करें। प्रेममय जीवन भारतीयों का लक्ष्य हों। राष्ट्रहित की भावना न हो। प्रत्येक भारतीय को स्वयं को भारतीय कहने में गर्व महसूस हो। अंत में मैं यह कहना चाहूँगी कि जिस प्रकार मैं अपने सपने को साकार करने में प्रयत्नशील हूँ। वैसे ही मैं सभी भारतीयों से आवाहन करती हूँ।

"नवयुवक देश के जागृत हो, देश का ऊँचा नाम करायें,
विश्वमंच पर मिसाल बनके भारत को महाशक्ति बनाये, मेरा
सपना है भारत विकसित देशों की श्रेणी में आयें, और फिर
से एक बार सोने की चिड़िया कहलायें।"

उत्कृष्ट लेख तृतीय पुरस्कार

"मेरे सपनों का भारत"

वाजिद अली
जवाहर नवोदय विद्यालय, सग्गा, करनाल

गाँधी जी का कथन था कि मैं एक ऐसा राष्ट्र चाहता हूँ जहाँ कोई भी आदमी भूखा न सोए कोई भी महिला अपने आपको असुरक्षित न महसूस करे तथा प्रत्येक व्यक्ति की निम्नतम आवश्यकताएँ हर हाल में पूरी हो। कितने सुंदर विचार गाँधी जी ने दिये। आज हमें इस बात पर विचार करें कि क्या हम गाँधी जी के सपनों को पूरा कर रहे हैं ? हमारा देश सोने की चिड़िया कहलाता था, टैगोर, सुभाष, गाँधी, भगत सिंह जैसे फूल जहाँ खिलते हों उस हिन्दुस्तान की तस्वीर ही अलग होगी।
मैं अपने सपनों का भारत ऐसा देखना चाहता हूँ जहाँ उद्योगपति, किसान, मजदूर सभी खुशहाल दिखें। जहाँ गाँवों में भी शहरों जैसी सुविधाएँ मिले। किसी भी ग्रामीण को सुविधा के अभाव में शहर की ओर भागना पड़े। मैं भी हर हिन्दूस्तानी की तरह एक सम्पन्न और विकसित राष्ट्र की कल्पना करता हूँ। मेरा भारत भी उन देशों की श्रेणी में खड़ा हो जिसे किसी ओर देश पर ज्यादा निर्भर न रहना पड़े। आत्म निर्भर और कुशल तकनीक से समृद्ध हो मेरा देश। इसके लिए मुझे कुछ बिंदुओं पर विचार करना पड़ेगा, जो देश के विकास के लिए तथा राष्ट्र को सम्पन्न और खुशहाल बनाने के लिए अति आवश्यक है।

विश्व स्तरीय तकनीकः— हमारे देश की सूचना प्रौद्योगिकी इतनी मजबूत हो कि हम दूसरे राष्ट्र को पीछे धकेलकर अग्रिम पंक्ति में खड़े हो। वैज्ञानिक अपने देश में रहकर चमत्कार और अविष्कार करें, किसी दूसरे देश में जाने की आवश्यकता न पड़े। अपनी तकनीक विकसित करे तथा विश्व में अपनी नई पहचान बनायें।

शिक्षा को बढ़ावाः— देश में ऐसी शिक्षा व्यवस्था हो शिक्षा से वंचित न हो तथा शिक्षा के साथ—साथ प्रत्येक संस्थान में व्यवसायिक प्रशिक्षण का भी इंतजाम हो।

खेलों को उचित सम्मानः— खेलों को बढ़ावा देने के लिए हमें उच्च स्तर के कोचिंग केन्द्र चाहिए तथा खिलाड़ी को तराशने के लिए अच्छे कोच की व्यवस्था। हमारी सरकार मेडल जीतने वाले खिलाड़ी को सम्मान और पैसों से लाद देती है लेकिन अगर यही व्यवस्था हम खिलाड़ियों को तराशने, निखारने को करे तो हम ज्यादा मेडल ला पाएंगे तथा भारत का नाम दुनिया में रोशन होगा। इस बार ओलम्पिक खेलों का परिणाम (भारत के संदर्भ में) इसका सशक्त उदाहरण है।

आपसी सद्भाव एवं भाईचाराः— एकता वह किला है जिसमें न कोई बाहरी अंदर जा सकता है और न अंदर रहने वाला व्यक्ति दुखी रह सकता है। आजकल हमारे देश में आपसी भाईचारे को ग्रहण सा लग गया है। कोई असहिश्णुता की बात करता है तो कोई पुरस्कार लौटाता है। आज जरूरत है पोजिटिव सोच के साथ आगे बढ़ने की। फिर से अशफाक उल्लाह और भगत सिंह के भारत के निर्माण की। इसमें हमारी सरकार महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। जाति, धर्म, संप्रदाय से ऊपर उठकर स्वस्थ राजनीति करने की आवश्यकता है। तभी देश में अमन और चैन कायम हो सकता है।

आंतकवाद तथा भ्रष्ट्राचार पर नकेलः— सरकार को सोचना पड़ेगा इन दोनों बुराईयों को कैसे दूर किया जाए। केवल योजनाएं बनाने से काम नहीं चलेगा। हमें इस पर अमल भी करना पड़ेगा। योजना बनाना बुद्धिमानी का काम है लेकिन इसको असली जामा पहचाना धैर्य तथा परिश्रम का। यदि शांति से काम न चले तो "शठे शाठ्यम् समाचरेत" वाली नीति अपनाने से गुरेज नहीं करना चाहिए। क्योंकि हमें इन चीजों को जड़ से उखाड़कर फेंकना है। मेरे भारत के विकास में ये दोनों सबसे बड़ी बाधा हैं। मेरा देश विकसित राष्ट्र बनने की ओर अग्रसर होगा यदि ग्रामीण अंचल में शहरों जैसी सुविधाएँ दी जाए। हमारा किसान खुशहाल हों उसे बरसात की अनिश्चितता न सताए। सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था हो। उसको आधुनिक साधन उपलब्ध कराये जाएं। "बैलों के गले में जब घुँघरू जीवन का राग सुनाते है, गम कोसों दूर हो जाते हैं। खुशियों के कमल मुस्काते हैं।" इस गीत की सार्थकता तभी सिद्ध होगी जब हमारा किसान खुशहाल एवं समृद्ध बनाये बगैर हम एक सुंदर, विकसित राष्ट्र की कल्पना नहीं कर सकते है।

उच्च स्तरीय चिकित्सा सुविधाः— मेरे सपनों के भारत में उच्च स्तरीय चिकित्सा सुविधाएँ होनी चाहिए। गरीब व्यक्ति चिकित्सा सुविधा के अभाव में अकाल मौत न मरें। प्रत्येक गरीब व्यक्ति तक तथा हर एक गाँव में बहतरीन चिकित्सा सुविधा की व्यवस्था होनी चाहिए। जहाँ हर महामारी से लड़ने की क्षमता हो जहाँ हर गंभीर बीमारी को जड़ से उखाड़ फेंकने की काबलियत हो। ये वो देश है जिसे मदद टेरेसा ने अपनाकर अपना जीवन अमर कर दिया।

महिला सशक्तिकरणः— महिलाओं को बराबर का दर्जा देना चाहिए। आज महिलाएँ अपने आपको अपने ही घर में भी सुरक्षित महसूस नहीं करती है। हम इस तरह का वातावरण तैयार करे जहाँ महिलाओं को उचित शिक्षा, उचित सम्मान समान अधिकार तथा अपने सपनों को पूरा करने की आजादी हो। इस दिशा में मोदी जी ने 'बेटी बचाओ बेटी बढ़ाओ' की योजना भी शुरू की। इस मुहिम को काफी सफलता भी मिली है लेकिन आज भी हम महिलाओं को वो सम्मान नहीं दे पा रहे हैं जिसकी वो हकदार है। महिला सशक्त होगी तो देश सशक्त होगा।

समान व्यवहार तथा समान व्यवस्थाः— मेरे सपनों के भारत में सभी के साथ समान व्यवहार होना चाहिए तथा सभी लोगों के लिए नहीं होना चाहिए कि अमुक मंत्री को यदि जुकाम है तो आगे—पीछे दस गाड़ियाँ और अत्याधुनिक अस्पताल में इलाज। और गरीब अगर दर्द से तड़प रहा है तो उसको जल्दी से एंम्बुलेंस की सुविधा भी उपलब्ध नहीं हो पाती और यदि हो भी जाती है तो उसको अस्पताल में घंटों लाईन में खड़ा रहना पड़ता है चाहे उसकी मृत्यू ही क्यों न हो जाए। प्रत्येक विभाग में ऐसी व्यवस्था हो कि प्रत्येक आम और खास किसी भी आदमी को लाईन में न लगाना पड़े उसको बेहतर सुविधा मिले।

बेहतर प्रशासनः— किसी भी देश को उच्च मुकाम तक पहुँचाने के लिए बेहतरीन प्रशासन की आवश्यकता होती है। सभी धर्मों को साथ लेकर बेहतर प्र ासन कायम किया जा सकता है। धर्म, जाति से ऊपर उठकर सभी को समान अधिकार, मताधिकार देना चाहिए। देश में अनेक कल्याणकारी योजनाएं भी चलाया जाना अत्यावश्यक है। इसमें मोदी जी ने कुछ योजनाएँ चलायी भी है। जैसे के लिए मुद्रा योजना तथा औरों के लिए स्टार्ट अप योजना। इन योजनाओं में काफी हद तक सफलता भी मिली है। लेकिन आज हमें अपने सरकारी तंत्र को और मजबूत करने की आवश्यकता है। सभी को समान अवसर दें, राजनीतिकरण हर जगह उचित नहीं। आजकल जातिगत राजनीति अधिक हो रही है जो हमारे देश को खा रही है। हमें योग्यता के बल पर वोट देना चाहिए न कि जाति, धर्म के आधार पर और भी बहुत चीजें है जिन्हें हम दमर करके अपने भारत को विश्व स्तर पर पहुँचा सकता है। लातूर जैसी समस्याएँ, बाद, गरीबी आदि। जिससे हम ये कह सके कि मेरा भारत वो भारत है जिसके पीछे संसार चला, बढ़ता हो गया और आगे बढ़ा।

जिसमें भाव न हो

जिसमें भाव न हो, वो कविता नहीं
फूट जाए जिस वक्त ये वो सरिता नहीं।
कुछ भाव होते हैं, कुछ अहसास होता है,
रचित होता है वही, जो आस–पास होता है।
लिख डालने की एक तरकीब होती है,
लिखने वाले के बड़े करीब होती है।
सीमाओं में न बंध सके, बड़ी धारदार होती है,
छूकर देख लेना कभी, जिगर के पार होती है।
जादू इसका बड़ा असर दिखाता है,
आईना जैसे व्यक्तित्व की कसर दिखाता है।
उमड़ते ख्वाबों का काफिला होती है,
खुद के व्यक्तित्व का आईना होती है।

वाजिद अली (कलाध्यापक)
जवाहर नवोदय विद्यालय, सग्गा
करनाल (हरियाणा)

दुनिया के तख्त ओ ताज से

न रखना मतलब मेरी आवाज से,
सीख लेना कुछ परिंदों की परवाज से
दिनभर फिरते हैं यहाँ–वहाँ
न जाने कहाँ–कहाँ
शाम को मगर लौट आते हैं
न भटकना रास्ते से, सीधे कतार में चलना,
मेरे अपने, न जाने किधर जाते हैं?
साथ न छोड़ना नशेमन के निर्माण तक
चूजों के ख्वाबों के परवान तक
बजता रहा घुंघरू और तबले की तरह
तुझे क्या वास्ता, इन सब साज से
सीख लेना कुछ..........................
मौसम बदला तो जगह बदल देते हैं
मगर साथ नहीं,
तू न परिदां है, तेरे अंदर
वो बात नहीं,
मेरी मिट्‌टी मुझे सब कुछ देती है
फिर क्या मतलब मुझे, दुनिया के
तख्त ओ ताज से
सीख लेना कुछ परिंदों की परवाज से।

वाजिद अली (कलाध्यापक)
जवाहर नवोदय विद्यालय, सग्गा
करनाल (हरियाणा)

गेहूँ रोटी नहीं औषधि भी...

गेहूँ है प्रमुख खाद्यान्न फसल
जिसमें होती पौष्टिकता भरपूर
मिलता है इसमें कार्बोहाइड्रेट प्रचुर
और होती जो औधषीय गुणों में भरपूर।

गेहूँ को रामबाण, रोगनाशक भी माना जाता
बहुमुखी, शक्ति वर्धक, पुष्टिदायक अन्न भी माना जाता
गेहूँ की महत्ता वेद, पुराण, उपनिषद में मिलता है
हर थाली में रोटी में जो दिखता है।

गेहूँ के अंकुरित पौधे में
अनेक तत्व हैं पाये जाते विटामिन ए, बी1
बी2, बी3, बी5, कोलोरोफिल और नियासिन
कैल्शियम, फौलिक अम्ल, सेलेनियम और सोडियम।

आजकल है चर्चा गेहूँ घास के जूस की
क्योंकि होती इसमें पोषक तत्वों का भंडार
सौ ग्राम गेहूँ की पत्तियों में कार्बोहाइड्रेट होती 2 ग्राम
कोलोरोफिल 42.2 और मैग्नीशियम होती 24 मिलीग्राम।

विटामिन बी3 होती 0.11 मिलीग्राम
सेलेनियम होती है 1 से ज्यादा पी. पी. एम.
विटामिन ए 427 की मात्रा होती आई. यु. में
विटामिन बी5 भी होती 6 मिलीग्राम में।

गेहूँ की पत्तिओं का सेवन की भी विधियाँ दो
एक है पत्तिओं को खूब चबा कर पाओ
छूसरे विधि में स्वस्थ पत्तिओं का जूस निकालो
तजा–ताजा बिना किसी मिश्रण के मुँह में डालो।

आओ जाने गेहूँ जूस के फायदे को
जूस एंटीऑक्सीडेंट, रक्त शोधक होता है
सेलेनियम रखता है शरीर को रोग निरोधी
व करता स्वस्थ है रक्त नलिकाओं को।

मैग्नीशियम से एंजाइम उत्प्रेरित होता
मांसपेशियाँ होती चुस्त–दुरूस्त, दिल भी रहता खूब दुरूस्त
पोटाशियम दिल की धड़कन को काबू में करता
मांसपेशियाँ के कार्य को सुचारू करता।

गेहूँ जूस से शरीर की होती विकसित
आंतरिक शक्ति, उपापचय और तंदुरूस्ती
नगण्य खनिज लवण भी मिलते इससे
सोडियम, जिंक और कैल्शियम जैसे।

अब तक हमने जाना था और सबों ने माना था
गेहूँ है नंबर वन खाद्यान्न फसल
जो देती हर थाली में रोटी, पर अब तो हम मान गए
रोटी नहीं यह है औषधि भी।

पंकज कुमार सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

जी चाहता है

कभी अपनी हँसी पर भी आता है गुस्सा,
कभी सारे जग को हँसाने को जी चाहता है।
कभी रोता नहीं मन किसी की बात पर भी,
कभी यूं ही आँसू बहाने को जी चाहता है।।

कभी अच्छा लगता है आकाश में आजाद उड़ना,
कभी किसी बंधन में बंध जाने को जी चाहता है।
कभी अपने भी लगने लगते हैं बेगाने से,
कभी बेगानों को अपना बनाने को जी चाहता है।।

कभी सारी दुनिया का है साथ भाता,
कभी खुद को भुलाने का जी चाहता है।
कभी चाहता है ये दुनिया की सारी दौलत,
कभी अपना भी संग गँवाने को जी चाहता है।
कभी माँगता है एक और नया जीवन,
कभी इसको भी गँवाने को जी चाहता है।।

रामप्रीत आनंद
जवाहर नवोदय विद्यालय, सग्गा
पचपहाड़ झालावाड़
राजस्थान

गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा
का नौवां अंक (वर्ष 2017)
"किसानों की आमदनी दोगुनी करने की रणनीति"
पर आधारित होगा।

गेहूँ एवं जौ स्वर्णिमा

के सातवाँ अंक (वर्ष 2015) में
इन दो आलेखों को उत्कृष्ट पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया।

1. **गेहूँ में उद्यमता विकास**
   अनुज कुमार, स्नेह नरवाल, बी एस त्यागी, आर के गुप्ता एवं जे के पाण्डेय

2. **आधुनिक युग में जैव उर्वरक व कार्बनिक खेती की आवश्यकता व उपयोगिता**
   विकास जून, आर एस छोकर, एस सी गिल, आर के सिंह, सचिन मलिक, ममता काजला, अंकुर चौधरी एवं आर के शर्मा

कृपया अपने लेख 30 नवम्बर 2017 तक anujp2001@gmail.com/ dwrrajbhasha@gmail.com पर Kruti Dev 10/16 में तथा फोटो JPEG प्रारूप में भेजें।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

भाकृअनुप
ICAR

प्रशस्ति-पत्र

गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार

वर्ष 2014-15 के दौरान 'क' और 'ख' क्षेत्र में स्थित संस्थानों में से भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका ''स्वर्णिमा'' को तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 16 जुलाई 2016
नई दिल्ली

सचिव
(भा.कृ.अनु.प.)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान

पोस्ट बॉक्स-158, अग्रसेन मार्ग, करनाल - 132001

दूरभाष : 0184-2267490 फैक्स : 0184-2267390 वेबसाइट : www.iiwbr.in